В. КОРОЛЕНКО

СЛЕПОЙ МУЗЫКАНТ

ИЗДАТЕЛЬСТВО ЛИТЕРАТУРЫ НА ИНОСТРАННЫХ ЯЗЫКАХ
Москва

व. ग. कोरोलेन्को

अन्धा संगीतज्ञ

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह
मास्को

अनुवादक:

डा० नारायणदास खन्ना

चित्रकार: व० बासोव

छठे संस्करण के संबंध में

लेखक का प्राक्कथन *

मैं समझता हूं कि जिस कहानी के कई संस्करण निकल चुके हों उसमें संशोधन या परिवर्द्धन करना सामान्य परिपाटी के प्रतिकूल है। इसलिए मैं इसके संबंध में एक संक्षिप्त स्पष्टीकरण दे देना आवश्यक समझता हूं। मैंने अपने उपन्यास का जो कथानक चुना है वह मानव मस्तिष्क के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर आधृत है और उसके मूल में मनुष्य की वह आन्तरिक आकांक्षा है जो उसे प्रकाश का साक्षात्कार करने के लिए प्रेरित करती है। इसी आकांक्षा के फलस्वरूप नायक के विकास में आध्यात्मिकता का उदय होता है और अन्ततः उसका संकल्प पूरा होता है।

प्रस्तुत कथानक की लिखित अथवा मौखिक जो भी आलोचनाएं हुई हैं उनमें मुझे एक आपत्ति विशेष

* इस संस्करण में अनेक परिवर्द्धन किये गये हैं।

रूप से देखने को मिली है—मेरे आलोचकों का मत है कि प्रकाश से साक्षात्कार न होने के कारण जन्मान्धों में उसके दर्शन की लालसा उत्पन्न ही नहीं हो सकती; प्रकाश क्या है यह वे नहीं जानते और इसी लिए वे प्रकाश के अभाव का अनुभव नहीं कर सकते। यों तो यह आपत्ति साधार प्रतीत होती है किन्तु इससे मेरा समाधान नहीं होता। हममें से किसी को भी चिड़ियों की तरह आकाश में उड़ने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ फिर भी हम जानते हैं कि उड़ने की यह आकांक्षा हमारे स्वप्नों में कितने काल से रही है—सारे बाल काल तक, सारी युवावस्था तक। मैं स्वीकार करता हूं कि उपन्यास का कथानक कल्पना पर अधिक आधारित है वास्तविक ज्ञान पर कम। इस उपन्यास के प्रथम संस्करण के प्रकाशन के कुछ वर्षों बाद अपने एक पर्यटन के सिलसिले में कुछ बातें मैंने स्वयं देखी थीं। मैंने इस उपन्यास के छठे अध्याय दो घंटियों का उल्लेख किया है। इनमें एक जन्मान्ध था और दूसरा वह जो बचपन में ही अन्धा हो गया था। ऐसे दो घंटिये; उनकी मानसिक स्थिति का अन्तर; बच्चों के प्रति उनका व्यवहार; स्वप्नों के बारे में येगोर की बातचीत—ये सब बातें मैंने अपनी

स्मारिका में उस समय लिखी थीं जब मैंने इन सबका तम्बोव के गिरजे वाले प्रदेश के सरोव मठ की मीनार में प्रत्यक्ष निरीक्षण किया था। शायद आज भी ये दोनों घंटिये दर्शकों को चक्करदार सीढ़ियों पर ले जाते हैं। मैं समझता हूं कि मीनार का वह दृश्य उपन्यास की कथावस्तु के लिए एक अनिवार्य चीज़ था, क्योंकि जबसे मैंने उसे देखा है तभी से वह इस उपन्यास के प्रत्येक संस्करण के साथ साथ मेरे हृदय का बोझ बन कर मुझमें रम-सा गया है। मेरे सामने सिर्फ़ यही एक कठिनाई थी कि जिस रचना को मैं पूरा कर चुका हूं उसमें इस नये अंश का समावेश कैसे करूं। वर्तमान संस्करण में अन्तिम रूप से जो परिवर्द्धन किये गये हैं उनमें इस दृश्य का समावेश सर्वाधिक महत्व का है। मैंने अपनी कथा में कुछ घटनाएं जोड़ने का निश्चय किया था, अतएव मुझे मूल कथा के अन्य अंशों में भी परिवर्तन करना पड़ा।

२५ फ़र्वरी १८९८
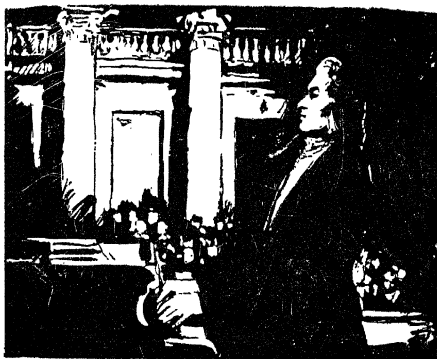
पहला अध्याय

१

दक्षिण-पश्चिमी प्रदेश के एक धनी परिवार में, रात्रि के गहन अन्धकार में, एक शिशु का जन्म हुआ। माँ युवा थी और प्रसव-पीड़ा से छटपटा रही थी। किन्तु जब शिशु का करुण, शोकाकुल क्रन्दन प्रथम बार उसके कानों में पड़ा तो वह व्यग्रता से अपने पलंग पर कुड़मुड़ायी। उसकी आंखें बन्द थीं परन्तु ओठ

हिल रहे थे और ऐसा प्रतीत होता था कि वह कुछ फुसफुसा रही है। क्या? यह समझ में नहीं आ रहा था। बच्चों जैसा कोमल उसका मुख मुर्झा गया था और उसमें वेदना की अनुभूति प्रतिबिम्बित हो रही थी। शायद यह वही अभिव्यक्ति थी जो दुःख के प्रथम साक्षात्कार के समय किसी भी दुलारे शिशु के मुख पर झलक उठती है।

परिचारिका उन धीरे धीरे हिलते हुए ओंठों पर झुकी।

"क्यों? यह क्यों..." माँ ने प्रश्न किया। उसकी आवाज़ अस्पष्ट थी।

परिचारिका न समझ सकी। बच्चे का क्रन्दन फिर सुनाई दिया, और माँ के अन्तस् की पीड़ा एक बार फिर घनीभूत हो कर अश्रुप्रवाह के रूप में बह निकली।

"क्यों? क्यों?" पहले ही की तरह फिर उसके ओंठ हिले।

अब प्रश्न परिचारिका की समझ में आ चुका था। उसने शान्ति से उत्तर दिया–

"बच्चा क्यों रोता है? हमेशा यही होता है। तुम उसकी चिन्ता न करो।"

परन्तु माँ को सन्तोष कहां? वह बच्चे के प्रत्येक चीत्कार पर चौंक जाती और सरोष अधीरता से पूछती, फिर पूछती—

"ऐसा क्यों... कितना दर्दनाक?"

परिचारिका को बच्चे के क्रन्दन में कोई भी असाधारण बात न दिखाई दी। वह जानती थी कि माँ अपनी पूरी चेतना में नहीं है। शायद वह समझ भी न पा रही थी कि माँ कह क्या रही है। पलंग से एक ओर हट कर वह शिशु की परिचर्या में जुट गयी।

माँ मौन हो गयी। कभी कभी उसकी वेदना तीव्र हो उठती और शब्दों अथवा गति के माध्यम से निकलने का मार्ग न पाकर बन्द आँखों से आँसुओं के रूप में बह निकलती। आँसू बरौनियों से छलक छलक कर उसके दूध जैसे श्वेत कोमल गालों पर लुढ़कते और विलीन हो जाते।

क्या शोकातुर कर देने वाली उस अंग-विकृति का पूर्वाभास माता के हृदय को मिल गया था जो नवजात शिशु का अभिन्न अंश बन कर अवतरित हुई थी और आमरण उसी के साथ बनी रही?

अथवा शायद यह उसका उन्माद ही था? कुछ भी हो, शिशु अन्धा पैदा हुआ था।

२

पहले किसी ने भी उसपर कोई ध्यान न दिया। शिशु अपनी दृष्टि वैसी ही अस्थिरता और जड़ता के साथ इधर-उधर फेरता जैसा कि कुछ काल तक नवजात शिशु प्रायः किया करते हैं। दिन बीते और बीते हफ़्ते। अब बच्चे की आँखें साफ़ हो चुकी थीं। दृष्टि की धूमिलता के स्थान पर पुतलियों में एकाग्रता आ चुकी थी। परन्तु जब पक्षियों के कलरव और खुली हुई खिड़कियों में से दिखाई पड़ने वाले हरे बीच-वृक्षों के मर्मर-स्वरों को बेधती हुई प्रकाश की किरणें कमरे में प्रवेश करतीं तो शिशु उनकी ओर दृष्टि करके अपना सिर इधर-उधर न घुमाता।

पहले पहल माँ ने ही इस बात पर ध्यान दिया था कि शिशु की मुखाकृति शिशुओं जैसी उसकी भाव-भंगिमा एवं नेत्र-निश्चलता में कुछ असाधारण विचित्रता है।

"वह इस तरह क्यों घूरता है? मुझे बताओ, अरे कोई तो बताओ ऐसा क्यों; ऐसा क्यों?" वह आसपास जिसे भी देखती उसी से पूछने लग जाती और

डरी हुई कबूतरी की भाँति सभी से सान्त्वना के दो शब्द सुनने के लिए तरसती रहती।

"आखिर तुम्हारा मतलब क्या है?" उसकी चिन्ता पर ध्यान न देकर उसके हितैषी उसे उत्तर देते, "बच्चा अपनी उम्र के दूसरे बच्चों जैसा तो है।"

"लेकिन यह तो देखो कि वह किस अजीब तरह से टटोल टटोल कर हाथ रख रहा है।"

"बच्चा छोटा है और जो कुछ देखता है अभी उसके अनुरूप अपने अंगों का संचालन नहीं कर सकता," डाक्टर ने कहा।

"परन्तु उसकी आँखें सदा एक सीध में ही क्यों देखती हैं? वह उन्हें घुमाता-फिराता क्यों नहीं? क्या वह... क्या वह अन्धा है?"

और अब, जब यह भयानक धारणा माँ के हृदय में घर कर चुकी थी और वह उसे वाणी द्वारा व्यक्त भी कर चुकी थी, तो शब्दों में उसे सान्त्वना देने की शक्ति ही न रह गयी थी।

डाक्टर ने बच्चे को उठाया, उसे प्रकाश की तरफ़ घुमाया और उसकी आँखों में आँखें डाल कर देखा।

घबड़ाहट के लक्षण उसके चेहरे पर स्पष्ट दिखाई पड़ने लगे और वह कुछ इधर-उधर की बातें कह कर वहां से खिसक गया, लेकिन यह वादा करता गया कि एक दो दिनों में वह फिर आकर बच्चे को देखेगा। माँ चोट खाये हुए पक्षी की भाँति तिलमिला कर रह गयी। रोते-सिसकते उसने बच्चे को हृदय से लगाया। मगर बच्चे की आँखें वैसी ही जड़, वैसी ही निश्चल, बनी रहीं!

अपने वादे के अनुसार डाक्टर फिर आया। इस समय उसके पास नेत्र-परीक्षण के यंत्र भी थे। उसने एक मोमबत्ती जलायी और बच्चे की आँख के पास ले गया, बत्ती इधर-उधर हिलायी-डुलायी और फिर एक तरफ़ रख दी। उसने बार बार परीक्षण किये, उसकी आँखें बराबर बच्चे की पुतलियों पर लगी रहीं। अन्त में व्यग्र हो कर उसने कहा—

"तुम्हारा कहना ग़लत न था। मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि बच्चा अन्धा है और चिकित्सा द्वारा उसकी आँखों में रोशनी आने की कोई आशा नहीं है..."

माँ ने फ़ैसला सुना। उसका दिल टूट गया। "मैं जानती हूं," मृदुस्वर में उसने उत्तर दिया।

३

जिस परिवार में इस अन्धे बच्चे का जन्म हुआ था वह कोई बड़ा परिवार न था। उसमें माँ थी, पिता थे और 'चचा मक्सिम' थे, जिन्हें घर के प्रायः सभी लोग, और बाहर वाले भी, इसी नाम से पुकारते थे। पिता गाँव के एक ज़मींदार थे वैसे ही जैसे दक्षिण-पश्चिमी प्रदेश के हज़ारों दूसरे ज़मींदार हुआ करते थे। उनका स्वभाव मधुर था। कहा जा सकता है कि वे दयालु प्रकृति के थे। वे अपने मज़दूरों के साथ अच्छा व्यवहार करते थे। उन्हें मिलों का बड़ा शौक़ था और अपनी आदत के अनुसार वे एक न एक मिल का या तो निर्माण कराया करते थे या पुनर्निर्माण, और यह काम बारहों महीने चलता था। इस कार्य में उनका इतना अधिक समय बरबाद होता था कि घर में तो उनकी आवाज़ तक सुनने में न आती थी। हाँ, जब कभी नाश्ते या खाने का समय होता या घर-गिरिस्ती का कोई ज़रूरी काम आ पड़ता तो वे ज़रूर घर में मिल जाते और जब घर में क़दम रखते तो यह अवश्य पूछ लेते, "आज तुम्हारी तबीयत कैसी

है, मेरी प्यारी?" और फिर खाना खाने बैठ जाते और जब तक खाना ख़त्म न हो जाता तब तक प्राय: चुप रहते। कभी कभी खाते वक़्त वे बलूत के शहतीरों या दाँतेदार पहियों के बारे में भी बातें करते। वे सीधे-सादे, शान्त प्रकृति के व्यक्ति थे। उनमें प्रत्यक्षत: ऐसी कोई ख़ास बात नज़र न आती थी जिससे उनके पुत्र के चरित्र तथा बुद्धि के विकास की दिशा में कोई उल्लेखनीय प्रभाव पड़ता। परन्तु चचा मक्सिम की बात दूसरी थी। ऊपर जिन घटनाओं का वर्णन किया गया है उनसे दस-बारह बरस पहले तक चचा मक्सिम सबसे ख़तरनाक क़िस्म के झगड़ालू आदमी समझे जाते थे, अपनी ही जागीर के पास-पड़ोस में नहीं बल्कि "किएव प्रसंविदों"* में भी। लोग यह जान कर उलझन में पड़ जाते थे कि जिस पानी पोपेल्स्काया (विवाह के पूर्व उसका नाम यात्सेन्को था) का परिवार इतना नामी है, प्रसिद्ध है, उसी का भाई इतना ख़तरनाक भी है। लोगों की समझ में ही न आता था कि चचा से

* "प्रसंविदे"—स्थानीय रूप से उस किएव मेले को कहते थे जो कभी दूर दूर तक विख्यात था।

किस ढंग से बात की जाय और कैसे उन्हें खुश किया जाय। जब कभी भले आदमी उनके साथ सज्जनता का बर्ताव करते तो वह उनके साथ बदतमीज़ी से पेश आते। फिर भी वह किसानों की उस रुखाई और उद्दण्डता तक को बर्दाश्त कर लेते थे जो यदि भले आदमियों के साथ की जाती तो हाथापाई की नौबत आ जाती। आखिर हुआ यह कि चचा को किसी बात पर आस्ट्रियनों पर इतना ग़ुस्सा आया कि वह इटली चले गये और भले आदमियों ने सन्तोष की साँस ली। वहाँ उनकी दोस्ती एक दूसरे झगड़ालू और पाखण्डी व्यक्ति, गरीबाल्डी, से हो गयी। लोग कहते थे कि गरीबाल्डी शैतान का चचा है और पादरियों की रत्ती भर परवाह नहीं करता। यद्यपि मक्सिम ने अपनी स्वेच्छाचारी एवं हठी आत्मा को हमेशा के लिए दबा दिया था फिर भी कुछ लोगों को यह लाभ ज़रूर हुआ कि "प्रसंविदे" बहुत कुछ शान्त हो गये थे और आस-पास की बहुत-सी महिलाओं को अपने बच्चों की सुरक्षा के लिए निरन्तर चिन्ता करने से मुक्ति मिल गयी।

बात साफ़ थी—आस्ट्रियनों को भी चचा मक्सिम पर क्रोध आ गया था। इन प्रदेशों के एक प्रसिद्ध पोलिश

पत्र "कूरियर" में प्रायः यह ख़बर छपा करती थी कि वह गरीबाल्डी का एक दुःसाहसी साथी बन गया है। और एक दिन इसी "कूरियर" के पाठकों ने यह समाचार पढ़ा कि मक्सिम घोड़े पर चढ़ कर लड़ाई के मैदान में गया, जहाँ आस्ट्रियनों ने, जो पहले ही उससे जले-भुने बैठे थे, उसकी बोटी बोटी काट डाली। उसके वोल्हीनियाई दोस्तों का ख्याल था कि मक्सिम के कारण ही गरीबाल्डी बरबाद होने से बच गया था।

"मक्सिम का अन्त बुरा हुआ," भले आदमियों ने सोचा और इसका कारण यह निश्चित किया कि सेंट पीटर ने इस मामले में अपने उत्तराधिकारी, अर्थात् पृथ्वी पर ईसामसीह के प्रतिनिधि, की ओर से हस्तक्षेप किया था। मक्सिम के बारे में यह बात फैल गयी कि उसे जन्नत नसीब हुई है।

मगर बाद में पता चला कि आस्ट्रियनों की तलवारों में इतनी धार ही न रह गयी थी कि वे उसकी आत्मा को उसके शरीर से अलग करते।

हां उन्होंने उसका अंग-भंग ज़रूर कर दिया था। गरीबाल्डी के बहादुर उसके योग्य साथी को युद्धस्थल

से उड़ा ले गये थे और उन्होंने उसका किसी अस्पताल में इलाज कराया था। कुछ बरसों बाद वह एकाएक अपनी बहन के घर आया और हमेशा के लिए वहीं बस गया।

अब चचा द्वन्द्वयुद्धों में किसी को भी ललकारने में असमर्थ थे। उनका दाहिना पैर था ही नहीं और इसी लिए बिना बैसाखी के एक क़दम तक चलना उनके लिए असम्भव था। उनका बायाँ हाथ इतना लुंज-पुंज हो गया था कि सिवा एक छड़ी संभाल लेने के वह उससे और कुछ भी काम न ले सकते थे। अब वह गम्भीर और शान्त थे। परन्तु उनकी पुरानी आदत कभी कभी ज़रूर लौट आती और उनकी ज़बान से कुछ खरी-खोटी निकल जाती। अब वह "प्रसंविदों" में कभी भी न जाते और संगी-साथियों में तो यदा-कदा ही उठते-बैठते। उनका अधिक समय अपने पुस्तकालय में व्यतीत होता जहाँ वह ऐसी ऐसी पुस्तकें पढ़ते जिनके बारे में जानने की तो बात ही क्या, लोगों ने सुना तक न होता। इन पुस्तकों के बारे में लोगों की सामान्य धारणा यह होती कि वे नास्तिकता से भरी हैं। वह कुछ लिखते भी थे परन्तु चूंकि उनका कोई भी लेख कभी "कूरियर"

में प्रकाशित नहीं हुआ इसलिए लोग उनके साहित्यिक कार्यों को कोई महत्व न देते।

जिस समय गांव के उस छोटे से घर में उस नये शिशु का जन्म हुआ था उस समय चचा मक्सिम की घुटी चाँद पर कुछ कुछ सफ़ेदी झलक आई थी और लगातार बैसाखी के बल चलते रहने के कारण उनके कंधे कुछ इतने चढ़ गये थे कि शरीर एक चौखटा बनकर रह गया था। जो लोग उन्हें अच्छी तरह नहीं जानते थे वे प्राय: उनसे डरते थे और जब वे उनकी विचित्र चालढाल और चढ़ी हुई त्यौरियाँ देखते, बैसाखी की तेज़ पटापट सुनते और पाइप में से निकलते हुए घने धुएं पर निगाह डालते तो सहम जाते थे। सिर्फ़ उनके निकटतम मित्र ही जानते थे कि उनके लुंज-पुंज शरीर के भीतर धुकधुक करते हुए हृदय में कितनी दया है, कितनी करुणा है और केवल वे ही समझते थे कि उनकी घुटी चाँद के नीचे के विशाल ललाट में कितनी मानसिक उथल-पुथल मची हुई है। चचा मक्सिम अपने जीवन के इस काल में किस समस्या के समाधान में उलझे हुए थे यह बात उनके अभिन्न मित्र तक न जान सके थे।

वे सिर्फ़ यही देखा करते थे कि वह लगातार घंटों एक स्थान पर बैठे बैठे धुश्रां फूंकते हैं, उनकी आँखें चारों ओर से धुएं के बादलों से ढकी हुई हैं और उनकी भौंहें खिंची हुई हैं। लेकिन वह पंगु योद्धा सोचता था कि जीवन संघर्ष का ही नाम है और जो लुंज-पुंज हैं उनके लिए दुनिया में कोई स्थान नहीं। अब वह लड़ाई झगड़े के जीवन को हमेशा के लिए छोड़ चुके थे और दुनिया के लिए बोझ बन कर रह रहे थे—बोझ और सिर्फ़ बोझ। वह वीर ज़रूर थे परन्तु भाग्य ने उन्हें आसमान से ज़मीन पर ला पटका था। मगर क्या ज़मीन पर गुम-सुम पड़े रहना और कीड़े-मकोड़ों की तरह टटोल टटोल कर ज़िन्दगी की गाड़ी धकियाना कायरता नहीं? और क्या ज़िन्दगी के बचे हुए थोड़े से दिनों के लिए अपने विजेता के आगे हाथ पसारना भी कायरता नहीं है?

जब चचा मक्सिम के मस्तिष्क में इन विचारों के पक्ष-विपक्ष का द्वन्द्व मचा हुआ था उसी समय दुनिया में एक ऐसे बच्चे ने जन्म लिया जो शुरू से ही अशक्त था, असमर्थ था, विकृत था। पहले तो उनका ध्यान बच्चे पर नहीं गया परन्तु शीघ्र ही उन्होंने

इस बात पर मनन करना आरम्भ कर दिया कि बच्चे के और उनके अपने प्रारब्ध के बीच कितनी विचित्र समानता है। चचा इन सब बातों पर एक दार्शनिक की भाँति सोच-विचार करते थे।

"हाँ," एक दिन बच्चे पर सरसरी नजर डालते हुए उन्होंने विचारशील मुद्रा में कहा था, "यह रहा दूसरा विकृत व्यक्ति – यह शिशु। अगर हम दोनों मिल जायं तो शायद एक ऐसे व्यक्ति का निर्माण हो सकता है जो बहुत कुछ समर्थ होगा – कई मानों में।"

और उस समय के बाद से उनकी निगाहें बच्चे पर ही केन्द्रित रहीं।

४

बच्चा अन्धा पैदा हुआ था। उसके दुर्भाग्य के लिए किसे दोष दिया जाय? किसी को भी नहीं। स्पष्ट था कि उसके प्रति किसी का कोई "बुरा इरादा" न था। परन्तु दुर्भाग्य की जड़ तो जीवन की किन्हीं रहस्यपूर्ण जटिलताओं में छिपी थी। माँ जब कभी अपने अंधे बच्चे पर नज़र डालती तो उसके हृदय में तीव्र वेदना

का अनुभव होने लगता। अन्य माताओं की तरह अपने पुत्र की विकृति देख कर और यह कल्पना करके उसे बड़ी पीड़ा होती कि न जाने भविष्य में बच्चे को क्या क्या देखना बदा है। इसके साथ ही साथ उसे अपने हृदय की गहराइयों में इस बात की भी अनुभूति हो रही थी कि शिशु के दुर्भाग्य का कारण उसके जीवन दाता की दोषपूर्ण क्षमता में निहित था। शायद यही एक वजह थी कि इस छोटे, सुन्दर किन्तु अंधे बच्चे की छोटी सी छोटी इच्छा की पूर्ति के लिए घर का घर तैयार रहता था।

यदि आस्ट्रियाई कृपाणों ने सौभाग्य से चचा मक्सिम को गाँव में अपनी बहन के साथ रहने के लिए बाध्य न कर दिया होता तो कौन जाने उस बच्चे की क्या दशा हुई होती जिसे दुनिया में पहला क़दम रखने के साथ ही साथ दुर्भाग्य की ठोकरें खानी पड़ी थीं। और, कौन जाने अपने वातावरण से प्रभावित होकर बच्चे में अहम् का कितना अधिक विकास हो गया होता।

घर में अन्धे बच्चे की मौजूदगी ने इस पंगु सिपाही के विचारों को उत्तरोत्तर तथा अप्रत्यक्ष रूप से

एक नयी गति, एक नयी दिशा दी। वह घंटों बैठा बैठा पाइप से धुआँ उड़ाया करता। उसकी आँखों की अथाह एवं अस्थिर पीड़ा के स्थान पर अब उसकी रुचि किसी एक चीज़ में केन्द्रित होने लगी थी। उसके मस्तिष्क में विचारों की झंझा समाप्त ही होने न आती। वह जितना ही सोचता-विचारता पाइप से उतना ही अधिक धुआँ निकालता और उसकी भौंहों पर उतने ही अधिक बल पड़ जाते। आखि़र उसने एक दिन हस्तक्षेप करने की ठान ही ली।

"यह बच्चा," धुआँ उड़ाता हुआ वह बोला, "मुझसे भी अधिक दुखी रहेगा, कहीं अधिक! अगर वह पैदा ही न हुआ होता तो अधिक अच्छा होता।"

माँ ने अपना सिर झुकाया और उसकी सिलाई पर टपटप आँसू गिरने लगे।

"मुझे इसकी याद दिलाना तुम्हारी निर्दयता है, मक्स," उसने धीरे से जवाब दिया, "इतनी बड़ी निर्दयता और ख़ास कर जब तुम जानते हो कि हम कुछ नहीं कर सकते..."

"बात सच्ची कह रहा हूँ, बहन," मक्सिम ने उत्तर दिया, "मेरे एक हाथ नहीं है, एक पैर नहीं

है, लेकिन मैं देख सकता हूँ। बच्चा देख नहीं सकता; समय आने पर उसे यह भी लगेगा जैसे उसके न हाथ हैं न पैर, और यह भी हो सकता है कि वह अपने में मनोबल का अभाव भी अनुभव करने लगे।"

"क्यों?"

"आन्ना, इसे समझने की कोशिश करो," अधिक नम्रतापूर्वक वह बोला, "अकारण मैं इतनी सख़्त बात नहीं कहूंगा। बच्चे में तत्परता का अभाव नहीं है। अभी भी वह अपनी अन्य क्षमताओं का इतना अधिक विकास कर सकता है कि कम से कम अंशतः उसके अंधेपन की कमी पूरी हो सकती है। परन्तु विकास के लिए अपेक्षित है अभ्यास, निरन्तर अभ्यास और अभ्यास के लिए अपेक्षित है आवश्यकता, केवल आवश्यकता। माँ तथा परिवार के लोग बच्चे की इतनी अधिक देखरेख में लगे हैं कि उसे प्रयत्न करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। यह प्रवृत्ति उसके विकास के मार्ग में बाधक है।"

माँ मूर्ख न थी। उसने अपनी उस भावना पर क़ाबू पाने की शक्ति का संचय किया जिसके वशीभूत होकर वह बच्चे का अल्प चीत्कार सुन कर उसकी

सहायता के लिए सर के बल दौड़ी चली जाती थी। इस बातचीत के कुछ महीने बाद बच्चे ने घर भर में आसानी और तेज़ी से रेंग रेंग कर चलना सीख लिया। वह अपने चारों तरफ़ की प्रत्येक आवाज़ पर पूरा-पूरा ध्यान देता और हाथों में पड़ जानेवाली प्रत्येक वस्तु को बड़ी उत्सुकता और दिलचस्पी के साथ टटोलता रहता।

५

शीघ्र ही वह माँ को पहचानने लगा – उसकी पदगति, उसके वस्त्रों की सरसराहट तथा अन्य अनेक चिह्नों से उसे माँ के आने जाने का पता चल जाता। उसके अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति के लिए इन चिह्नों को देख कर उसकी माँ को पहचान सकना असम्भव था। कमरे में चाहे भी जितने लोग हों और वे वहाँ चाहे भी जिस तरह से चल-फिर रहे हों, वह सीधे माँ के पास पहुंच जाता। जब कभी माँ उसे अकस्मात् गोदी में उठा लेती तो उसे तुरन्त मालूम हो जाता कि उसे उठाने वाली केवल वही है और कोई नहीं। और अगर

कोई दूसरा उसे उठाता तो वह अपनी उंगलियाँ तेज़ी से उसके चेहरे पर फेरने लगता और अपने परिवार के सदस्यों—अपनी आया, चचा मक्सिम और पिता—को तुरन्त पहचान लेता। यदि कोई अपरिचित व्यक्ति उसे गोदी में लेता तो उसकी नन्हीं-नन्हीं उंगलियों की चाल धीमी पड़ जाती। धीरे-धीरे, किन्तु बड़ी सूक्ष्मता के साथ, वह उस अपरिचित मुख पर हाथ फेरता और उसकी दृष्टि सीधी एक स्थान पर जम जाती और फिर ऐसा लगता कि उसकी उंगलियों की पोरें उसके लिए "देखने" का काम कर रही हैं।

स्वभाव से वह बड़ा फुर्तीला और खुशदिल बच्चा था। किन्तु महीने गुज़रते गये और उसकी प्रकृति में अन्धेपन की अधिकाधिक छाप पड़ती गयी। उसकी गतिविधियाँ धीरे-धीरे कम प्रेरणात्मक होती गयीं। अब वह किसी शान्त स्थान पर निकल जाता, वहाँ घंटों निश्चल बैठा-बैठा एक सीध में आँखें गड़ाये रहता और ऐसा लगता कि वह कुछ सुन रहा है, कुछ सुनने की कोशिश कर रहा है। जब कमरे में कोई शोरगुल न होता और उसका ध्यान बातचीत और चलने-फिरने की बदलती हुई आवाज़ों पर केन्द्रित न

होता उस समय वह विचारशील मुद्रा में दिखाई पड़ता और उसके सुन्दर चेहरे पर, जो उसकी आयु की तुलना में अधिक गम्भीर हो चुका था, व्याकुलता और विस्मय के भाव झलकने लगते।

चचा मक्सिम ठीक कहते थे। बच्चे की प्रेरक बुद्धि एवं प्रेरणाशक्ति उनके लिए बड़ी सहायक सिद्ध हुई। उसकी स्पर्श एवं श्रवण-ग्राह्यता इतनी प्रखर हो गयी थी कि वह बहुत कुछ दृष्टि का काम देने लगी थी। उसकी स्पर्शानुभूति आश्चर्यजनक थी। कभी कभी तो ऐसा लगता कि उसे रंगों की भी कुछ-कुछ पहचान होने लगी है, क्योंकि उसकी उत्सुक उंगलियाँ चमकीले रंगों वाली वस्तुओं पर रुक रुक कर आगे बढ़तीं और जब ऐसी कोई वस्तु उसके हाथ पड़ जाती तो उसके चेहरे पर असाधारण एकाग्रता दिखाई पड़ने लगती। समय के साथ-साथ उसकी श्रवणानुभूति में आश्चर्यजनक विकास हुआ।

वह शीघ्र ही विशेष प्रकार की ध्वनियों से अपने कमरों को, पैरों की चाप से परिवार के प्रत्येक सदस्य को और चर्राहट से अपने पंगु चचा की कुर्सी को पहचानने लग गया। इतना ही नहीं माँ की सिलाई के

समय वह डोरे की नीरस एवं एक जैसी सरसराहट और घड़ी की टिकटिक से भी पूर्णतः परिचित हो चुका था। कभी कभी फ़र्श पर सरकते समय वह कुछ ऐसी आवाज़ें सुनने के लिए रुक जाता जो दूसरों के लिए अबोध्य होतीं, और अपना हाथ उस मक्खी की ओर बढ़ा देता जो दीवाल के काग़ज़ पर रेंगा करती। जब मक्खी उड़ जाती तो उसके मुख पर कष्टदायक घबड़ाहट के लक्षण प्रकट होने लगते क्योंकि वह यह न समझ पाता कि आख़िर मक्खी चली कहाँ गयी? मगर कुछ और बड़े हो जाने पर उसे ऐसी किसी भी बात से कोई घबड़ाहट न होती। अब वह मक्खी उड़ने की दिशा में अपना सिर घुमा देता क्योंकि उसकी श्रवणानुभूति इतनी प्रखर हो गयी थी कि वह उसके परों की भनभनाहट तक पहचान लेता था।

अपने चारों ओर की चहल-पहल तथा रंगों से ओत-प्रोत दुनिया की ख़बर उसे मुख्यतः ध्वनियों द्वारा ही लगा करती। अपने चतुर्दिक वातावरण के संबंध में भी वह जो धारणाएं निश्चित करता उनका आधार होती थीं—स्वर-ध्वनियाँ, आवाज़ें। उसका चेहरा प्रायः ऐसा लगा करता मानो वह कुछ सुनने की कोशिश कर रहा हो—ठोड़ी

कुछ निकली हुई और नाजुक गर्दन कुछ उठी हुई। उसकी भौंहें बराबर चंचल रहतीं, परन्तु सुन्दर आँखें स्थिर, निश्चल। उसके चेहरे से उसकी बाल-सुलभ कठोरता और कारुण्य के लक्षण प्रकट होते रहते।

६

बच्चे का तीसरा जाड़ा समाप्त होने आ रहा था। बर्फ़ पिघलने और बसन्त-कालीन नालों में कहकल-छलछल सुनाई पड़ने लगी थी। बच्चा जाड़े भर बीमार-सा रहा और घर की चहारदीवारी के भीतर बन्द रहा। उसे बाहर की हवा ही न लग सकी। परन्तु अब उसका स्वास्थ्य सुधरने लगा था।

घरों में सर्दी से बचाव के लिए जो खिड़कियाँ अभी तक बन्द पड़ी थीं अब वे खोल दी गयी थीं और बसन्त के हर्षोल्लास ने दूनी प्रफुल्लता के साथ घरों में प्रवेश करना आरम्भ कर दिया था। घरों में सुनहरी धूप आने लगी थी। बीच-वृक्षों में, जो अभी तक पत्तियों से हीन थे, अब हमेशा की भाँति कम्पन पैदा होने लगा था। और, दूर, काफ़ी दूर, मैदानों में

पिघलती हुई बर्फ़ के ढेर इधर-उधर दिखाई पड़ने लगे थे। बहुत जगहों पर तो घास भी उग आयी थी। हवा में हल्कापन था और साँस लेने में आसानी होती थी। ऐसा लगता था कि सारा परिवार नवजीवन का आनन्द ले रहा है और बसन्त की बहार का उपभोग कर रहा है।

अंधे बच्चे के लिए बसन्त का आगमन कमरे में भर जानेवाली द्रुत ध्वनियों के रूप में हुआ। उसने शिलाओं और पत्थरों पर से उतरते तथा मुलायम गीली मिट्टी से होकर अपना मार्ग प्रशस्त करते हुए बसन्त-कालीन उन अनेक सोतों की कलकल सुनी जो एक दूसरे से होड़ लगाये आगे बढ़ रहे थे। उसने उन बीच-वृक्षों की भी आवाजें सुनीं जो खिड़कियों से सटे हुए आपस में कानाफूसी कर रहे थे। उनकी शाखाएँ परस्पर रगड़ खातीं और कभी कभी खिड़की के शीशों से छूकर विशेष ध्वनि पैदा करतीं। उसने प्रातःकालीन पाले के कारण जमी और छत की मेड़ों से लटकती हुई उस बर्फ़ की क़लमों से, जो धूप पाकर इस समय पिघल रही थी, तेज़ी से झरती हुई असंख्यों बूंदों की पटर पटर सुनी। ये सारी ध्वनियाँ कमरे में आतीं और उसे

साफ़-साफ़ सुनाई पड़तीं। कभी कभी निकट से आने वाली आवाज़ों में उसे आसमान में उड़ते हुए क्रेन पक्षियों का चहचहाना भी सुनाई जाता। फिर धीरे-धीरे यह आवाज़ उसे हवा में विलीन होती हुई प्रतीत होती।

प्रकृति के इस बसन्त-कालीन वैभव ने बच्चे के चेहरे पर व्याकुलता एवं परेशानी की मुद्राएँ अंकित कर दी थीं। भौंहें तान कर वह प्रकृति की ध्वनियों को सुनता और फिर अनेक प्रकार की ध्वनियों के परस्पर मिल जाने के कारण उत्पन्न अव्यवस्थित ध्वनिसमूह से भयभीत होकर सहसा अपने हाथ माँ की ओर फैला कर उन्हें उसके सीने से चिपका देता।

"बच्चा क्यों दुःखी है?" माँ को आश्चर्य होता और वह अपने इर्द-गिर्द प्रत्येक व्यक्ति से इसका कारण पूछने लगती। चचा मक्सिम देर तक और बड़ी गम्भीरता से बच्चे के चेहरे को देख कर उस विचित्र भय का कारण मालूम करने की कोशिश करते, परन्तु उन्हें कोई सफलता न मिलती।

"वह ... वह नहीं समझ सकता," बच्चे की व्यथित और आकुल कर देने वाली मुद्रा देखते हुए माँ संकोच के साथ कह उठती।

सचमुच बच्चा बेचैन था और भयभीत भी। वह नयी नयी ध्वनियाँ सुनता और हक्का-बक्का आँखें ऊपर उठा देता। उसे यह सोच कर आश्चर्य होता कि जिन पुरानी ध्वनियों को सुनने का वह इतना अभ्यस्त हो चुका था वे अब क्यों नहीं सुनाई पड़तीं! आख़िर वे चली कहाँ गयी हैं।

७

बसन्त के प्रारम्भ की अव्यवस्था शान्त हो चुकी थी। दिन बीतने के साथ ही साथ धूप में वृद्धि हुई और प्रकृति के क्रियाकलापों में एकरसता एवं एकरूपता आयी। मानव जीवन में क्रियाशीलता के दर्शन और उसकी गति में विकास हुआ। चरागाहों में हरीतिमा मुस्करा उठी और बर्च की कलियों की सुगंधि ने सारे वातावरण को सुरभित कर दिया।

बच्चे को खेतों से हो कर निकटस्थ सरिता के तट पर ले जाने का निश्चय किया गया।

माँ ने बच्चे का हाथ पकड़ा। चचा मक्सिम बैसाखी के बल उसके साथ-साथ चले, और तीनों खेतों से होते

हुए नदी तट के समीप स्थित एक टीले की ओर बढ़े। यहाँ अच्छी-ख़ासी घास उगी थी और धूप और हवा के कारण ज़मीन पूरी-पूरी सूख चुकी थी। टीले की चोटी से आस-पास के ग्रामक्षेत्रों के मनोरम दृश्य दिखाई पड़ते थे।

माँ और चचा मक्सिम के लिए सूर्य में इतना तेज़ था कि जब वे चलते तो उन्हें अपनी आँखें ढकने की आवश्यकता पड़ जाती। सूर्य की किरणों के कारण उनका मुंह गर्म हो उठता परन्तु बसन्त की भीनी बयार अदृष्ट रूप से उनका चुम्बन करके उन्हें शीतलता प्रदान करती। वायु में मादकता थी। फलतः राहगीरों की आँखें झपकने झपकने को होने लगतीं।

माँ को लगा कि जिस नन्हे हाथ को वह पकड़े थी उसमें गति हुई। उसे अपने हाथ पर दबाव पड़ने का भी अनुभव हुआ। परन्तु बसन्त के माधुर्य ने उसे बच्चे की इस बेचैनी के प्रति अधिक जागरूक न रहने दिया। सिर ऊँचा करती और बसन्ती बयार का आनन्द लेती हुई वह बढ़ती गयी। यदि उसने एक क्षण के लिए भी नीचे देखा होता तो उसे बच्चे की विचित्र मुद्रा का आभास मिल गया होता। उसकी खुली हुई आँखें सीधे सूर्य की ओर लग गयीं, उसके ओंठ एक दूसरे से अलग हुए और चेहरे

पर मूक विस्मय के लक्षण प्रकट हो गये। वह जल्दी-जल्दी किन्तु कुछ रुक-रुक कर साँस लेने लगा और उसकी दशा पानी के बाहर तड़पने वाली मछली जैसी हो गयी। कभी कभी उसके छोटे से चेहरे पर, उसकी निरीह व्याकुलता के बीच, व्यथित उल्लास की रेखाएँ झलक जातीं, और एक क्षण के लिए उसका मुखमंडल उद्दीप्त हो उठता। किन्तु दूसरे ही क्षण उसपर मूक विस्मय, भय तथा व्यग्रता के लक्षण प्रकट होने लगते। केवल उसकी आँखें जड़, अस्थिर और अभावुक बनी रहतीं।

वे टीले पर चढ़े और फिर उसकी चोटी पर। यहां घास ही घास उगी हुई थी। माँ ने बच्चे को आराम से बिठा देने के लिए उठाया और उसने माँ का हाथ इतनी मज़बूती से पकड़ लिया जैसे उसे यह डर लग रहा हो कि वह अभी-अभी गिर पड़ेगा, जैसे उसे अपने नीचे की सख्त भूमि की अभी तक अनुभूति ही न हुई हो। लेकिन इस बार भी अपने चारों ओर बसन्त की सुषमा का पान करते रहने के कारण माँ ने बच्चे की इस बेचैनी पर कोई ध्यान न दिया।

दोपहर हो चुकी थी और सूर्य नीले आसमान में थम गया था। नीचे नदी अपना बासन्ती जल लिए

कलकल छलछल कर रही थी। उसमें जमी हुई बर्फ़ यत्र-तत्र सफ़ेद धब्बों के रूप में दिखाई पड़ रही थी। चरागाहों में भी पानी ही पानी नज़र आ रहा था। पानी के ऊपर बादलों के छोटे-छोटे टुकड़ों का प्रतिबिम्ब नदी की गहराइयों में पड़ कर उसके तल को नीलाभ बना रहा था। ये टुकड़े हवा के सहारे बहकर पिघलती हुई बर्फ़ की भाँति विलीन हो रहे थे। कभी कभी हवा का कोई झोंका पानी में तरंगें पैदा करता और जल सूर्य के प्रकाश में झिलमिलाने लगता। नदी के उस पार खेतों का रंग काला और धुंधला दिखाई दे रहा था और जब अस्थिर कुहासे को बेधती हुई नज़र दूरस्थ छप्परों पर पड़ती तो वे छोटे-छोटे टीले से दिखाई पड़ते और फिर और दूर, क्षितिज के पास, जंगलों की एक नीली रूपरेखा मात्र रह जाती। ऐसा प्रतीत होता कि साँसों और उसासों द्वारा पृथ्वी गगन मंडल को सुरभित धूप का दान कर रही है।

समस्त प्रकृति उपासना के लिए सजाये गये एक बड़े मन्दिर की भाँति लग रही थी। किन्तु अंधे बच्चे के लिए अन्धकार था, सर्वत्र अन्धकार ही अन्धकार, वह अन्धकार जिसने उसकी आत्मा में एक अनूठा संघर्ष पैदा कर दिया था, जिसमें गति थी, धड़कन थी, ध्वनि थी,

जिसने उसके पास पहुँच कर उसके समक्ष नयी-नयी इतनी असंख्य अनुभूतियों का कोश बिखेर दिया था कि उसका हृदय तेज़ी से धकधक करने लगा और उसकी व्यग्रता बढ़ गयी, क्योंकि वह इनमें से अनेक अनुभूतियों से अभी तक अनभिज्ञ था।

पहली बार जब वह घर से बाहर निकला और दिन की गर्मी ने उसके चेहरे पर अपना प्रभाव डाला तथा उसकी कोमल त्वचा ने उष्णता का अनुभव किया उस समय अन्तःप्रेरणावश उसने अपनी अन्धी आँखें सूर्य की ओर घुमा दीं, मानो यह समझ रहा हो कि सूर्य ही वह केन्द्र है जिसकी ओर अखिल ब्रह्मांड आकृष्ट हो रहा है। हाँ, चारों ओर की स्पष्ट दूरियों का उसे कोई अनुभव न था–निस्सीम नीलाकाश और क्षितिज की परिधि ये सब उसकी अनुभूति के बाहर की चीज़ें थीं। वह केवल एक ही बात जानता था–किसी भौतिक इन्द्रिय-गम्य, मृदु और प्रिय वस्तु ने उसके मुख का स्पर्श किया है और उसे उष्णता प्रदान की है। और, फिर कोई शीतल और हल्की–किन्तु आतप की उष्णता से कुछ भारी–वस्तु उस उष्णता को बहा ले जाती तथा मुखमंडल पर ताज़गी पैदा करनेवाली शीतलता बिखेर देती। घर में तो बच्चे ने कमरों के अन्दर

निर्बाध और स्वतंत्रतापूर्वक विचरना सीख ही लिया था। परन्तु वहाँ स्थान की कमी थी। किन्तु यहाँ! यहाँ उसे कुछ ऐसी अनुभूति हुई जो उसके लिए अबोध थी और जल-तरंगों की भाँति उसपर छाती जा रही थी—कभी वह उसे दुलराती, कभी उत्साहित करती और कभी मस्त बना देती। शीघ्र ही धूप के उष्ण स्पर्श के स्थान पर शीतल वायु उसके गालों, उसकी कनपटी और उसके समस्त शरीर का स्पर्श करती और उसके सिर, ठुड्डी और गर्दन का चक्कर लगाती हुई उसके कानों में गूंजने लगती, और उसे ऐसा लगता कि वह किसी ऐसे शून्य स्थान में पहुँच गया है जिसे उसकी आँखें नहीं देख पा रही हैं। वायु उसकी चेतना पर आघात करती और वह विस्मृति तथा दुर्बलता का शिकार हो जाता। और बच्चे का हाथ माँ के हाथ को दबाये रहता। उसका हृदय धड़कता, और कभी कभी रुक-सा जाता।

जब बच्चे को घास पर बिठाया जाता तो उसे कुछ आराम मिलता। उसे नवीन वातावरण की अनुभूति हो ही चुकी थी; किन्तु अब इसके माध्यम से उसने अपने चारों ओर की ध्वनियों को एक दूसरे से पृथक्-पृथक् करके पहचानना भी आरम्भ किया। उसे प्रतीत होता कि उसके शरीर में

तरंगें प्रवेश कर रही हैं। इन तरंगों के उठने के साथ-साथ उसकी धमनियों में प्रवाहित होने वाले रक्त में भी लयानुरूप आरोह-अवरोह होने लगता। अब इन तरंगों के साथ साथ ध्वनियों का भी प्रवेश होता – लावा का चहचहाना, नयी पत्तियों से लदे हुए बर्च की कोमल मर्मर, नदी में एक हल्की-सी छपाक। निकट ही कहीं उड़ते हुए अबाबीलों के परों की फड़फड़ाहट, मक्खियों की भनभनाहट और समय समय पर नदी के उस पार चौरस खेतों पर बलों को हँकाते हुए कृषक की सुरीली और करुण तान उसके कानों में पड़ कर एक नया रूप धारण करती, उसमें एक नयी अनुभूति का संचार करती।

परन्तु बच्चा इन समस्त ध्वनियों को एक साथ, समन्वित रूप से, ग्रहण करने में असमर्थ था। वह न तो उनका समुचित रूप से सामंजस्य ही स्थापित कर पाता था और न उन्हें व्यवस्थित रूप से क्रमबद्ध ही कर पाता। सभी ध्वनियाँ अलग-अलग उसके छोटे से मस्तिष्क में प्रवेश करतीं – कुछ कोमल और अस्पष्ट होतीं, कुछ तेज़ और साफ़ और कुछ ऐसी जिनसे कानों के परदे तक फटने लगते। कभी कभी वे सभी उसके कानों में पड़ा करतीं –

एक के बाद एक बड़े विचित्र ढंग से, लय, स्वर और गति से दूर, बहुत दूर। फिर भी खेतों से आती हुई वायु उसके कानों में कुछ कह जाती। वायु-तरंगें द्रुतगति से उसके कानों में प्रवेश करतीं, उनका कोलाहल अन्य समस्त ध्वनियों को दबा देता और उसे ऐसा लगता कि वे इस दुनिया का नहीं किसी दूसरी दुनिया का संदेश दे रही हैं–बीते हुए दिनों की स्मृतियों की तरह। और जब ये ध्वनियाँ हल्की पड़ने लगतीं तो बच्चे को दुर्बलता घेर लेती। उसका चेहरा इन तरंगों के आरोहावरोह के साथ ही खिलता, मुरझाता। उसकी आँखें मुँदतीं, खुलतीं और फिर मुँदतीं। उसकी भौंहों पर बेचैनी के चिह्न प्रकट होने लगते। उसकी प्रत्येक मुख-मुद्रा से पता चलता कि वह कुछ पूछना चाहता है और उसके मस्तिष्क तथा उसकी कल्पना को विशेष प्रयास करना पड़ रहा है। वह बच्चा था, कमज़ोर था और नयी-नयी अनुभूतियों से दबा जा रहा था। फलतः उसकी चेतना पर ज़ोर पड़ने लगा। परन्तु उसमें संघर्ष जारी रहा, और उसने चारों ओर से प्रवेश करती हुई अनुभूतियों और भावुकताओं को अपने में समेट लिया। और क्यों? इसलिए कि वह उनमें सन्तुलन स्थापित कर सके, उन्हें एकरूपता का आधार

दे सके, उन्हें समझ सके, उनपर विजय पा सके। परन्तु बच्चे के अविकसित मस्तिष्क के लिए यह कार्य और भी दुष्कर था क्योंकि उसके पास चर्म-चक्षु न थे।

ध्वनियाँ एक के बाद एक उसके कानों में प्रवेश करती गयीं। वे उसके श्रवणों में गूंजतीं ज़रूर, परन्तु सभी एक दूसरे से भिन्न होतीं। ध्वनि-तरंगें उसके चारों ओर के कोलाहलपूर्ण अन्धकार से उठती हुई उसके अन्तस् में पहुँचतीं और फिर उसी अन्धकार में विलीन हो जातीं। और उसके बाद फिर नयी तरंगें और फिर नयी ध्वनियाँ... और यह क्रम बराबर बना रहता। वे उसका सम्पूर्ण अस्तित्व झकझोर डालतीं और उसे व्यथित कर देतीं। इन सब अव्यवस्थित ध्वनियों के साथ-साथ उसे मानव का करुण क्रन्दन भी सुनाई देता। फिर सब कुछ शान्त हो जाता।

धीरे-धीरे सिसकते हुए बच्चा घास पर गिर पड़ा। माँ ने मुड़ कर देखा और भयग्रस्त चीख़ उठी। वह अभी भी घास में पड़ा था। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया था। उसे मूर्च्छा आ गयी थी।

८

इस घटना से चचा मक्सिम आतंकित हो उठे। उन्होंने शरीर विज्ञान, मनोविज्ञान और बाल-शिक्षण विज्ञान की अनेकानेक पुस्तकें मंगायीं और बच्चों के जीवन, उनकी वृद्धि और उनके विकास के रहस्यों को जानने के लिए पूरे मनोयोग के साथ उनका अध्ययन किया।

इस अध्ययन में उनका मन लगने लगा और वे व्यस्त रहने लगे। परिणाम यह हुआ कि उनके ये विचार उनके मस्तिष्क से निकल गये कि "मैं जीवन संघर्ष के लिए बेकार हूँ", "दुनिया के लिए बोझ बना हुआ हूँ", "धूल फाँकने वाला पददलित कीड़ा हूं"। अब वे अनेक चीज़ों में दिलचस्पी लेने लगे। कभी कभी तो उनके सपने इतने रंगीन हो उठते कि उनके वृद्ध हृदय में भी जवानी हिलोरे लेने लगती। वे समझते थे कि यद्यपि प्रकृति ने उनके छोटे भाँजे को दृष्टि से वंचित कर दिया है फिर भी वह अन्य प्रकार से उनपर मेहरबान है। जब बच्चे पर बाहरी दुनिया की कोई छाप पड़ती, तो वह इस प्रकार व्यवहार करता मानो

उसने प्रकृति के इन संकेतों को पूरा-पूरा समझ लिया है। अब चचा मक्सिम ने संकल्प कर लिया था कि वे बच्चे की प्राकृतिक एवं दैवी क्षमताओं का विकास करने का प्रयत्न करेंगे, भाग्य के घोर अन्याय का जवाब देने के लिए अपनी समस्त बौद्धिक क्षमताओं और प्रभावों का उपयोग करेंगे, जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए लड़ने वाले एक नये सेनानी को जन्म देंगे, और अपने से जितना भी हो सकेगा उसकी सहायता करेंगे।

"कौन कह सकता है?" गरीबाल्डी के पुराने साथी ने विचार किया, "अन्ततः, संघर्ष के साधन भाले और तलवारें ही तो नहीं। हो सकता है कि किसी दिन यह बच्चा भी, जिसका भाग्य ने इस बुरी तरह उपहास किया है, किसी कला में पारंगत हो कर अपने जैसे अभागों और अन्याय पीड़ितों की सहायता के लिए आगे बढ़े। और यदि यह बात सच हुई तो बूढ़े पंगु सिपाही का जीवन व्यर्थ न जायगा..."

उन्नीसवीं शताब्दी की पांचवीं छठी दशाब्दी के विद्वान मस्तिष्क भी प्रारब्ध नामी "प्राकृतिक रहस्यों" के प्रति अन्धविश्वासों की भावना में बह रहे थे। अतएव जैसे ही जैसे बच्चे में विकास होता गया और उसने

अपनी आश्चर्यजनक क्षमताओं का परिचय देना आरम्भ किया वैसे ही चचा मक्सिम उसके अन्वेषन को "प्रारब्ध" की स्पष्ट निशानी समझने लगे। "अभागा अब अभागों के लिए लड़ेगा।" चचा मक्सिम ने बच्चे के पालन-पोषण के लिए यही योजना बनायी थी।

६

उस बसन्त में पहली बार घर से बाहर निकलने के बाद कुछ दिनों तक बच्चा बिस्तर पर ही उन्मादग्रस्त पड़ा रहा। सारे समय, चाहे वह जड़वत् चुप पड़ा रहे, चाहे हिलता-डुलता रहे, चाहे बड़बड़ाता रहे अथवा कुछ सुनती-सी मुद्रा में रहे, व्याकुलता की विचित्र अभिव्यक्ति उसके मुखमंडल पर बनी ही रहती।

"सचमुच," युवा माँ कहती, "वह ऐसे देखता है मानो कुछ समझने की कोशिश कर रहा हो परन्तु समझ न पा रहा हो।"

चचा मक्सिम विचारग्रस्त मुद्रा में सिर हिला देते। उन्होंने समझ लिया था कि बच्चे की इस विचित्र बेचैनी

श्रौर सहसा उसके तन्द्रावस्थित हो जाने का कारण है नये नये संस्कारों की बहुलता, जिन्होंने उसकी कल्पना पर ज़रूरत से ज़्यादा बोझ डाला था। अब जब बच्चा कुछ कुछ स्वस्थ होने लगा तो यह निश्चित किया गया कि उसमें इन नये संस्कारों का प्रवेश धीरे-धीरे, श्रौर कम संख्या में, कराया जाय। पहले उसके कमरे की खिड़कियाँ बन्द रहती थीं। किन्तु बाद में, जब वह कुछ श्रौर तन्दुरुस्त हुश्रा तो उन्हें किसी किसी समय थोड़ी थोड़ी देर के लिए खोला जाने लगा। फिर जब वह पैरों चलने लगा तो माँ उसे घर के भीतर इधर-उधर टहलाने लगी—कभी बाहर दालान में ले जाती श्रौर कभी बाग़ बग़ीचे में। श्रौर जब बच्चे के चेहरे पर व्याकुलता के लक्षण श्रंकित होते तो उसे उन ध्वनियों के पैदा होने का कारण समझाती जिन्हें समझने में पहले वह श्रसमर्थ रहता था।

"वह है चरवाहे की सिंगी जिसे चरवाहा जंगल से दूर, बहुत दूर, बजा रहा है," वह कहा करती, "श्रौर वह रहा रोबिन पक्षी—जिसका स्वर तुम गौरैयों की चहचहाहट के बीच सुन रहे हो। श्रौर यह—यह है क्रौंच, जो पहिये

पर अपनी चोंच पटपटा रहा है।* यह अभी उसी दिन तो यहां लौटा है! ओफ कितनी दूर से, मालूम है! और अब वह उसी जगह अपना घोंसला बना रहा है जहां पिछले साल बनाया था।"

बच्चा सिर हिला देता और माँ का हाथ दबा देता। उसका मुखमंडल कृतज्ञता से चमक उठता। और जब वह अपने आस-पास की ध्वनियाँ सुनता तो उसके चेहरे पर ऐसे-ऐसे भाव झलकने लगते जिनसे पता चलता कि वह विचारमग्न है और बड़ी रुचि के साथ सब कुछ समझने का प्रयास कर रहा है।

१०

अब बालक उन सब बातों के बारे में पूछताछ करने लगा था जिनकी ओर उसका ध्यान आकृष्ट होता था और उसकी माँ बल्कि अधिकतर चचा मक्सिम उसे उन प्राणियों या वस्तुओं के बारे में बताते जिनकी आवाज़ें

* उक्रइन तथा पोलैंड में लोग ऊँचे-ऊँचे खंभों पर गाड़ी के पुराने पहिये रख देते हैं जिनपर क्रौंच अपने घोंसले बनाते हैं।

वह सुना करता था। माँ का वर्णन अधिक स्पष्ट और रोचक होता और उसका प्रभाव बच्चे की कल्पना-शक्ति पर कहीं अधिक पड़ता। परन्तु कभी कभी वे वर्णन उसके छोटे से मस्तिष्क के लिए बहुत बड़े बोझ साबित होते। स्वयं माँ को भी कम कष्ट न होता और उसकी आँखों से निराशा, वेदना और दुख के भाव प्रकट होने लगते। परन्तु यथासम्भव वह अपने पुत्र को वस्तुओं की आकृति तथा उनके रंग से अवगत कराने की चेष्टा करती। बच्चा बैठ जाता, माँ की बातें बड़े ध्यान से सुना करता, उसकी भौंहें तन जातीं, माथे पर बल पड़ जाते और उसका बाल-सुलभ मस्तिष्क कोई ऐसा कार्य करने में जुट पड़ता जिसे पूरा करना प्रायः उसकी शक्ति से परे होता। और उसकी कल्पना माँ द्वारा समझायी गयी बातों की सहायता से नयी-नयी धारणाओं का निर्माण करने का निष्फल प्रयत्न करती। चचा मक्सिम को यह तमाशा देख कर क्रोध आ जाता और जब वह बच्चे को किसी बात के समझने के प्रयास में पीला पड़ा हुआ उसकी माता को रोते हुए देखते तो स्वयं अपने से ही तर्क-वितर्क शुरू कर देते। परन्तु वे अपने स्पष्टीकरणों को शून्य और ध्वनि के सिद्धान्तों तक ही सीमित रखते। और बच्चा शान्त हो जाता।

"तो क्या यह बड़ा होता है? कितना बड़ा?" — वह उस क्रौंच पक्षी के बारे में पूछ रहा था जो खड़ा खड़ा पहिये से अपनी चोंच लड़ाये जा रहा था।

जब बच्चा कोई प्रश्न करता तो हमेशा की तरह अपने हाथ फैला देता। फिर उसके छोटे-छोटे हाथ ऊपर, और ऊपर बढ़ते चले जाते किन्तु चचा मक्सिम फिर भी यही कहते जाते —

"नहीं, वह इससे बड़ा है, बहुत बड़ा। अगर हम उसे अपने घर ले चलें और फ़र्श पर खड़ा कर दें तो उसका सिर कुर्सियों की पिछाड़ी से भी ऊँचा रहेगा।"

"इतना बड़ा ..." और बच्चा खुशी से झूम उठता। "लेकिन रोबिन — वह तो बस इतना-सा ही होता है" — और वह अपनी हथेलियाँ ऊपर-नीचे कर देता, एक दूसरी के बिल्कुल समीप।

"हाँ, रोबिन ऐसा ही होता है। लेकिन तुम्हें यह भी मालूम है कि बड़े पक्षी इतना अच्छा नहीं गा पाते जितना अच्छा ये छोटे पक्षी गाते हैं। रोबिन सदा इस बात का प्रयत्न करता है कि सभी उसके गानों की सराहना करें। क्रौंच एक गम्भीर पक्षी है। वह अपने घोंसले में एक टाँग से खड़ा हो जाता है, अपने चारों ओर

एक सरसरी निगाह डालता है—वैसे ही जैसे कोई सख्त मालिक अपने नौकरों को घूरता है—और जितने ज़ोर से उसका मन होता है चिंचियाता है। उसे इसकी रत्ती भर परवाह नहीं कि उसकी आवाज़ कितनी भोंडी है और लोग उसे सुनने का कष्ट करते हैं या नहीं।"

बच्चा इन चुटकुलों को सुन कर हँस पड़ता और अपनी माता की कहानियाँ समझने के प्रयास में पैदा हुई व्यग्रता एवं व्याकुलता भूल जाता। लेकिन ये ही वे कहानियाँ थीं जो उसे अपनी ओर आकृष्ट करतीं और इसी लिए वह अपनी जिज्ञासा की शान्ति के निमित्त सदा माँ की ओर देखता न कि चचा की ओर।

दूसरा अध्याय

१

बच्चे का ज्ञान बढ़ने लगा। उसकी भावुक श्रवण-शक्ति ने उसके समक्ष प्रकृति की अधिकाधिक निधियाँ खोलनी आरम्भ कर दीं। किन्तु उसके ऊपर और इर्द-गिर्द हमेशा की तरह एक गहन, अभेद्य अन्धकार व्याप्त

रहता और उसके मस्तिष्क को अशान्त बनाये रखता। दुनिया में आने के पहले ही दिन से उसका इस अन्धकार से चिर परिचय हुआ था और वह दुर्भाग्य के थपेड़े खा-खा कर इसका अभ्यस्त हो चुका था। मगर उसने हिम्मत न हारी। उसकी बाल-आत्मा में एक ऐसी प्रेरक शक्ति थी जो इस कालिमा से मुक्त होने के लिए उसके अन्तस् में निरन्तर संघर्ष कर रही थी। किन्तु अर्द्धचेतनावस्था में अपरिचित प्रकाश की निरन्तर खोज करते रहने के कारण उसके मुख पर जो छाप पड़ी थी उससे उसके अनिर्वचनीय एवं व्यथित प्रयासों की ही अभिव्यक्ति होती थी।

फिर भी उसे स्वच्छन्द रूप से हँसने खेलने के अवसर मिल जाया करते। ऐसे अवसरों पर उसका मुखमंडल खिल उठता, विशेष रूप से उस समय जब बाह्य संसार की कोई शक्तिशाली इन्द्रिय-गम्य छाप उसे अदृष्ट दुनिया के बारे में कोई नया ज्ञान देती क्योंकि अब मनोरम छटाओं से परिपूर्ण प्रकृति अन्धे बच्चे के लिए केवल रहस्य की वस्तु ही नहीं रह गयी थी।

एक दिन लोग बच्चे को नदी के किनारे के एक ऊँचे से टीले पर ले गये जहाँ वह नीचे से आती हुई जल

की कलकल सुनता रहा और उसके मुखमंडल पर नये-नये भाव आते-जाते रहे। जब पत्थर के टुकड़े उसके पैरों के नीचे से खिसक-खिसक कर टीले से टकराते तो वह माँ के कपड़े पकड़ लेता और सहम जाता। बाद में, टीले की तलहटी में मरमर करती हुई जल-ध्वनि और उसमें गिरते हुए पत्थरों की छपाक सुन कर ही उसके मस्तिष्क में गहराइयों की अनुभूति हुआ करती।

दूरी का अनुभव उसे किसी गाने की धीरे-धीरे विलीन होती हुई ध्वनि से होता। जब वसन्तकालीन बादलों की गरज अपनी गूँज शून्य में भरने लगती और फिर अन्त में धमाके के साथ बादलों के पीछे विलीन हो जाती तो अन्धा बच्चा भयभीत उसे सुना करता और श्रद्धावनत खड़ा रह जाता। उसका हृदय धड़कने लगता और उसे ऊपर निस्सीम गगन के प्रसार की अनुभूति होने लगती।

ध्वनि ही उसके लिए वह माध्यम थी जिसके द्वारा वह बाहरी दुनिया को कुछ-कुछ समझ सकता था। अन्य इन्द्रियों के माध्यम से उसपर जो छापें पड़तीं वे उसकी ध्वनि-छापों की ही पूरक होतीं क्योंकि इन्हीं छापों के कारण उसकी कल्पना के समक्ष उसके विचार मूर्तिमान होते।

कभी कभी, जब दिन में सब से अधिक गर्मी होती और सारी आवाज़ें शान्त, मानव क्रिया-कलाप स्थिर और प्रकृति इतनी मौन हो जाती कि सिवा नीरव शक्ति-संवहन के और समस्त गतियाँ मूक रहतीं, तो अंधे बच्चे के चेहरे पर नये-नये भावों की अभिव्यक्ति होती और वह प्रफुल्लित हो उठता। ऐसा लगता कि वह पूरी एकाग्रता के साथ आवाज़ें सुन रहा है जो सिवा उसके और किसी को नहीं सुनाई पड़तीं। ये ध्वनियाँ उसके अन्तर के किसी कोने से उठतीं और बाह्य संसार की नीरवता का योग पाकर उसके मस्तिष्क में ठोस अस्तित्व ग्रहण कर लेतीं। उसके चेहरे को देख कर यह धारणा बंधती कि उसके हृदय में कोई मीठागीत जन्म ले रहा है, जो अस्पष्ट है, अविकसित है।

२

वह पाँचवें साल में था—दुबला-पतला, कृशकाय। परन्तु घर के भीतर, कमरों में, आज़ादी के साथ न केवल चल-फिर लेता था अपितु भाग-दौड़ भी

सकता था। जब कोई अपरिचित व्यक्ति यह देखता कि वह कितने विश्वास के साथ चलता-फिरता है—जब कभी आवश्यकता होती है मुड़ जाता है और जब कभी इच्छा करता है वांछित वस्तु उठा लेता है—तो सहसा उसे यकीन हो जाता कि बच्चा अन्धा नहीं है, बल्कि असाधारण प्रकार का कोई विचारशील प्राणी है जिसकी आँखों में मधुर स्वप्न हैं, जो दूर दूर तक की ख़बर ले सकता है। लेकिन बाहर घूमना-फिरना आसान न था। वहां वह छड़ी के सहारे चलता और प्रत्येक क़दम रखने के पूर्व ज़मीन को अच्छी तरह टोह लेता। जब उसके पास छड़ी न होती तो हाथों और पैरों के बल जानवरों की तरह रेंगता और रास्ते में जो भी चीज़ पड़ जाती उसे अपनी अंगुलियों से टटोलता और तब तक उसे समझने की कोशिश करता जब तक वह उसके मस्तिष्क में जम न जाती।

३

ग्रीष्मकालीन नीरव शाम थी। चचा मक्सिम बाग़ में चहलक़दमी कर रहे थे। बच्चे के पिता हमेशा की

तरह दूर के किसी खेत में गये थे। हर चीज़ शान्त थी। गाँव के घरों में लोग सोने की तैयारी कर रहे थे। नौकरों की कोठरियों की ध्वनियाँ शान्त हो चुकी थीं। बच्चा आधा घंटा पहले ही सोने चला गया था।

वह कमरे में अभी अर्द्ध-निद्रा में ही था। पिछले कुछ दिनों से इस नीरव शाम के विचार मात्र ने उसके मस्तिष्क में विचित्र स्मृतियाँ भर दी थीं। हां वह काले पड़ते हुए आसमान अथवा ताराच्छादित गगन की पृष्ठभूमि में हिलते-डुलते वृक्षों के सिरों, खलिहानों तथा अस्तबल की टेढ़ी-मेढ़ी ओलतियों के नीचे की परछाइयों, पृथ्वी पर पड़नेवाली नीली कालिमा अथवा स्वर्णिम ज्योत्स्ना और सितारों के झिलमिलाते प्रकाश को अवश्य न देख पाता, फिर भी प्रति रात वह मन्त्रमुग्ध-सा होकर सोने जाता और जब प्रातःकाल उठता तो अपनी अनुभूतियाँ व्यक्त करने में असमर्थ रहता।

यह मन्त्रमुग्ध जैसी स्थिति उस समय आती जब निद्रा उसकी चेतना को अभिभूत करने लगती, जब खिड़की के पास लगे हुए बीच-वृक्ष की मर्मर, दूर से

ग्राती हुई गाँव के कुत्तों की भोंभों, नदी के उस पार से सुनाई पड़ती हुई बुलबुल की चहक, चरागाह में घोड़े के बच्चे के गले में बंधी हुई घंटी से निकलती हुई टुनटुन उसे न सुनाई पड़ती और जब सारी ग्रावाज़ें धीमी पड़ने या लोप होने लगतीं। फिर ये सारी ग्रावाज़ें एक नये कोमल स्वरसाम्य का रूप धारण कर उसके कमरे में प्रवेश करती-सी लगतीं और उसके हृदय को स्पष्ट किन्तु सुखद कल्पनाओं से भर देतीं। जब सुबह होती तो वह प्रसन्नचित्त उठता और बड़ी उत्सुकता से माँ से पूछने लगता—

"कल रात क्या था? क्या हुआ था माँ?"

माँ जवाब न दे पाती। सम्भवतः वह सोचती कि बच्चे ने कोई स्वप्न देखा है। रोज़ रात को वह खुद बच्चे को पलंग पर ले जाती और उसके पास उस समय तक पड़ी रहती जब तक कि वह सो न जाता। उसका ध्यान असाधारण प्रतीत होनेवाली किसी बात पर कभी नहीं गया। फिर भी बच्चा प्रातःकाल कहता कि पिछली रात उसे कितना सुखद अनुभव हुआ था।

"वह कितना अच्छा था, कितना मधुर! वह क्या था, माँ?"

श्रौर इसी लिए इस रात माँ ने निश्चय किया कि वह बच्चे के कमरे में रहेगी और हर बात पर निगाह रखेगी। शायद उसे इस पहेली का कोई हल मिल जाय। वह चुपके से पलंग के पास बैठ गयी और बराबर बुनाई करती रही। उसके कान छोटे पेत्रो की श्वास पर लगे रहे। शीघ्र ही उसे लगा कि वह गहरी नींद में सो गया। किन्तु एकाएक उसने बच्चे को धीरे-धीरे कहते सुना –

"माँ, क्या अभी तक तुम यहीं हो?"

"हाँ, पेत्रो।"

"चली जाओ। वह तुमसे डरती है और इसी लिए नहीं आती। मैं क़रीब-क़रीब सो चुका था, फिर भी वह नहीं आयी।"

बच्चे की यह नींद भरी फुसफुसाहट सुन कर माँ को विचित्र अनुभूति हुई। वह अपनी कल्पनाओं के बारे में इतने विश्वास के साथ बातें करता मानो किसी सच्ची एवं वास्तविक बात के बारे में कह रहा हो। फिर भी वह उठती, उसे चूमने के लिए पलंग पर झुकती, चुपके से कमरे के बाहर चली जाती और बाग़ से होकर फिर खिड़की तक लौट आती।

वह बाग़ से होकर आ ही रही थी कि उसके समक्ष रहस्य का उद्घाटन हो गया। एक देहाती बाँसुरी से निकलती हुई कोमल एवं मधुर धुन उसके कानों में पड़ी। यह एक सीधी-सादी सुरीली तान थी जो रात्रि की कोमल ध्वनियों से एकाकार होकर वातावरण में मादकता बिखेर रही थी। ठीक है, यही वह धुन है जो सोने से कुछ ही पहले बच्चे के कानों में पड़ कर उसके मानस में सुखद स्मृतियों का सृजन करती है।

यह एक कोमल उक्रइनी धुन थी जिसे सुनने के लिए वह थोड़ी देर रुकी। उसके हृदय को कुछ सान्त्वना मिली। वह मुड़ी और बाग़ में चचा मक्सिम से मिलने के लिए चल दी।

"इयोहिम कितना अच्छा बजाता है," उसने सोचा, "आश्चर्य है कि इतना रूखा व्यक्ति वाद्य के माध्यम से इतनी कोमल अनुभूतियों की सृष्टि कर सकता है।"

४

हाँ, इयोहिम खूब बजाता था। बेला बजाने में तो पूरा उस्ताद था। एक समय वह भी था जब

रविवारों को सराय में कज़्ज़ाक नृत्य की धुन अथवा पोलिश क्रकोवियक बजानेवाला उससे अच्छा कोई दूसरा व्यक्ति था ही नहीं। वहाँ एक कोने में वह अपनी बेंच पर बैठ जाता, साफ़ की हुई ठुड्डी के नीचे अपना बेला साधता और भेड़ की खाल वाला उसका लम्बा टोप थोड़ा खिसक कर एक ओर झुक जाता। और जब सिर झुका कर वह बाजे के कसे हुए तारों को झनझनाता तो सराय के लोग झूम उठते। बाजे पर इयोहिम की संगत करने वाला बूढ़ा काना यहूदी भी मस्त हो उठता। उसके कंधों में हरकत होने लगती, उसका खल्वाट सिर और उसकी काली टोपी इधर-उधर हिलने-डुलने लगती, उसकी सम्पूर्ण कृशकाया उस मोहक धुन की लय और गति के साथ झूमने लगती और बेले की द्रुत कोमल गत का साथ देने के लिए वह अपने बाजे से जो गम्भीर स्वर निकालने का प्रयत्न करता उसमें उसके हाथ झूल जाते। फिर उन लोगों की तो बात ही क्या जिनके पैर नृत्य-संगीत का प्रथम आभास पा कर ही थिरक उठते हैं?

परन्तु इयोहिम मार्या से प्रेम करता था। वह एक पड़ोस की जागीर में नौकरानी थी। शीघ्र ही उसे

अपने बेले के प्रति कोई आकर्षण न रह गया। बेले ने मार्या के हृदय पर विजय प्राप्त करने में उसकी कोई सहायता न की। मार्या ने उक्रइनी सईस के संगीत और मूंछों की तुलना में जर्मन सेवक का चिकना चेहरा अधिक पसन्द किया। और जब से उसे मार्या का निश्चय मालूम हुआ तब से फिर सराय में अथवा युवकों के सायंकालीन समारोहों पर उसके बेले की आवाज़ नहीं सुनाई पड़ी। जो वाद्य कभी उसके जीवन का आधार था वह अब अस्तबल की दीवार पर एक खूँटी के सहारे लटका हुआ दिखाई पड़ने लगा, और एक दिन वह भी आया कि उसकी उपेक्षा और वायुमंडल की आर्द्रता के कारण उसके तार ऐंठे, मुड़े और टूट गये। फिर उनसे आख़िरी झनकार कुछ इतने ज़ोरों से हुई कि पास खड़े हुए घोड़े भी तारों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करने के लिए हिनहिना उठे और बेले के बेरहम मालिक की ओर घूरने लगे।

इयोहिम ने गाँव से हो कर गुज़रने वाले एक कार्पेथियन पर्वतवासी से एक लकड़ी की बाँसुरी ले ली। अब वह उसी को बजाया करता! शायद उसने समझा था कि उसके दुर्भाग्य का साथ और उसके टूटे

हुए दिल को सान्त्वना देने के लिए बाँसुरी से निकली हुई करुण धुन कहीं अधिक उपयुक्त होगी! परन्तु उसकी यह आशा पूरी न हुई। उसने एक के बाद एक दसियों बाँसुरियाँ लीं और उन्हें अधिक से अधिक सुरीला बनाने के यथासम्भव सभी प्रयत्न किये—छीला, काटा, रन्ध्र बड़े किये, पानी में भिगोया, धूप में सुखाया और हवा में टाँग दिया। मगर किसी से भी कोई लाभ न हुआ। ये पहाड़ी बाँसुरियाँ उसके उक्रइनी हृदय की उदासीनता व्यक्त करने में असफल थीं। भाव कुछ होते धुन कुछ निकलती, उंगलियाँ कहीं पड़तीं सुर कुछ निकलते। इयोहिम की मानसिक स्थिति के अनुरूप सुर पैदा करने में ये बाँसुरियाँ सर्वथा असमर्थ रहीं। इसी लिए आख़िर में क्रोध में भर कर एक दिन उसने खुले आम यह घोषणा कर दी कि अच्छी बाँसुरी बना सकने वाला पर्वतवासी दुनिया में पैदा ही नहीं हुआ। नहीं, अब वह अपनी बाँसुरी ख़ुद बनायेगा, अपने इन्हीं हाथों से।

लगातार कई-कई दिनों तक भृकुटियों में बल डाले इयोहिम खेतों और दलदलों की ख़ाक छानता रहा।

सरपत के प्रत्येक झुरमुट के पास वह कुछ देर तक रुकता और उसकी शाखाओं की छानबीन शुरू कर देता। इधर-उधर से वह दो एक शाखाएं काट लेता परन्तु सन्तोष उसे किसी से भी न होता। उसकी भृकुटियों में बल पड़े ही रहे लेकिन उसने अपनी ढूंढ-तलाश न बन्द की। अन्ततः वह एक शान्त एवं मनोरम सरिता के पास आया जहाँ कुमुदिनियाँ अपना समस्त श्वेत सौन्दर्य लिए हुए जल के साथ अठखेलियाँ कर रही थीं। इसी सरिता के ऊपर सरपत की कुछ झाड़ियाँ अपना वैभव बिखेरती हुई जल की अथाह गहराइयों का चुम्बन कर रही थीं और प्रत्येक बयार का स्पर्श करके उससे शीघ्र बिछुड़ जाती थीं। इयोहिम सरपतों में से रास्ता बनाता हुआ नदी तट तक पहुंचा और अपने चारों ओर देखता हुआ वहीं खड़ा रहा। और सहसा अन्तःप्रेरणा द्वारा उसे ऐसा अनुभव हुआ कि जिस चीज़ की उसे तलाश है वह उसे यहीं मिलेगी। उसके चेहरे पर रौनक़ आ गयी। उसने अपना चाकू निकाला और खोल लिया। कुछ देर तक इधर-उधर निगाह डाल लेने के बाद उसने कुछ निश्चय किया और ढाल वाले झुरमुट की ओर चल दिया।

उसने उसे हाथ से छुआ, हिलाया-डुलाया, उसकी पत्तियों की मर्मर सुनी और खुशी में आकर अपना सिर पीछे झटकार दिया।

"यह रहा वह," इयोहिम के मुँह से सहसा ये शब्द निकल गये। और, उसने जो दूसरी शाखाएं काटी थीं वे हवा में उड़ती दिखाई देने लगीं। वह प्रसन्न था, बहुत प्रसन्न। अब जो बाँसुरी बनी वह अद्भुत थी। उसने सर्वप्रथम सरपत की शाख सुखायी, फिर जलते हुए लाल लाल तार से उसके अन्तस को भेदा, जलाया, उसमें छ गोल सूराख़ किये, सातवाँ वक्र किया, एक सिरे को लकड़ी लगा कर इस प्रकार बन्द किया कि एक महीन-सा ऐसा रन्ध्र रह गया जिससे होकर वायु आ जा सकती थी। फिर बाँसुरी घर के बाहर लटका दी और वह पूरे एक सप्ताह तक धूप में सूखती और वायु का स्पर्श पाकर ठंढी होती रही। फिर उसे उतारा, चाकू से छील-छाल कर मांजा, शीशे से चिकना किया और एक ऊनी चिथड़े की सहायता से चमकीला बनाया। उसने ऊपरी हिस्से को गोल और निचले को नक़्क़ाशीदार बना कर बाँसुरी को एक सुन्दर स्वरूप दिया। जब सब हो गया तब उसने उसका परीक्षण

किया, शीघ्रता से एकाध गत बजायी और फिर बाँसुरी अपने पलंग के पास एक कोने में टिका दी। हाँ, बाँसुरी दिन के प्रकाश में बजाने के लिए नहीं थी। जब शाम होती तो उसकी सुरीली धुन अस्तबल में से निकलती हुई सुनाई दे जाती जिसमें कोमलता होती, स्वप्निल तरंगें होतीं, झंकार होती। इयोहिम प्रसन्न था, बहुत प्रसन्न। बाँसुरी से जो धुन निकलती वह ऐसी लगती मानो स्वयं उसकी अनुभूतियों का ही साकार रूप हो। उसका संगीत उसके अपने करुण हृदय का गान होता और उसकी सुरीली तान, उसकी मधुर धुन और हवा में फैलती हुई उसकी स्वर-लहरियाँ रात्रि के वातावरण में जान डाल देतीं।

५

अब इयोहिम अपनी बाँसुरी को प्यार करता और उसी के साथ अपनी सुहागरात मनाता। दिन भर वह हमेशा की तरह अपना काम करता—घोड़ों को पानी देता, नहलाता-धुलाता, तैयार करता, उनपर ज़ीन और साज़ कसता और फिर उन्हें पानी पोपेल्स्काया

या चचा मक्सिम की सवारी के लिए बाहर निकालता। और जब कभी पड़ोस के उस गाँव की ओर देखता, जहाँ निर्दय मार्या रहती थी, तो उसका दिल भारी हो उठता। परन्तु जब शाम आती तो वह सारी दुनिया को भूल जाता। स्वयं मार्या की काली-काली भौंहों का ख्याल भी उसके दिमाग़ से उतर जाता और वह अपनी अद्भुत एवं नयी-नवेली बाँसुरी को अपने अधरों पर रखता हुआ उसके संगीत में खो जाता।

और इस प्रकार, उस शाम अस्तबल में संगीत के नशे में मस्त इयोहिम बाँसुरी पर ऐसी-ऐसी धुनें निकाल रहा था कि सुनने वाले मन्त्रमुग्ध हो रहे थे। वह भूल गया था सौन्दर्य की उस प्रतिमा को जिसका हृदय कठोर था और भूल गया था स्वयं अपने अस्तित्व को और अपने आपको। सहसा वह उछला और बिस्तर पर बैठ गया। संगीत का माधुर्य अपनी चरम सीमा पर पहुँच ही रहा था कि एक छोटे-से हाथ ने वादक का स्पर्श किया और वह उसके चेहरे से होता हुआ उसके हाथों और बाँसुरी तक आ गया। इयोहिम के पास ही कोई और

चीज़ भी थी जिसमें जीवन था, जीवन की गरिमा थी। वह पास ही में तेज़ी से आती-जाती साँसों की आवाज़ सुन रहा था।

"रक्षा करो, भगवान," उसके मुँह से सहसा निकला। अपशकुन अथवा भय दूर भगाने के लिए लोग प्रायः इन्हीं शब्दों की शरण लिया करते थे।

किन्तु अस्तबल के खुले हुए द्वार से भीतर आती हुई चाँदनी में उसे अपनी ग़लती महसूस हुई। उसके पलंग के पास उत्सुकता के साथ अपने दोनों हाथ फैलाये ज़मीनदार परिवार का अन्धा बच्चा खड़ा था।

इधर लगभग एक घंटे के पश्चात् जब माँ कमरे में यह देखने आयी कि पेत्रो सो रहा है या नहीं तो उसने पलंग ख़ाली पाया। एक क्षण के लिए वह घबड़ा-सी गयी, परन्तु फ़िर शीघ्र ही उसने अनुमान लगा लिया कि बच्चा कहाँ होगा। इयोहिम ने बाँसुरी रख दी और जब पीछे मुड़ा तो यह देख कर स्तब्ध रह गया कि उसकी मालकिन दरवाज़े के पास खड़ी खड़ी बाँसुरी की तान सुन रही है। वह अपने पुत्र को देख रही थी जो भेड़ की खाल का जैकेट पहने, संगीत-रस का पान करता हुआ वहीं बैठा था।

६

उस दिन के बाद से पेत्रो रोज़ सायंकाल अस्तबल जाने लगा। उसके दिमाग़ में यह बात ही न आयी कि वह इयोहिम से दिन में बाँसुरी बजाने के लिए कहे। स्पष्ट था कि, उसके विचार से, दिन के समय की चिल्लपों और लोगों के आने-जाने के कारण इन कोमल धुनों को निकालना सम्भव न था। किन्तु सायंकाल होने के साथ ही साथ उसपर एक नशा-सा छाने लगता और उसका संयम टूट जाता। चाय और रात्रि का भोजन केवल इसी लिए महत्व के रह गये थे कि उनसे प्रकट होता था कि अब वह समय निकट ही है जिसकी वह इतनी उत्सुकता से प्रतीक्षा करता रहा है। और यद्यपि बच्चे के इस आकर्षण को माँ स्वयं पसन्द न करती फिर भी वह अपने हृदय के टुकड़े को, कुछ घंटे आराम से व्यतीत करने से मना न कर सकती—और यह आराम उसे तब मिलता जब वह सोने के पहले अस्तबल में जाकर इयोहिम का संगीत सुन लेता। बच्चे के लिए ये ही कुछ घंटे सबसे अधिक प्रसन्नता और उल्लास के थे। माँ ने अनुभव किया कि शाम के समय उसपर जो

छापें अंकित होतीं वे अगले दिन तक बराबर बनी रहतीं। उसका सारा लाड़-प्यार भी इसके आड़े न आ पाता। जब कभी वह माँ की गोद में रहता तो उसकी स्वप्निल दृष्टि से स्पष्ट पता चल जाता कि वह इयोहिम के संगीत की ही बात सोच रहा है।

इसी समय माँ को स्वयं अपने संगीत-ज्ञान की भी याद हो आयी। आख़िर थोड़े वर्ष पहले ही तो वह बोर्डिंग स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के लिए किएव में पानी रदेत्स्काया की संस्था में दाख़िल हुई थी। यहां अन्य "ललित कलाओं" के साथ ही साथ उसे पियानो बजाना भी सिखाया गया था। यह ठीक है कि यह स्मृति बड़ी सुखद न थी क्योंकि इसके साथ ही साथ उसकी कल्पना के समक्ष उसकी संगीत-अध्यापिका फ़ालीन क्लाप्स की भी स्मृतियाँ मूर्त्तिमान हो उठती थीं। यह अध्यापिका ढलती उम्र की अत्यधिक कृशकाय, अत्यधिक नीरस और अत्यधिक चिड़चिड़ी औरत थी। यह कटु स्वभाव वाली महिला अपनी छात्राओं की उंगलियाँ मोड़ने और उन्हें लोचदार बनाने में बड़ी पटु थी। हाँ, उसकी एक विशेषता यह थी कि यदि लड़कियों में संगीत के

प्रति कोई आकर्षण होता था तो वह उसकी हत्या कर डालती थी। फ़ालीन क्लाप्स के शिक्षण के तौर-तरीकों की तो बात ही क्या उसके दर्शन मात्र से ही संगीत का सारा नशा हिरन हो जाता था। यही कारण था कि स्कूल छोड़ने के पश्चात् युवती आन्ना यात्सेन्को को पियानो बजाने में ज़रा भी रुचि न रही। विवाह हो जाने के बाद भी उसके इस गुण में कोई परिवर्तन न हुआ। किन्तु अब जब वह इस सीधे-सादे उक्रइनी किसान की बाँसुरी से निकली हुई धुन सुनती तो बढ़ती हुई ईर्ष्या के साथ ही साथ उसके हृदय में स्वर-माधुर्य की भी एक नयी अनुभूति जन्म लेती और वह अपनी जर्मन अध्यापिका की याद भूल जाती। आख़िर, एक दिन पानी पोपेल्स्काया ने अपने पति से एक पियानो ख़रीदने की इच्छा प्रकट की।

"प्यारी, जैसा तुम चाहो," आदर्श पति ने जवाब दिया, "मैं तो समझता था कि तुम्हें संगीत में कोई दिलचस्पी ही नहीं।"

पियानो के लिए आदेश तो उसी दिन दे दिया गया परन्तु उसे ख़रीदने तथा शहर से घर तक लाने में कम से कम दो-तीन हफ़्ते तो लगने ही थे।

इस बीच प्रति दिन सायंकाल के समय बाँसुरी की धुन रोज़ की तरह सुनाई देती और बच्चा बिना किसी से पूछे-पाछे अस्तबल की तरफ़ दौड़ा चला जाता।

अस्तबल में घोड़ों, सूखी घास और चमड़े की ज़ीन आदि की बू आया करती। घोड़े खड़े खड़े जुगाली किया करते या कभी कभी अपनी नाँद में पड़ी घास में मुँह डाल देते और तब प्रायः घास की भी सरसराहट कानों में पड़ा करती। जब एक दो क्षणों के लिए बाँसुरी की आवाज़ रुक जाती तो बाग़ में से बीच-वृक्षों की मर्मर सुनाई पड़ जाती और पेत्रो संगीत-रस का पान करता हुआ वहां निश्चल बैठा रहता।

पेत्रो कभी संगीत के प्रवाह में बाधा न डालता। किन्तु जब कभी धुन रुक रुक जाती और एक या दो मिनट तक बन्द रहती तो उसके चेहरे पर विचित्र एवं उत्सुकतापूर्ण उत्तेजना के भाव स्पष्ट दिखाई पड़ने लगते। वह बाँसुरी लेने के लिए अपने हाथ फैला देता और काँपती हुई उंगलियों से उसे अपने ओठों पर रख लेता। लेकिन उत्सुकता के कारण उसकी साँस इतनी क्षीण निकलती कि पहले-पहल तो वह केवल हल्की और प्रकम्पित ध्वनियाँ ही पैदा कर पाता। बाद में धीरे-धीरे उसका

इस सीधे-सादे वाद्य पर अधिकार होने लगा। इयोहिम उसकी उंगलियाँ रन्ध्रों पर रखता, और यद्यपि बच्चे की छोटी-छोटी उंगलियाँ उनपर ठीक-ठीक न पड़तीं, फिर भी उसे इतना ज्ञान तो शीघ्र ही हो गया कि सुर क्या-क्या हैं और उनकी स्थिति कहाँ कहाँ है। उसने समझ लिया कि प्रत्येक सुर का अलग अलग स्वरूप है और उसकी अलग-अलग प्रकृति। अब उसे यह मालूम हो गया कि किस रन्ध्र से कौनसा सुर कैसे निकाला जाता है। और जब कभी इयोहिम कोई सीधी-सादी आसान धुन बजाता तो बच्चे की उंगलियाँ भी अपने शिक्षक की उंगलियों के साथ-साथ चलती रहतीं।

अब उसे बाँसुरी के सुरों, उनकी स्थिति और उनकी क्रमबद्धता का स्पष्ट ज्ञान हो चुका था।

७

तीन सप्ताह बीत गये और पियानो आ ही गया। पेत्रो आँगन में खड़ा खड़ा यह सुन रहा था कि लोग उसे कमरे में ले जाने की तैयारी कर रहे हैं। ज़रूर, यह "आयात किया गया

संगीत" काफ़ी भारी होगा, क्योंकि जब लोगों ने पियानो को उतारना शुरू किया तो जिस गाड़ी पर रख कर वह आया था वह चरमरायी और उसके साथ ही उन लोगों की गुर्राहट तथा साँस लेने की तेज़ आवाज़ भी सुनाई देने लगी। अब वे लोग भारी-भारी क़दम रखते हुए घर की तरफ़ बढ़ रहे थे। उनके प्रत्येक क़दम के साथ-साथ उनके ऊपर से आती हुई कोई ध्वनि सुनाई पड़ रही थी, जिसमें अजीब भोंड़ापन था, विचित्रता थी। उन्होंने इस विचित्र "संगीत" को बैठक में रख दिया, और एक बार फिर उसमें से वह गहरी, अस्थिर और भनभनाती-सी आवाज़ आयी जिसे सुनकर ऐसा लगता था जैसे वह क्रोध में आकर किसी को धमकी दे रहा हो।

इन सबसे बच्चे में भय की भावना ने घर कर लिया। उसने इस "नवागन्तुक" को सराहा नहीं जो बेजान मगर खुशमिज़ाज न था। वह बाग़ में खिसक गया। वहां उसे उन मज़दूरों की खटखट नहीं सुनाई दी जो बाजे को बैठक में बिठा रहे थे और न उस सुर मिलाने वाले की ही टुन-टुन उसके कानों में पड़ी जो शहर से इसी लिए बुलाया गया था कि वह बाज़े की

कुंजिकाओं और तारों में ताल-मेल बिठा दे। जब सब कुछ ठीक हो गया तो माँ ने बच्चे को बुला भेजा।

अब आन्ना मिखाइलोव्‌ना गाँव की सीधी-सादी बाँसुरी को पराजित करने की तैयारी करने लगी। उसका पियानो वियना का था और एक प्रसिद्ध विशेषज्ञ द्वारा बनाया गया था। अब पेत्रो निश्चय ही अस्तबल की भाग-दौड़ बन्द कर देगा। एक बार फिर उसकी सारी प्रसन्नता माँ ही में केन्द्रित होगी और माँ ही उन सब का स्रोत होगी। आँखों में मुस्कराहट भरे माँ ने चचा मक्सिम के साथ बच्चे को कमरे में प्रवेश करते देखा और प्रसन्नतापूर्वक इयोहिम की तरफ़ भी एक निगाह डाली। इयोहिम ने आकर "विदेशी संगीत" सुनने की अनुमति पहले ही प्राप्त कर ली थी। अब वह लज्जावनत दरवाज़े पर खड़ा था। उसकी आँखें फ़र्श पर लगी थीं और गेसू हवा में लहरा रहे थे। जब चचा मक्सिम और बच्चा "संगीत" सुनने के लिए बैठे तो सहसा माँ ने पियानो की कुंजिकाओं पर अपना हाथ रखा।

इस गत का उसने पानी रदेत्स्काया बोर्डिंग स्कूल में, फ़ालीन क्लाप्स के निर्देशन में, अच्छा-खासा

अभ्यास किया था। यह बड़ी जटिल और तेज़ गत थी और इसके लिए वादक की उंगलियों का लचीला होना ज़रूरी था। स्कूल की अन्तिम परीक्षा के समय उसने इस मुश्किल गत को बजाया था और लोगों ने उसकी तथा उसकी शिक्षिका की बड़ी सराहना की थी। यद्यपि विश्वास के साथ तो कोई कुछ न कह सकता था फिर भी ऐसे बहुत से थे जिन्हें लोगों ने दबी ज़बान से यह कहते सुना था कि उसने शान्त प्रकृतिवाले पान पोपेल्स्की को उन्हीं पन्द्रह मिनटों में वशीभूत किया था जिसमें उसने वह गत बजायी थी। आज भी उसने वही गत छेड़ी इस आशा में कि वह अपने पुत्र के नन्हे-से दिल में अपना पुराना स्थान पा सकेगी और उसका बच्चा अब कृषक की बाँसुरी के प्रति आकृष्ट न हो कर उसकी ओर आकृष्ट होगा। और यह उसकी दूसरी विजय होगी।

इस बार उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। उक्रइनी सरपत की तुलना में पियानो न टिक सका। इसमें सन्देह नहीं कि पियानो की अपनी विशेषताएं थीं – क़ीमती लकड़ी, उत्तम तार, अच्छे से अच्छे वियना के कारीगरों की अद्‌भुत कारीगरी, विविध स्वरों की व्यवस्था। लेकिन उक्रइनी बाँसुरी की भी विशेषताएं थीं – वह अपने ही देश, अपनी

ही भूमि की चीज़ थी और उसके चारों ओर उक्रइनी ग्रामक्षेत्रों का वातावरण था।

जब तक इयोहिम ने बाँसुरी को चाकू से काट कर लाल जलते हुए तारों से भेदा न था तब तक वह एक छोटी-सी नदी के तट पर खड़ी खड़ी लहरों से खेला करती थी। बच्चा उस नदी को जानता था, उसे प्यार करता था। उसमें बाँसुरी के प्रति एक स्वाभाविक आकर्षण था। जब तक उक्रइन वादक की तेज़ निगाहें नदी के ऊंचे-ऊंचे किनारे पर उगी हुई सरपत की झाड़ी पर न पड़ी थीं तब तक बाँसुरी को उसी उक्रइनी सूर्य ने गर्मी और उसी उक्रइनी हवा ने शीतलता दी थी। विदेशी बाजे के लिए उस साधारण-सी देहाती बाँसुरी पर विजय पाना टेढ़ी खीर थी क्योंकि यही वह बाँसुरी थी जिसकी ध्वनि ने शामों की रहस्यमयी फुसफुसाहटों, बीच-वृक्षों की मर्मर और उक्रइन के प्राकृतिक वैभव के बीच – जब निद्रा उसे अपनी गोद में लेने की तैयारी करने लगती – उसे पहले-पहल मन्त्रमुग्ध किया था।

पानी पोपेल्स्काया भी इयोहिम की प्रतिद्वन्द्विता न कर सकी। यह सही है कि उसकी कोमल उंगलियाँ

इयोहिम की उंगलियों से तेज़ चलती थीं, उनमें लचक अधिक थी, पियानो पर बजायी गयी धुन ज़्यादा सुरीली थी और स्वयं फ़ालीन क्लाप्स ने अपनी छात्रा को इस बाजे पर इतना अधिक अभ्यास कराया था कि वह उसमें पटुता प्राप्त कर चुकी थी फिर भी बाँसुरी का अपना माधुर्य था। और, इयोहिम का संगीत के प्रति एक प्रकृत आकर्षण था। वह प्रेम भी करता था और उसे दुख भी उठाने पड़ते थे और इन दोनों ही दशाओं में सान्त्वना पाने के लिए वह प्रकृति की ओर निहारता था। प्रकृति ने ही उसे उसकी सीधी-सादी धुनें सिखाई थीं—वन वृक्षों की मर्मर, स्टेपी में उगी हुई घासों की सरसराहट और वे पुराने, बहुत पुराने गाने जो उसे उस समय सुनाये जाते थे जब वह पालने में झूलता था, जब वह छोटा-सा बच्चा था।

नहीं, साधारण-सी उक्रइनी बाँसुरी पर विजय पाना वियना के पियानो के लिए आसान न था। मुश्किल से एक मिनट गुज़रा होगा कि चचा मक्सिम ने अपनी बैसाखी से फ़र्श भड़भड़ाया। और जब आन्ना मिखाइलोव्ना ने घूम कर बच्चे के पीले पड़ गये चेहरे की तरफ़ देखा तो उसे उसमें ठीक वही भाव दिखाई पड़े

जो उस स्मरणीय दिवस पर दृष्टिगोचर हुए थे जब वह बसन्त में पहली बार घर के बाहर लाया गया था और बैठे बैठे घास पर गिर कर बेहोश हो गया था।

इयोहिम ने बच्चे पर एक करुण दृष्टि डाली और "जर्मन संगीत" पर एक तिरस्कार सूचक नज़र फेंकते हुए वह घर से बाहर हो गया। फ़र्श पर से उसके बूटों की खट-खट सुनाई पड़ती रही।

८

अपनी विफलता से माँ को रुलाई आ गयी और शर्म भी। जिस "उदार पानी" पोपेल्स्काया के संगीत पर "सर्वोत्तम समाज" अपनी करतल-ध्वनि से सारे वातावरण को गुँजा देता था, उसी की इतनी निर्मम हार! और हार भी किससे? उस दो टके के सईस, इयोहिम, और उसकी सड़ियल बाँसुरी से। अपने अभागे संगीत को समाप्त कर चुकने के पश्चात् उसने इयोहिम की आँखों में तिरस्कार के जो भाव देखे थे उनके विचार मात्र से ही उसका चेहरा तमतमा उठा था। वह अपने अन्तरतम से "उस दुष्ट किसान" से घृणा करने लगी।

फिर भी हर शाम जब उसका छोटा बच्चा दौड़ कर अस्तबल तक जाता तो वह अपनी खिड़की खोल कर वहीं खड़ी हो जाती। पहले-पहल तो वह बाँसुरी की धुन सुनती और इस बात का प्रयत्न करती कि इस "बेवक़ूफ़ी से भरे हुए बाँसुरी वादन" के उपहासास्पद स्थलों को चुन चुन कर एकत्र करती जाय, मगर धीरे-धीरे यही बाँसुरी उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती गयी। वह स्वयं न जान सकी कि यह हुआ कैसे! और शीघ्र ही वह समय भी आ गया जब वह बड़ी बेसब्री से सतृष्ण एवं स्वप्निल स्वर-माधुर्य का पान करने के लिए खड़े खड़े घंटों बाँसुरी की धुन सुना करती। कभी कभी उसके आकर्षण के वशीभूत होकर उसे यह सोच कर आश्चर्य भी होता कि आखिर वह कौनसी बात है जो बाँसुरी में जादू पदा करती है। किन्तु जैसे ही जैसे समय बीतता गया उसे उसके प्रश्न का उत्तर मिलता गया—ग्रीष्मकालीन सायंकाल की नीलिमा में, गोधूलि की झिलमिल परछाइयों में, संगीत और चातुर्दिक प्रकृति के स्वर-साम्य में।

हाँ, उसकी गतिविधि इस बात की सूचक थी कि अब वह पूरी तरह से पराजित हो चुकी है। इस संगीत

का अपना माधुर्य था, अपनी विशेषता थी, अनुभूति की अपनी गहराई थी, कविता की कल्पना थी और कुछ ऐसा जादू था जिसका शुष्क अभ्यास से कोई संबंध न था।

ठीक, बिल्कुल ठीक। इस संगीत का रहस्य उस आश्चर्यजनक बन्धन में छिपा था जिसने अतीत की स्मृतियों को अतीत की साक्ष्य-प्रकृति से बांध रखा था, उस प्रकृति से जो कभी मरती नहीं और संगीत के रूप में मनुष्य तक पहुँचते पहुँचते जिसकी वाणी अवरुद्ध नहीं होती। और भद्दे बूटों और सींग जैसे हाथों वाला एक रूखा व्यक्ति इयोहिम इस अद्भुत स्वर-साम्य को, प्रकृति की इस वास्तविक अनुभूति को अपने हृदय में सँजोये रहता, छिपाये रहता।

और पानी पोपेल्स्काया का अमीराना घमंड इस कृषक सईस के समक्ष नत हो गया। अब वह भूल जाती उसके गन्दे कपड़ों को और उसके शरीर से आती हुई तारकोल जैसी बदबू को। सुरों के माध्यम से उसकी कल्पना के समक्ष इयोहिम का सदय मुखमंडल, उसकी भूरी-भरी विनीत आँखें और मुस्कराहट में से झलकता हुआ उसका वह सलज्ज हास्य साकार हो उठता, जो उसकी झुकी हुई

मूछों के कारण प्रायः आधा छिप जाता था। कभी कभी ऐसे भी क्षण आ जाते जब क्रोध से उसके गाल लाल हो उठते क्योंकि उसे इस बात की याद आ जाती कि अपने ही बच्चे की प्रसन्नता के लिए उसने एक मामूली किसान से होड़ लगायी है और इस प्रतिद्वन्द्विता में किसान की विजय हुई है।

ऊपर वृक्षों की मर्मर, फिर शाम के समय गहरे नीले आसमान में सितारों की जगमग और पृथ्वी पर गिरती हुई उनकी हल्की नीलकृष्ण परछाईं—यह क्रम बराबर बना ही रहा। दिन प्रतिदिन इयोहिम का संगीत युवा माँ के हृदय में करुण रस का उद्रेक करता गया, दिन प्रतिदिन वह उसकी महानता के प्रति घुटने टेकती गयी और दिन प्रतिदिन उसके सीधे-सादे, निर्विकार एवं अकृत्रिम संगीत-सौन्दर्य का रहस्य हृदयंगम करती गयी।

६

हाँ, इयोहिम की महानता का रहस्य उसके भावों की गहराइयों और निष्छलता में छिपा था। और माँ! क्या इस भावुकता का कोई अंश स्वयं उसे नहीं प्राप्त था? फिर क्यों उसका हृदय भीतर ही भीतर इतना धधक

रहा था, धड़क रहा था। क्यों वह अपन आँसू न रोक सकी? आखिर क्यों?

माँ के हृदय में अपने दुर्दैव-पीड़ित पुत्र के प्रति जो प्रेम था क्या वह उसकी सच्ची अनुभूति न थी? फिर भी बालक माँ के पास से भाग कर इयोहिम के पास उठना-बैठना अधिक पसन्द करता और माँ न जानती कि वह अपने बच्चे को उतना खुश कैसे करे जितना खुश वह इयोहिम के पास बैठ कर होता था।

जब माँ को याद आ जाती कि उसका संगीत बच्चे के चेहरे पर कितनी व्यथाएं अंकित करता था तो उसकी आँखों में आँसू आ जाते। यह वेदना कभी कभी तो इतनी प्रखर हो उठती कि उसे सिसकियाँ तक आने लगतीं जिन्हें वह मुश्किल से रोक पाती।

अभागी माँ! बच्चे का अंधापन स्वयं उसकी अपनी अदम्य व्यथा बन गया। यही कारण था कि उसकी विनम्रता उसकी अस्वस्थता में बदल गयी। अब बच्चे की प्रत्येक पीड़ा उसके हृदय में अनेकानेक दुखद कल्पनाओं को जन्म देकर उसके हृदय को व्यथित करने लगी और इसी लिए वह कृषक बाँसुरी वाले की प्रतिद्वन्द्विनी बनी। यह बड़ी विचित्र बात थी

क्योंकि यदि ये विषम परिस्थितियाँ न होतीं तो निरंतर पीड़ाएं सहने के स्थान पर वह केवल क्रोध करके अथवा भृकुटियाँ तान कर अपने हृदय को हल्का कर लेती।

दिन बीतते गये लेकिन माँ को शान्ति न मिली। हाँ, प्रत्येक दिन बीतने के साथ ही साथ उसे अप्रत्यक्ष रूप से कुछ लाभ अवश्य हो जाता। धीरे-धीरे वह अपने में उसी संगीत, उसी मधुरिमा का अनुभव करने लगी जो इयोहिम के वादन से प्रस्फुटित होकर उसके अन्तस् पर छा रही थी। इस नयी अनुभूति के साथ ही साथ उसमें नयी आशा का भी संचार हुआ। कभी कभी ऐसा भी होता कि किसी दिन शाम को बड़े सहसोद्भूत विश्वास के साथ वह पियानो पर बैठती और यह निश्चय करती कि वह पियानो की गत से बाँसुरी की ध्वनि दबा देगी, शान्त कर देगी। परन्तु हर बार भय तथा लज्जा की अनुभूति उसके इस निश्चय में बाधक बनती और उसका संकल्प धरा का धरा रह जाता। उसकी कल्पना के समक्ष अपने बच्चे का दुखी चेहरा और इयोहिम की तिरस्कारसूचक दृष्टि साकार हो उठती, उसके गाल अपनी अंधेरी बैठक में लाल हो उठते और उसके

हाथ किसी आकांक्षा को लिए हुए मूक पियानो पर लहराने लगते, उस पियानो पर जिसे छूने की भी हिम्मत उसे न होती...

फिर भी, जैसे ही जैसे दिन बीतते गये वह अपने भीतर एक नयी शक्ति का अनुभव करती गयी। जब कभी बच्चा घूमने चला जाता अथवा बाग़ के किसी सुदूर कोने में अकेला खेलता होता तो वह पियानो पर अभ्यास करना आरम्भ कर देती। लेकिन अपने प्रथम प्रयासों से उसे कोई सन्तोष न हुआ। उसके हाथ उसके हृदय की अनुभूतियों के अनुरूप न चलते और इस प्रकार जो ध्वनि निकलती वह उसकी मानसिक स्थिति के अनुकूल न होती। धीरे-धीरे वह वादन में रुचि लेने और अपने अन्तस् में और अधिक शक्ति एवं लगन का अनुभव करने लगी। किसान के सबक़ बेकार नहीं हुए। माँ का प्रेम और उसकी भावुक अनुभूति ने अभ्यास द्वारा इन पाठों में पटुता प्राप्त करने में उसकी बड़ी सहायता की। यह वह अनुभूति थी जिसकी पृष्ठभूमि में माँ यह समझ लेती थी कि उसके पुत्र को कौनसी वस्तु सबसे अधिक प्रिय है। अब उसकी उंगलियों से जटिल और उलझी हुई गतें न निकलतीं अपितु सीधी-सादी मधुर उक्रइनी स्वर-लहरियाँ

बह बह कर बन्द कमरों में गूँजने लगतीं जिनसे माँ के हृदय में मृदुता बिखर जाती।

अन्ततः माँ को खुली प्रतिद्वन्द्विता में भाग लेने का भी साहस हुआ। अब सायंकाल के समय इधर बैठक से और उधर इयोहिम के अस्तबल से निकलने वाली सुर-ध्वनियों में होड़ लगने लगी। एक ओर घास-फूस से आच्छादित छतों वाले अस्तबल से आती हुई बाँसुरी की कोमल धुन कानों में पड़ती तो दूसरी ओर बैठक की खुली खिड़कियों से निकलती और चाँदनी में लहराते हुए बीच-वृक्षों से होती हुई नयी-नयी सुरीली तानें। फिर समाँ बंध जाता।

पहले-पहल न तो बच्चे ने ही जागीर से आते हुए उस "जटिल" संगीत की ओर कोई ध्यान दिया और न इयोहिम ने ही, क्योंकि दोनों ही उसके सख्त विरोधी थे। जब कभी इयोहिम बाँसुरी बजाते बजाते कुछ क्षण के लिए रुक जाता तो बच्चे की तेवरियाँ चढ़ जातीं और वह बड़ी बेसब्री के साथ चिल्ला उठता—

"तुम बजाते क्यों नहीं?"

इसके एक ही दो दिन बाद से इयोहिम बजाते बजाते अक्सर रुकने लग गया। वह बार-बार अपनी

बाँसुरी रख देता और बैठक से आती हुई सुर-लहरी बड़े ध्यान से सुनने लगता। धीरे धीरे बच्चा भी उधर कान देने लगा। अब वह अपने मित्र से बाँसुरी बजाने की ज़िद न करता। और वह क्षण भी आ गया जब इयोहिम ने साश्चर्य कहा—

"उसे सुनो—कितना सुन्दर है? है न?"

और, एक दिन बड़े ध्यान के साथ पियानो सुनते सुनते, इयोहिम ने बच्चे को उठा लिया और बाग़ से होता हुआ उसे बैठक की खिड़की तक ले गया।

इयोहिम ने सोचा था कि "उदार पानी" स्वयं अपने मन-बहलाव के लिए बजा रही है और इस बात पर ध्यान न देगी कि यहाँ उसके सुनने वाले भी हैं। किन्तु आन्ना मिखाइलोव्ना भी, रुक रुक कर, अपने प्रतिद्वन्द्वी, इयोहिम, की बाँसुरी सुनती रही। जब उसने समझा कि वह बन्द हो चुकी है तो उसे अपनी विजय का आभास होने लगा और उसका हृदय खुशी से नाच उठा।

इयोहिम के विरुद्ध आन्ना मिखाइलोव्ना का सारा द्वेष इस विजय की ख़ुशी में समाप्त हो गया। वह बड़ी प्रसन्न थी और अनुभव कर रही थी कि इस प्रसन्नता का एकमात्र कारण है इयोहिम, क्योंकि अप्रत्यक्षतः उसी ने उसे यह सिखाया

था कि बच्चे को किस प्रकार वापस प्राप्त किया जा सकता है। यदि अब वह बच्चे को नये-नये प्रभावों की दौलत दे सकी तो वे दोनों ही अपने शिक्षक, कृषक बाँसुरी वाले को धन्यवाद देंगे।

१०

मौन भंग हुआ। अगले दिन बच्चे ने बड़ी उत्सुकता से धीरे-धीरे उस बैठक में प्रवेश किया जहां वह विचित्र नवागन्तुक–पियानो–के क़दम रखने के बाद से कभी न गया था। कल सायंकाल इस नवागन्तुक के अन्तस् से जो गान फूटे थे उन्होंने उसके कोमल कानों पर विजय प्राप्त की थी और उसका द्वेष बहा कर फेंक दिया था। अब उसे पियानो से पहले जैसा भय न लगा और वह उसके पास तक चला आया। लेकिन एक-आध क़दम दूर ही खड़ा खड़ा वह कुछ सुनता रहा । कमरे में दूसरा कोई न था। माँ, यद्यपि बग़ल वाले कमरे में सिलाई कर रही थी, फिर भी साँस रोके उसकी प्रत्येक गतिविधि देख रही थी और उसकी प्रत्येक गति तथा मुख-मुद्रा में होने वाले परिवर्तनों पर निगाह रखे थी।

जहाँ वह खड़ा था वहीं से उसने अपना हाथ बढ़ाया और पियानो की चिकनी-चिकनी सतह छुई और फिर डरपोक की भांति तुरन्त पीछे हट गया। उसने बार बार यही किया। उसके बाद वह थोड़ा आगे बढ़ा, थोड़ा और नज़दीक, और ध्यानपूर्वक बाजे की जाँच शुरू कर दी। उसने बाजे के चारों ओर उसे छू-छू कर देखा और जहाँ पैर के तार जाते थे वहां भी आज़माइश की। अन्ततः उसकी उंगलियों ने सुर-कुंजिकाओं का स्पर्श किया।

हवा में एक हल्का-सा कम्पित सुर गूँज गया। लेकिन माँ के कानों को सुनाई पड़ने वाली गूँज समाप्त हो जाने के बाद भी बच्चा कुछ न कुछ सुनता ही रहा। और फिर उत्सुकतापूर्वक उसने दूसरी सुर-कुंजिका दबायी। इसके बाद उसका हाथ एक ओर से लेकर दूसरी ओर तक घूमा और एक नयी स्वर-लहरी पैदा हो गयी। वह प्रत्येक सुर-कुंजिका से पैदा होने वाली ध्वनि बड़े ध्यान से उस समय तक सुनता रहता जब तक कि वह समाप्त न हो जाती। और, उसके बाद दूसरी सुर-कुंजिका दबाता। जब वह इन ध्वनियों को सुनने लगता तो उसके चेहरे से न केवल बाह्य अभिरुचि की ही अभिव्यक्ति होती अपितु

प्रसन्नता भी झलकने लगती। ऐसा लगता कि वह एक एक सुर को सुन कर खिला जा रहा है और एक महान कलाकार की भाँति संगीत के तत्वों, सुर-लहरियों और गतों के पृथक्-पृथक् ताल-मेलों को हृदयंगम कर रहा है।

प्रत्येक सुर में, उसकी ध्वनि के अलावा, अन्धा बच्चा कुछ अन्य स्पष्ट विशेषताओं को भी समझने का प्रयत्न करता। जब उसकी उंगलियाँ ऊपरी पंक्ति की सुर-तालिका की किसी मधुर सुर-कुंजिका को छूतीं तो हर्षोल्लासयुक्त उसका चेहरा ऊपर उठ जाता और लगता कि सुर-ध्वनि के आकाश मार्ग में जाने के साथ ही साथ उसके कान भी उसी ओर लग गये हैं। जब वह कोई गम्भीर सुर निकालता तो स्वर-लहरियों को सुनने के लिए अपना सिर नीचे झुका देता, मानो उसे यह अनुभूति होती कि यह भारी सुर नीचे, और नीचे, यहाँ तक कि फ़र्श पर होकर लुढ़केगा और मकान के किसी दूर कोने में जाकर विलीन हो जायगा।

११

संगीत विषयक ये समस्त प्रयोग चचा मक्सिम की निगाह में कोई बड़े महत्व के न थे। बच्चे की

प्रतिभा के संबंध में भी उनकी राय स्पष्ट न थी। एक ओर यह संगीत-प्रेम बच्चे की दैवी प्रतिभा का सूचक था और एक ऐसे भविष्य की ओर इशारा कर रहा था जिस तक पहुँचना सम्भव था। किन्तु दूसरी ओर उस भविष्य की कल्पना ने इस पुराने सिपाही के हृदय में निराशा की अनुभूति पैदा कर दी थी।

चचा मक्सिम जानते थे कि संगीत एक महान शक्ति है। संगीत से ही अन्धा वादक विशाल जनसमूह के हृदयों में परिवर्तन ला सकेगा – उसके संगीत को सुनने के लिए सैकड़ों सुन्दरियाँ और अच्छी पोशाकें डाटे बाँके-छबीले एकत्र होंगे, वह उनके समक्ष वाल्ट्स और नाकचूर्न्स संगीतों की तानें छेड़ेगा (सच्ची बात तो यह है कि चचा मक्सिम को इन "वाल्ट्सों" और "नाकचूर्न्स" के अलावा और कुछ मालूम ही न था) और श्रोता रूमालों से आँसू पोंछते दिखाई पड़ेंगे। लेकिन बेकार है यह सब! चचा मक्सिम ने बच्चे से इसकी आशा थोड़े ही कर रखी थी! परन्तु किया क्या जाय? लड़का अन्धा था। जिस चीज़ को वह सफलतापूर्वक निभा सके उसे वही करने दिया जाय! और अगर उसे संगीत ही से प्रेम है तो फिर गाना क्यों न गाये! गाना कानों के परदों को झनझनाता

नहीं अपितु गहराई तक पहुँचता है। गाने में कहानी चलती है, वह मस्तिष्क को सोचने-विचारने और दिल को साहस जुटाने के लिए विवश करता है।

"इयोहिम, सुनो," एक दिन सायंकाल पेत्रो के साथ मक्सिम अस्तबल में आते हुए बोला, "क्या तुम अपनी यह पपीरी नहीं बन्द कर सकते? चरवाहे छोकरों के लिए तो यह ठीक है, लेकिन तुम तो ख़ुदा न ख़ास्ता बड़े हो गये हो। उस बेवकूफ़ मार्या ने भी क्या बछड़ा बना रखा है तुम्हें? हुँह! तुम्हें शर्म आनी चाहिए। यह भी कोई बात हुई कि लड़की खिसकी और तुम लगे पपीरी पर पें-पें करने, जैसे पिंजड़े में चिड़िया करती है।"

रात के अंधेरे में इयोहिम पान मक्सिम के अकारण क्रोध पर खीसें बाकर रह गया। बाक़ी सब तो वह सह गया मगर चरवाहे छोकरों वाली बात उसके गले-तले न उतरी। उसने विरोध करते हुए कहा—

"जानते भी हो पान मक्सिम, ऐसी बाँसुरी सारे उक्रइन में न मिलेगी। चरवाहे छोकरे! हुँह। वे क्या जानें संगीत किस चिड़िया का नाम है। उन्हें तो सीटी बजानी आती है, सीटी। इस तरह की बाँसुरी... ज़रा ध्यान से सुनिये!"

इयोहिम थोड़ा रुका, बाँसुरी मुँह से लगायी और उसपर उंगलियाँ दौड़ाने लगा। बाँसुरी से सुरीली धुन निकल निकल कर वायुमंडल में गूंजने लगी। मगर मक्सिम! वे ज़मीन पर थूकते जा रहे थे।

"हे भगवान! जो कुछ इसके दिमाग़ में कभी था भी यह तो वह भी गंवा बैठा। तुम्हारी पें-पें पें-पें मुझे नहीं चाहिए। सभी एक जैसे हैं—क्या तुम्हारी यह पपीरी क्या औरतें। और वह तुम्हारी मार्या वह तो लातों की देवी है लातों की। कोई गाना जानते हो तो सुनाओ—कोई अच्छा पुराना गाना। उसमें कोई तुक भी है।"

मक्सिम यात्सेन्को एक उक्रइनी था, किसानों और तालुके के नौकरों-चाकरों से मृदु व्यवहार करता था, और उनसे सारी बातें साफ़-साफ़ कह देता था, कोई लगी-लिपटी न रखता था। यह ठीक था कि कभी कभी वह उनपर बरस पड़ता था, मगर उसके दिल में कोई बात न रह जाती थी। इसी लिए वे उसकी इज़्ज़त करते थे और उससे डरते न थे।

"गाना?" इयोहिम ने उतर दिया, "क्यों नहीं? कभी मैं भी गाया करता था। और अच्छा गाता था, वही

अपने किसानी गाने। आप उन्हें भी पसन्द न करेंगे।"
इस आख़िरी बात में कुछ व्यंग्य की झलक थी।

"बेवकूफ़ी की बातें मत करो," चचा कुछ तेज़ पड़े, "अच्छा गाना—वह भी क्या तुम्हारी पपीरी की पें-पें है। अगर कोई गा सकता है तो ज़रूर गाये। पेत्रो, जब तक इयोहिम गाना गाये तब तक हम उसे सुनते रहें! है न? तुम उसे समझ लोगे न?"

"क्या यह दासों की बोली में होगा?" बच्चा बोला, "उसे तो मैं समझ लेता हूँ।"

चचा मक्सिम ने आह भरी। उनकी प्रकृति में बहुत कुछ प्रेम-साधना छिपी हुई थी। एक बार उन्होंने यह भी सोचा था कि काश कज़्ज़ाक गौरव के वे पुराने दिन फिर वापस आ जाते।

"बेटे, वे दासों वाले गाने नहीं हैं," उन्होंने बच्चे की तरफ़ मुड़ते हुए कहा, "वे स्वतंत्र और वीर लोगों के गान हैं। तुम्हारी माता के पूर्वज इन्हें सारे स्टेपी में गाया करते थे—द्नीपर और दान्यूब की तलहटी में और काले सागर के किनारे किनारे... किसी दिन तुम यह सब कुछ समझ लोगे। इस समय मुझे जिस बात से परेशानी हो रही है..."—और सहसा उसकी बातों

से परेशानी के लक्षण प्रकट होने लगे—"वह तो एक दूसरी ही चीज़ है।"

हाँ ज़रूरत थी एक अन्य चीज़ की—समझ की। और चचा को भय था कि बच्चे में उसकी कमी है। उन्होंने विचार किया कि वीर रस से ओत-प्रोत प्राचीन गानों में जिन स्पष्ट चित्रों की झलक मिलती है वे केवल दृष्टि के माध्यम से ही हृदय-पट पर उतरते हैं और चूंकि बच्चा उस दृष्टि-प्रसाद से वंचित है अतएव वह लोक-कविता की भाषा न समझ सकेगा। परन्तु यहाँ एक बात और थी जिसपर मक्सिम ने ध्यान न दिया था। क्या प्राचीन बयान, उक्रइनी कबज़ार और बन्दूरिस्त* अधिकतर अंधे नहीं होते थे? यह भी ठीक है कि अन्धे होने के साथ-साथ ज़्यादातर वे दुर्भाग्य के भी शिकार हो जाते थे और भीख माँगने के लिए बन्दूरे की शरण लेते थे। लेकिन इन घुमक्कड़ गवैयों में सब के सब सिर्फ़ रोटी के टुकड़ों पर गाना शुरू कर देने वाले भिखारी ही न थे। और न सब ऐसे ही थे जिनकी आँखें बुढ़ापे में जाती रही हों। अंधापन, एक अभेद्य आवरण द्वारा मनुष्य

*बयान, कबज़ार तथा बन्दूरिस्त घुमक्कड़ गवैये होते थे—अनु०

का संबंध दृष्ट संसार से विच्छिन्न कर देता है। यह आवरण मस्तिष्क के लिए एक दमनकारी भार है जिसके कारण संसार को समझना टेढ़ी खीर बन जाता है। किन्तु बहुत-सी चीज़ें ऐसी होती हैं जिन्हें मनुष्य पैतृक सम्पत्ति की भांति अपने पूर्वजों से प्राप्त करता है और बहुत-सी ऐसी जो दृष्टि-इन्द्रिय द्वारा नहीं अन्य इन्द्रियों के माध्यम से सीखी जाती हैं। इन्हीं की सहायता से मस्तिष्क अपना एक जीवित संसार निर्मित करता है जो होता अन्धकारपूर्ण ही है, परन्तु उसमें होती है कवि की कल्पना।

१२

मक्सिम तथा पेत्रो खर पतवार के एक ढेर पर बैठ गये। इयोहिम ने भी बढ़ कर अपनी बेंच खींच ली और उसपर जम गया (उसकी मानसिक स्थिति के अनुकूल यही एक सर्वोत्तम पोज़ था) और एक क्षण सोचने के बाद उसने गाना शुरू कर दिया। इत्तिफ़ाक़ से अथवा प्रेरणावश, जो भी हो, उसने जो गाना उठाया वह चचा मक्सिम की रुचि के अनुकूल था। यह पुराने इतिहास के पन्नों का एक दृश्य था—

ऊंची ऊंची
इन पहाड़ियों पर
अनाज पक गया—
लोग झुक गये,
काटने लगे! *

जिस किसी व्यक्ति ने इस अद्भुत लोक-गीत को एक बार भी सुना है—बशर्ते कि वह उस ढंग से गाया गया हो जैसे कि उसे गाना चाहिए—वह इसकी धुन को कभी नहीं भूल सकता: स्वरों का उतार-चढ़ाव, उनकी ऊँची उठान, शिथिल गति और ऐतिहासिक संस्मरणों की करुण झलक इस गाने में बराबर मिलती रही है। गाने में घटनाओं का ज़िक्र, युद्ध भूमि और मारकाट का उल्लेख और साहसी कार्यों का कोई वर्णन न था। गाने में ऐसी किसी कथा पर प्रकाश नहीं पड़ता था जिसमें कोई कज़्ज़ाक अपनी प्रियतमा से बिछुड़ा हो अथवा सूखी ज़मीन पर डाकुओं द्वारा किसी पर आक्रमण किया गया हो अथवा दान्यूब पर और विशाल नीले समुद्र के आर-पार की किसी यात्रा वर्णन हो। इस गान में एक चलता-फिरता

* हिन्दी रूपांतरकार गोपी कृष्ण शर्मा 'गोपेश'।

चित्र था जो एक क्षण के लिए उकइनी की स्मृति में घूम गया – उसमें एक सतृष्ण कल्पना थी, ऐतिहासिक अतीत का एक छोटा-सा स्वप्न था। गाने का कथानक आज के साधारण वातावरण के बीच शुरू होता है जिसमें धूमिलता है और ऐसा कारुण्य जो अदृष्ट हो गये भूतकाल की स्मृतियों से ओत-प्रोत है। अदृष्ट – हाँ, परन्तु ऐसा अदृष्ट नहीं जिसका नामोनिशान तक बाक़ी न हो। यह भूतकाल आज भी उन क़ब्रों और कब्रिस्तानों में जीवित है जहाँ कज़्ज़ाकों की हड्डियाँ गड़ी हैं, जहाँ रात्रि के गहन अन्धकार में विचित्र प्रकाश दिखाई पड़ता है, जहाँ कराहने की भारी-भारी आवाज़ें सुन पड़ती हैं। अब ये सारी बातें केवल पौराणिक गाथाओं तक, अथवा इस गाने में ही रह गयी हैं और केवल कभी कभी ही सुनाई देती हैं –

ऊंची ऊंची
इन पहाड़ियों पर
अनाज पक गया –
लोग झुक गये,
काटने लगे –
और नीचे
तराइयों के मैदान हरे –
देख लो तो जी बहुत भरे –

कि

घोड़ों पर सवार कज़्ज़ाक

उधर से गुज़र रहे देखो —

कि

घोड़ों पर सवार कज़्ज़ाक

उधर से गुज़र रहे देखो!

हरीतिमा से आच्छादित टीलों के किनारे किनारे अनाज काटा जा रहा है और सवार कज़्ज़ाकों की सेना चली जा रही है।

मक्सिम यात्सेन्को अपने चारों ओर की दुनिया को भूल गया। करुण स्वर-लहरी गाने के भीतर निहित कथा के साथ एकाकार हो गयी और उसकी कल्पना के समक्ष बीते हुए जमाने का एक दृश्य आ कर खड़ा हो गया — छोटे-छोटे पर्वतों से सटे हुए खेत, गोधूलि-बेला का हल्का प्रकाश, अनाज काटने वालों की झुकी झुकी मौन आकृति, कज़्ज़ाकों की अनेक पंक्तियाँ जो उपत्यका के सायंकालीन धुंधले प्रकाश में एक के बाद एक आगे बढ़ रही हैं —

टोली कज़्ज़ाकों की

सरदार दोरोशेन्को

घोड़े पर आगे है,

नेतृत्व करता है
शान से, साहस से!

गाने की धुन देर तक गूँजती रही, फिर हल्की पड़ी, और अन्ततः लुप्त हो कर श्रोताओं की कल्पना के समक्ष प्राचीन इतिहास के नये-नये दृश्यों को साकार करती गयी।

१३

बच्चे ने गाना सुना और उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ झलकने लगीं। उसकी मुद्रा विचारशील हो गयी। और जब गाने में उसने टीले और अनाज काटने की बात सुनी तो उसने कल्पना की कि वह नदी के किनारे वाले ऊँचे टीले पर (जिसे वह जानता था) चढ़ा है। हाँ, यही वह जगह थी। उसने यह स्थान वहां नीचे बहती हुई नदी की छपाक सुन कर पहचाना था। यहाँ नदी की लहरें टीले के पत्थरों से टकरा-टकरा कर इतने धीरे धीरे हहरा रही थीं कि उनकी आवाज़ प्रायः सुनाई तक न पड़ती थी। और वह अनाज की कटाई के विषय में भी जानता था। वह हँसियों की ध्वनि और कट कर गिरती हुई बालियों की सर्र-सर्र सुन सकता था।

किन्तु जब गाने का विषय बदला तो अन्धे बच्चे की कल्पना तुरन्त उसे पर्वतों की उंचाइयों से उपत्यका की गहराइयों में ले गयी।

हँसियों की ध्वनि लुप्त हो चुकी थी परन्तु वह जानता था कि अनाज काटने वाले अब भी वहीं हैं, उसी टीले पर। हाँ, वह उनकी आवाज़ ज़रूर नहीं सुन सकता था क्योंकि वे उंचाई पर थे, पाइन वृक्षों जितनी उंचाई पर, जिनकी मर्मर वह टीले के नीचे खड़ा होकर सुन सकता था। और यहाँ नीचे, जहाँ नदी बह रही थी... वहीं से दौड़ते हुए घोड़ों की टापें सुनाई पड़ रही थीं... बहुत से घोड़े, भागते हुए, अन्धकार में विलीन हो रहे थे। ये थे सवार कज़्ज़ाक।

कज़्ज़ाक—हाँ वह उनके बारे में भी जानता था। जब कभी बूढ़ा "ह्वेदको" जागीर पर आता तो लोग उसे "पुराना कज़्ज़ाक" कह कर पुकारा करते थे। कई बार इसी ने अन्धे बच्चे को अपने घुटनों पर बिठा कर उसके बालों पर अपने हाथ फेरे थे। और जब बच्चे ने उसके चेहरे को टटोलने के लिए उसके मुँह पर स्वयं अपना हाथ रखा था, जैसा कि वह सभी के साथ किया करता था, तो उसकी भावुक उंगलियों ने उसमें पड़ी हुई झुर्रियों, नीचे झुकी हुई मूँछों, और

पिचके हुए उन गालों का स्पर्श किया था जिन पर वृद्धावस्था की व्यथाएँ अंकित हो रही थीं। जब वह गाने में टीले के नीचे चलते हुए कज़्ज़ाकों के बारे में सुन रहा था उस समय उसने इसी प्रकार के कज़्ज़ाक की कल्पना की थी। "ह्वेदको" की भाँति लम्बी मूँछों वाले बूढ़े और झुकी हुई कमर वाले कज़्ज़ाक ही उसे इस समय गान के सवार लग रहे थे। उसे प्रतीत हो रहा था कि मूक, निराकार परछाइयाँ अँधेरे में से निकल निकल कर आगे बढ़ रही हैं, रो रही हैं, वैसे ही जैसे हमेशा ह्वेदको रोया करता था। रो रही हैं शायद इसलिए कि इयोह्मि का यह करुण संगीत पर्वतों और उपत्यकाओं, सभी स्थानों पर, छा गया है। इयोह्मि का यह गान उस "निश्चिन्त कज़्ज़ाक युवक" के बारे में था जो अपनी जवान पत्नी को तो नहीं अपितु मार्च के समय पाइप पीने और युद्ध की विभीषिकाओं को गले लगाना अधिक पसन्द करता था।

मक्सिम को इस बात के लिए आश्वस्त करना मामूली बात थी कि यद्यपि बच्चा अन्धा है फिर भी उसकी भावुक आत्मा संगीत की स्वर-लहरी के स्पर्श से झनझना रही है।

तीसरा अध्याय

१

मक्सिम की योजनानुसार अन्धे लड़के को सभी सम्भव क्षेत्र में अपनी सहायता अपने आप करने के लिए छोड़ दिया गया था। इसके परिणाम बहुत अच्छे रहे। जब वह घर के भीतर रहता तो उसके चेहरे पर असहायता के भाव कभी न दिखाई पड़ते। वह पूर्ण विश्वास के साथ अपने कमरे में इधर-उधर घूमता, चहलक़दमी करता, कमरे को साफ़-सुथरा रखता और अपने कपड़ों तथा खेल-खिलौनों को यथास्थान उठाया-धरा करता। जहाँ तक सम्भव हो सकता वह व्यायाम भी कर लिया करता। व्यायाम करने का उसका एक विशेष ढंग था। जब वह पाँच वर्ष का हुआ तो मक्सिम ने उसे एक छोटा-सा घोड़ा ला दिया। यह एक सीधा-सादा और नुक़सान न पहुँचाने वाला जानवर था। पहले तो माँ ने यह कल्पना तक न की थी कि अन्धा बच्चा घोड़े पर भी चढ़ सकता है। "यह पूरा-पूरा पागलपन है," उसने अपने भाई से कहा था। किन्तु मक्सिम ने बच्चे को घुड़सवारी सिखाने

में अपनी सारी ताक़त लगा दी और दो-तीन महीनों में ही लड़का आसानी से घोड़े पर चढ़ कर इधर-उधर घूमने लगा। हाँ, जहाँ कहीं रास्ता मुड़ता था वहाँ उसे इयोहिम के निर्देशन की आवश्यकता पड़ जाती थी।

बालक के अन्धेपन ने उसके शरीरसंवर्द्धन के मार्ग में कोई बाधा नहीं डाली। उसके आचरण पर भी इसका प्रभाव कम से कम ही पड़ा। उम्र को देखते हुए वह अधिक लम्बा था और शरीर से स्वस्थ। उसकी आकृति पांडुर होते हुए भी कोमल थी, व्यंजक थी। काले-काले बालों के कारण उसका श्वेत मुख और भी स्पष्ट हो गया था और उसकी बड़ी-बड़ी, काली, स्थिरप्राय आँखों से ऐसी अनूठी मुद्रा व्यंजित होती थी कि देखने वालों की निगाह तुरन्त उसपर पड़ जाती और वे आश्चर्य करने लगते। माथे के आर-पार पड़ी हुई एक छोटी-सी झुर्री, कुछ कुछ आगे झुका हुआ उसका सिर, उदासी की थोड़ी-सी रेखाएं जो कभी कभी उसके सुन्दर नाक-नक्शे पर भी छा जाती थीं— ये ही उसके अन्धेपन के कुछ बाह्य व्यंजक थे। जिन स्थानों से वह परिचित होता, वहाँ वह पूर्ण विश्वास और आसानी के साथ चल-फिर भी लेता। फिर भी यह आसानी

से देखा जा सकता था कि उसकी स्वाभाविक स्फूर्ति में विवशता थी, अवरोध था और ऐसे अवसर आते थे जब यह विवशता, यह अवरोध प्रचंड दौरों का रूप ले लेता था।

२

अब ध्वनि-प्रभाव अन्धे बच्चे के जीवन में जड़ जमाने लगे थे। मुख्यतः इन्हीं प्रभावों के रूप में उसके विचार साकार बनते। यही प्रभाव उसके मस्तिष्क में होने वाली क्रियाओं-प्रक्रियाओं के भी केन्द्र होते। उसे गाने याद रहते, उनकी स्वर-लहरियाँ उसके हृदय में गूँजा करतीं और गानों के विषय उसके मानस पटल पर अंकित हो जाते इसलिए कि उनमें संगीत की करुणा होती, मस्त कर देने वाली स्वप्निल धुन होती। अब वह अपने चारों ओर प्रकृति की ध्वनियाँ पहले से अधिक ध्यानपूर्वक सुनता। और, अपने इन्द्रिय-गम्य प्रभावों को उन सुर-ध्वनियों के साथ समन्वित करके, जिन्हें वह बचपन से सुनता आया था, अपने भावों को संगीतात्मक ढंग से व्यक्त करता। उसकी भावाभिव्यक्ति का यह ढंग इतना अनूठा होता कि यह पता चलाना कठिन

हो जाता कि उसके संगीत में कितना अंश उसका अपना है और कितना उन लोक-गीतों का जिन्हें वह इतनी अच्छी तरह से जानता था। ये दोनों तत्व उसके अन्तस् में इतने घुले-मिले थे कि स्वयं वह भी उनमें कोई अन्तर न स्थापित कर पाता। उसकी माँ उसे पियानो सिखाती और वह शीघ्र ही सारे पाठों का अभ्यास कर लेता। इतना होते हुए भी इयोहिम की बाँसुरी से उसका मोह न छूटा। पियानो अधिक पूर्ण, संगीत-समृद्ध और मज़बूत था, लेकिन उसकी सीमा घर तक ही थी। परन्तु बाँसुरी! उसे तो वह कहीं भी ले जा सकता था। उसकी धुन स्टेपी के वातावरण से इतनी एकाकार हो जाती कि पेत्रो स्वयं न बता पाता कि वह कौनसी चीज़ है जो उसके मस्तिष्क को नये-नये किन्तु अस्पष्ट विचारों से भर रही है—दूरस्थ स्थानों से हो कर आने वाली वायु अथवा स्वरचित संगीत।

यह संगीत-प्रेम बच्चे के मानसिक विकास का केन्द्र और उसके जीवन में रोचकता और विविधता लाने का साधन बना। मक्सिम ने बच्चे को ध्वनि के माध्यम से अपने देश का इतिहास समझाने का भी प्रयास किया।

गाने में तो बच्चे की रुचि थी ही, इसलिए वह अपने नायक-वीरों और उनकी गाथाओं से परिचित हो जाता और इन्हीं के माध्यम से अपनी मातृभूमि की कहानी जान लेता। धीरे-धीरे उसमें साहित्य के प्रति भी रुचि प्रकट होने लगी। जब उसकी अवस्था आठ वर्ष की हुई तो मक्सिम ने उसे नियमित रूप से शिक्षा देने की व्यवस्था की। (उसने अंधों की शिक्षा देने की प्रणाली का विशेष अध्ययन किया था।) बच्चे को अपने पाठों में बड़ा आनन्द आता। उनसे जीवन में एक नये तत्व अर्थात् निश्चयात्मकता एवं स्पष्टता का विकास हुआ जिसने संगीत की अधिक अस्पष्ट अनुभूतियों के बीच एक संतुलन पैदा किया।

इस प्रकार उसकी व्यस्तता बढ़ती गयी और उसपर नये-नये प्रभाव पड़ते गये। अब यह समझा जा सकता था कि बच्चे का जीवन इतना व्यस्त तो है ही जितना किसी भी बच्चे का हो सकता है। उसे अब अपने अंधेपन का भी अनुभव न हो रहा था।

फिर भी, उसपर एक विचित्र उदासी छायी रहती वैसी जैसी प्रायः बच्चों में देखने को नहीं मिलती। मक्सिम ने इसका कारण उसके साथ खेलने वाले साथियों

का अभाव समझा और इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए वह जो भी कर सकता था उसने किया।

गाँव से छोटे-छोटे बच्चों को ताल्लुके में खेलने के लिए निमंत्रित किया गया। परन्तु उन्हें झेंप लगती क्योंकि वे दब्बू थे। और चूंकि वे अपने इस चतुर्दिक वातावरण के अभ्यस्त न थे और पेत्रो अन्धा था, इसलिए उनका यहाँ मन न लगता। कभी कभी वे डर कर एक दूसरे से सट कर कानाफूसी किया करते और अन्धे बच्चे की तरफ़ डरी-डरी निगाहों से देखा करते। घर के बाहर, बाग़ों या मैदानों में वे अपने को अधिक स्वतंत्र समझते और वहाँ मन भर कर खेलते। किन्तु, कारण कुछ भी हो, इन खेलों में पेत्रो की कन्नी काट दी जाती। बच्चा हृदय को प्रफुल्लित कर देने वाला यह कोलाहल सुना करता।

कभी कभी इयोहिम इन बच्चों को अपने चारों तरफ़ इकट्ठा कर लेता और उन्हें कहानियाँ सुनाने लगता। हँसा हँसा कर लोटपोट कर देने वाली उसे ढेरों कहानियाँ याद थीं। गाँव के बच्चों को जन्म से ही भूत-प्रेतों और धूर्त जादूगरनियों की उन्नइनी लोक-कथाएं याद रहती हैं, इसलिए इयोहिम की कहानियों के बीच-बीच वे अपनी कहानियाँ भी आरम्भ कर देते और फिर

उनका समय हँसी-ख़ुशी में बीत जाता। पेत्रो बड़ी दिलचस्पी के साथ ये सारी बातें सुनता परन्तु मुस्कराता बहुत कम। स्पष्ट था कि कई बार तो वह यह भी न समझ पाता कि लड़के हँसे किस बात पर। इसमें उसका कोई दोष भी न होता और न आश्चर्य की ही कोई बात, क्योंकि वह यह तो देख न पाता कि इयोहिम की आँखों में कब चमक आयी, मुस्कराहट के कारण उसकी झुर्रियाँ कब फैलीं और उसने अपनी लम्बी मूँछें कब और कैसे मरोड़ीं।

३

हम अभी तक जिस काल का उल्लेख कर रहे थे उसके कुछ ही समय पहले पास की एक छोटी-सी जागीर अपने पहले मालिक के हाथों से निकल कर दूसरे काबिज़*

* दक्षिणी पश्चिमी प्रदेश में व्यापक रूप से प्रचलित एक लगान पद्धति के अधीन काश्तकार (जिसे 'काबिज़' कहते हैं) की स्थिति बहुत कुछ जागीर के मैनेजर जैसी होती है। वह मालिक को एक निश्चित धनराशि अदा करता है। एक बार यह राशि दे देने के पश्चात् वह अपनी योग्यता के अनुपात में जागीर से जितना चाहे लाभ उठा सकता है।

के पास चली गयी थी। पहले इस जागीर पर एक झगड़ालू व्यक्ति रहता था जिसके साथ पान पोपेल्स्की जैसे शान्त व्यक्ति की भी मुकदमेबाज़ी हो चुकी थी और बात सिर्फ़ इतनी थी कि पान पोपेल्स्की के कुछ मवेशी उस व्यक्ति के किसी खेत में घुस गये थे। अब वहाँ आ कर एक वृद्ध दम्पति बस गये थे—पान यास्कुल्स्की तथा उनकी पत्नी। पान यास्कुल्स्की दूसरों की जागीरों पर गुमाश्ते का काम किया करते थे और इसी लिए उन्हें कठोर जीवन बसर करना पड़ता था। धीरे-धीरे उन्होंने अपने इस्तेमाल के लिए लगान पर एक जागीर ले लेने भर का धन एकत्र कर लिया। उनकी पत्नी पानी आग्नेश्का इस काल में काउन्टेस पतोत्स्काया के साथ वहुत कुछ उसकी दासी के रूप में रहती रही। जब विवाह की शुभ घड़ी आयी और दोनों विवाह स्थल पर एकत्र हुए तो वर के काले-काले बालों और मूँछों में थोड़ी सफ़ेदी दौड़ चुकी थी और वधू के घुँघराले बालों में भी चाँदी जैसी श्वेत चमचमाहट आ गयी थी।

परन्तु इन सफ़ेदियों ने उनके दाम्पत्य जीवन पर कोई बुरा असर नहीं डाला और इस ढलती हुई उम्र में उनके प्रगाढ़ प्रेम के परिणामस्वरूप एक पुत्री का जन्म

हुआ जो सम्प्रति अन्धे बच्चे की ही उम्र की थी। अब इस दम्पति को अपना बुढ़ापा काटने के लिए एक घर मिल गया था जिसे, शर्त सहित ही सही, वे अपना कह तो सकते थे। इस समय वे सीधा-सादा शान्त जीवन बसर कर रहे थे और यद्यपि वे ज़िन्दगी भर दूसरों के हुक्म पर नाचते रहे थे, तथापि अब निश्चिन्त थे – न किसी के लेने में न किसी के देने में। पहले उन्होंने किसी दूसरी जागीर के लिए कोशिश की थी परन्तु उसमें उन्हें कोई सफलता न मिली, इसी लिए उन्हें अपना काम इस छोटी-सी जागीर से ही चलाना पड़ा। यहाँ उन्हें अपनी इच्छानुकूल जीवनयापन करने की सुविधाएं प्राप्त थीं। देव प्रतिमा वाले कोने में, मूर्तियों के पास, सरपत की एक शाखा रखी थी और एक "बज्र बत्ती"*। यहीं पानी य़ास्कुल्स्काया कुछ जड़ी-बूटियाँ रखा करती थी जिनसे वह अपने पति के तथा सहायतार्थ उसके पास आने वाले गाँव के अन्य लोगों के रोगों का उपचार किया करती थी। सारे घर में इन

* "बज्र बत्ती" भयानक तूफ़ानों के समय जलायी जाती थी। मरणासन्न व्यक्ति इसे अपने हाथ में रखता था।

जड़ी-बूटियों की एक विचित्र-सी गन्ध छायी रहती और जब कोई व्यक्ति उन अधेड़ दम्पति से मिलने आता और बाद में इस गन्ध का स्मरण करता तो उसकी कल्पना के समक्ष वे दोनों प्राणी और उनका साफ़-सुथरा और शान्त छोटा-सा घर घूम जाता क्योंकि वे हमारे मानदंड के अनुसार एक निराली ज़िन्दगी बसर कर रहे थे।

इन दो वृद्धों के साथ उनकी एक इकलौती बेटी रहा करती थी—आसमान की तरह नीली और बड़ी-बड़ी आँखें, पीछे की ओर चोटी के रूप लटके हुए भूरे-भूरे सुन्दर बाल, बाह्यतः असाधारण रूप से गम्भीर। जो उसे देखता, देखता ही रह जाता। ऐसा लगता कि माता-पिता के प्रगाढ़ प्रेम का गाम्भीर्य पुत्री में उतर आया था और शायद इसी के परिणामस्वरूप उसमें वह गम्भीरता आ गयी थी जो बालसुलभ न थी। उसकी गतिविधि में विनीत मौन था। उसकी मुद्रा इतनी विचारशील थी कि उसका पता उसकी नीली आँखों की गहराइयों से ही चल जाता था। बच्ची न तो शर्मीली थी न डरपोक। अपरिचितों के आगे उसे कोई झिझक न होती। वह दूसरे बच्चों से दूर-दूर न रहती बल्कि उनके साथ मिलजुल

कर खेला करती। फिर भी, उसके आचार-व्यवहार में इतनी विनम्रता थी कि ऐसा लगता मानो उसे अपने लिए इस प्रकार के मनोविनोद की कोई आवश्यकता नहीं। और सच बात तो यह थी कि जब कभी वह अकेली होती—मैदानों में घूमती होती या फूल चुनती होती या फिर अपनी गुड़िया से बात करती होती—तो उसे बड़ी प्रसन्नता होती। उसके इन समस्त बालसुलभ क्रिया-कलापों में इतनी गम्भीरता होती कि वह बच्ची तो कम, बल्कि एक नन्ही स्त्री-सी प्रतीत होती।

४

नदी तट के पास के टीले पर छोटा पेत्रो बिल्कुल अकेला विचारों में खोया था। सूर्य डूब रहा था और शाम का वातावरण शान्त पड़ चुका था। गाँव के पशु-समूहों से उठने वाली डकारों की आवाज़ को छोड़ कर और कुछ भी न सुनाई पड़ता था। बच्चा बाँसुरी बजा रहा था किन्तु अब उसन वह भी अलग रख दी थी और घास पर चित लेट गया था। वह मन ही मन गर्मी की शाम का आनन्द ले रहा था। वह तो पड़ा पड़ा प्राय: सो ही गया था कि सहसा

उसे अपने नीचे किसी के पैरों की आहट सुनाई दी। इस बाधा से रुष्ट हो कर वह झट अपनी कोहनी के बल उठा और चापों की आवाज़ सुनने लगा। यह आवाज़ टीले के ठीक नीचे आते आते एकदम रुक गयी। पगध्वनि अपरिचित थी।

"बच्चे," एक बच्चे की आवाज़ सुनाई दी। आवाज़ किसी लड़की की थी, "तुम जानते हो यहाँ अभी कौन बजा रहा था?"

पेत्रो के एकाकीपन में बाधा पड़ी। वह खीझ उठा और इसी लिए उसने जिस ढंग से जवाब दिया उसमें विनम्रता थी ऐसा नहीं कहा जा सकता—

"मैं था, तो।"

नीचे खड़ी हुई लड़की साश्चर्य बोल उठी—

"बहुत सुन्दर।" उसके इन प्रशंसात्मक शब्दों में अकृत्रिमता थी।

पेत्रो ने कोई उत्तर न दिया। परन्तु उसका अनिमंत्रित अतिथि वहाँ से गया नहीं।

"तुम जाती क्यों नहीं?" वापस जाते हुए परों की आवाज़ के लिए प्रतीक्षा कर चुकने के बाद वह बोला।

"तुम क्यों चाहते हो कि मैं चली जाऊँ?" लड़की ने अपनी मधुर आवाज़ में उत्तर दिया। वह अभी तक विस्मित थी।

उसकी शान्त गम्भीर आवाज़ बच्चे के कानों को मधुर लगी। परन्तु उसने पहले ही जैसी रुखाई से उत्तर दिया–

"मैं नहीं चाहता कि जहाँ मैं रहूँ वहाँ कोई दूसरा व्यक्ति आये।"

लड़की मुस्करा दी।

"यह बात है!" वह बोल उठी, "तो यह सारी ज़मीन तुम्हारी है और तुम इसपर चलने से लोगों को मना कर सकते हो?"

"माँ हर एक से कह तो देती है कि यहाँ वे मुझे तंग न किया करें।"

"माँ?" लड़की धीरे से बोली, "लेकिन मेरी माँ तो मुझे यहाँ नदी तक आने देती हैं।"

पेत्रो के सामने ऐसे अवसर शायद ही कभी आये हों जब किसी ने उसकी इच्छानुसार काम करने से इनकार किया हो। अब उसके चेहरे पर क्रोध के लक्षण प्रकट होने लगे। वह घास पर बैठ गया और उत्तेजित होता हुआ बार-बार चिल्लाता रहा–

"भाग जाओ! भाग जाओ! भाग जाओ!"

बाद में क्या हुआ होता यह कहना मुश्किल था, किन्तु इसी क्षण इयोहिम की आवाज़ सुनाई दी जो पेत्रो को चाय पीने के लिए बुला रहा था। बच्चा भाग गया।

"कितना दुष्ट है!" यही अन्तिम शब्द थे जो उसे सुनाई दिये और जिस ढंग से वे कहे गये थे उनसे वक्ता के रोष का पता चलता था।

५

दूसरे दिन फिर इसी टीले पर उसे इस छोटी-सी मुठभेड़ की याद आ गयी, परन्तु अब उसे किसी प्रकार का रोष न था। वह चाहता था कि वह लड़की फिर यहीं आये। यह छोटी-सी बच्ची कितनी गम्भीर और मधुर आवाज़ में बोलती थी। इसके पूर्व उसने किसी भी बच्चे की ऐसी मीठी आवाज़ न सुनी थी। जिन बच्चों को वह जानता था वे या तो चिल्लाया करते थे, या ज़ोर ज़ोर से हँसा करते थे, या लड़ाई-झगड़ा करते थे, या पिन्न से रो देते थे। उनमें एक

भी एसा न था जिसने उसके साथ इस तरह से मीठी बातचीत की हो। उसे दुःख हो रहा था कि उसने उसके साथ इतनी रुखाई का व्यवहार किया। अब वह समझ रहा था कि वह फिर न आयेगी।

और सचमुच वह पूरे तीन दिन तक न आयी, लेकिन चौथे दिन उसे टीले के नीचे उसके पैरों की चाप सुनाई दी। उसकी चाल धीमी थी और नदी किनारे के छोटे-छोटे पत्थर उसके पैरों से छूकर चट्ट-चट्ट बोल रहे थे। ऐसा लगता था कि वह कोई पोलिश गीत गुनगुना रही है।

"अजी सुनो तो!" पेत्रो ने पुकारा जब वह टीले से हो कर गुज़र रही थी। "फिर तुम आ गयीं?"

बच्ची ने कोई उत्तर न दिया। पत्थर बराबर चटचटाते रहे। वह बिना रुके हुए चलती और जान बूझ कर लापरवाही से अपना गीत गुनगुनाती रही। पेत्रो ने गान के तर्ज़ से ही जान लिया था कि उस दिन उसे जो चोट लगी थी उसे वह अभी तक भूली न थी।

टीले पर थोड़ा और चल कर आखिर वह रुक गयी। एक आध क्षण के लिए पेत्रो को किसी प्रकार की कोई ध्वनि नहीं सुनाई दी। बच्ची खड़ी खड़ी उन फूलों को सरियाती रही जिन्हें वह अपने साथ ले आयी थी। पेत्रो उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके सहसा रुक जाने तथा चुप हो जाने से पेत्रो को ऐसा लगा मानो वह जान बूझ कर उसका तिरस्कार कर रही हो।

फलों को संभाल कर रख चुकने के बाद लड़की ने सिर ऊपर उठाया और चेहरे पर बड़प्पन का रोब डालते हुए उत्तर दिया—

"देखते नहीं, यह मैं हूं?"

उत्तर सुन कर अन्धे बच्चे के हृदय को कुछ ठेस लगी। वह चुप हो गया। किन्तु घास में छिपे हुए उसके हाथों में सहसा ऐंठन जैसी कोई गति हुई।

"इतनी अच्छी बाँसुरी बजाना तुम्हें किसने सिखाया?" बच्ची ने प्रश्न किया। वह जहाँ खड़ी थी वहीं बिना हिले-डुले बराबर फूल सरियाती रही।

"इयोहिम ने," पेत्रो ने उत्तर दिया।

"बहुत ठीक! लेकिन तुम इतने चिड़चिड़े क्यों हो?"

"तुमसे कैसे रुष्ट हो सकता हूं मैं..." नम्रतापूर्वक पेत्रो ने जवाब दिया।

"तब ठीक। मैं भी वैसी नहीं हूं। आओ हम दोनों खेलें?"

"मैं नहीं खेल सकता," सिर लटकाए हुए उसने जवाब दिया।

"तुम खेल नहीं सकते? लेकिन क्यों?"

"क्योंकि..."

"क्यों?"

"क्योंकि," सिर और भी नीचा करते हुए उसने उत्तर दिया जो लड़की को सुनाई नहीं पड़ा।

अपने अंधेपन के बारे में इतने सीधे-सीधे कुछ कहने का उसके सामने इससे पहले कोई मौका न आया था। लड़की की सिधाई ने और उसके विनीत हठ ने—क्योंकि उसने अपने प्रश्न पर काफ़ी बल दिया था—उसके हृदय में एक नयी टीस पैदा कर दी।

लड़की टीले पर चढ़ गयी और उसी के पास घास पर बैठ गयी।

"बड़े मसख़रे हो," उसकी आवाज़ में विनम्रता थी, "मैं समझती हूं शायद इसलिए नहीं खेलना

चाहते कि तुम अभी तक मुझे नहीं जानते। जब हम एक दूसरे को जानने-बूझने लगेंगे तो फिर तुम्हारा डर भाग जायगा। मुझे तो कभी डर नहीं लगता, किसी से भी नहीं।"

जैसे ही बच्ची की साफ़ मधुर आवाज़ बन्द हुई कि पेत्रो ने पत्तियों और डंठलों की एक हल्की-सी सरसराहट सुनी। बच्ची ने फूल अपनी गोदी में डाल लिये।

"तुम्हें ये फूल मिल कहाँ जाते हैं?" पेत्रो ने पूछा।

"वहाँ," दिशा का बोध कराने के लिए लड़की ने सिर घुमाते हुए उत्तर दिया।

"चरागाह में?"

"नहीं – वहाँ, वहाँ।"

"जंगलों में? ये कौनसे फूल हैं?"

"तुम नहीं जानते! कितने विचित्र हो तुम। सचमुच कितने विचित्र..."

पेत्रो ने एक फूल उठाया। जल्दी-जल्दी, हल्के-हल्के, उसकी उंगलियाँ फूलों की पंखुड़ियों पर घूमती गयीं।

"यह है बटरकप और यह रहा वायलेट, है न?" वह बोल उठा।

इस प्रकार पेत्रो को अपने नये मुलाक़ाती के बारे में और भी बहुत कुछ जानने की इच्छा हुई। धीरे-से उसके कंधे पर झुकते हुए उसने उसके बाल, उसकी आँखें, उसके चेहरे की रूपरेखाएं टटोलने के लिए अपना हाथ ऊपर उठाया—कभी एक दो क्षण के लिए उसकी उंगलियाँ रुकतीं, कभी चलने लगतीं। वह उसकी अपरिचित आकृतियों का सूक्ष्म अध्ययन कर रहा था।

यह सब इतनी जल्दी और इतने एकाएक हो गया कि पहले-पहल वह उसे मना भी न कर सकी। बस चुपचाप बैठी उसे घूरती रही। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों से पता चल रहा था कि वह डर रही है। अब वह समझी कि इस बालक में कोई ऐसी बात ज़रूर है जो बड़ी असाधारण है। उसका श्वेत कोमल मुख जड़वत् था, स्थिर था और उसे उसमें तथा उसकी अचल दृष्टि में कोई संतुलन नहीं लग रहा था। उसकी आँखें कहीं किसी दूसरी चीज़ पर लगी थीं, जो कुछ वह कर रहा था उसपर नहीं। और उनमें से अस्त होते हुए सूर्य की चमक भी बड़े विचित्र ढंग से प्रतिबिम्बित हो रही थी। एक क्षण के लिए लड़की को यह सब एक भयानक स्वप्न मालूम हुआ।

झटके से उसने अपना कंधा छुड़ाया और रोती हुई उछल कर खड़ी हो गयी।

"क्यों लड़के, मुझे इतना क्यों डरा रहे हो?" आँखों में आँसू भरे उसने चिल्लाते हुए कहा, "मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

लड़का सकपका कर घास पर बैठ गया। उसका सिर झुक गया और अपमान तथा मानसिक वेदना का अनुभव करते हुए उसका हृदय दुःख से भर गया। पंगु व्यक्तियों को अपनी पंगुता के कारण प्रायः तिरस्कार सहन करने पड़ते हैं। उसके लिए भी यह एक ऐसा ही पहला अनुभव था। अब उसने समझ लिया कि उसकी शारीरिक पंगुता दूसरों में उसके प्रति न केवल सहानुभूति ही पैदा कर सकती है अपितु उनमें भय का संचार भी कर सकती है। मगर ऐसा क्यों? वह न समझ सका। वह उसे पीड़ित करने वाली इस कटु अनुभूति का विश्लेषण न कर सका। यद्यपि यह अनुभूति अस्पष्ट थी और उसका कारण भी उसकी समझ में ठीक-ठीक न आ सका था, फिर भी उसके हृदय को जो ठेस पहुंच चुकी थी वह किसी भी प्रकार कम न हुई।

पेत्रो को गहन आन्तरिक वेदना हुई। वह घास पर लेट कर सिसकियाँ भरने लगा। सिसकियाँ बढ़ती गयीं। उन्होंने उसके छोटे-से शरीर को बुरी तरह झकझोर डाला। यद्यपि वह उन्हें रोकने का पूरा प्रयत्न कर रहा था फिर भी वे कम न हुईं। और वह रोता गया, रोता गया।

छोटी लड़की दौड़ कर टीले के नीचे जा चुकी थी, परन्तु जब सिसकियों की आवाज़ उसके कानों में पड़ी तो कौतूहलवश उसने मुड़ कर पीछे देखा। घास पर पट पड़े हुए उस बच्चे को फूट-फूट कर रोते देख उसे दया आ गयी। वह फिर ऊपर आयी और रोते हुए बच्चे पर झुकती हुई बोली–

"इधर देखो," लड़की ने धीरे से कहा, "क्यों रो रहे हो? मैंने यही कहा था न कि तुमने मुझे डरा दिया बस। इसी लिए? अच्छा तब मैं न कहूंगी, किसी से भी नहीं! बस, अब खुश! मेरे साथ आओ। रोओ मत।"

इन विनीत और मधुर शब्दों से उसकी रुलाई और भी बढ़ गयी और वह और भी फूट-फूट कर रोने लगा। बच्ची उसी के पास उकड़ूँ बैठ गयी और एक क्षण के बाद उसके बालों में हाथ फेरने लगी। फिर अपने

पिटे हुए बच्चे को दुलारने और पुचकारने वाली माँ की तरह उसने लड़के का सिर ऊपर उठाया और रूमाल से उसके आँसू पोंछने लगी।

"बस, बस," वह एक प्रौढ़ा की भाँति बुदबुदायी, "अब चुप भी जाओ। मैं गुस्से में कब हूं। नहीं तो, बिल्कुल नहीं। मैं देख रही हूं कि तुमने मुझे डरा दिया था और उसके लिए तुम्हें अफ़सोस है। चलो बात ख़तम।"

"मेरा मतलब तुम्हें डराने से नहीं था," सिसकियाँ रोकने के लिए गहरी साँस लेते हुए उसने कहा।

"ऐसा है, तो कोई बात नहीं। मैं बिल्कुल गुस्से में नहीं। अब तुम कभी ऐसा नहीं करोगे। मैं जानती हूं कभी नहीं करोगे।"

लड़की ने बालक के कंधों को झकझोरा। वह उसे अपने पास बिठा लेना चाहती थी।

उसने बच्ची के हाथों की बात मान ली और डूबते हुए सूर्य की ओर मुंह करके बैठ गया। और जब लड़की ने फिर एक बार उसके चेहरे पर निगाह डाली तो फिर उसे लगा कि उसके चेहरे में ज़रूर

कोई विचित्रता है। बच्चे की बरौनियाँ अभी भी आँसुओं से भीगी हुई थीं, किन्तु उनके पीछे जो आँखें थीं वे जड़ थीं–निश्चल, स्थिर। उसके चेहरे पर आक्षेप के लक्षण अभी तक मौजूद थे। फिर भी उससे शोक और दुःख की ऐसी अभिव्यक्ति हो रही थी, जो बालसुलभ न थी, साधारण न थी।

"फिर वही, वही भयानक विलक्षणता," सहानुभूतिपूर्वक, किन्तु साश्चर्य, वह बोली।

"नहीं मैं विलक्षण नहीं हूं," और अपना सिर एक ओर थोड़ा घुमाते हुए उसने धीरे से कहा, "मैं... मैं अन्धा हूं।"

"अं...धा?" वह चिल्ला पड़ी और उसकी आवाज़ इतनी घुटने लगी मानो धीरे से कहे गय बच्चे के इस शब्द ने उसके छोटे-से नारी हृदय पर इतना बड़ा आघात किया हो कि स्वयं शब्दों ने भी उसे सान्त्वना पहुँचाने की अपनी शक्ति खो दी हो।

"अं...धा?" उसने फिर दुहराया। उसकी आवाज़ टूट चुकी थी। और, उसके छोटे-से हृदय में करुणा का वह उफान उठ रहा था जिसने उसके सारे शरीर को हिला दिया था। सहसा उसने अपनी बाहें

अन्धे बच्चे की गरदन में डाल दीं और उसके मुख पर अपना मुख रख दिया।

हृदय को द्रवित कर डालने वाली इस करुण घटना ने बालिका पर इतना बड़ा आघात किया कि वह सब कुछ भूल गयी। उसका मानस कराह उठा और हार्दिक व्यथा ने उसे अभिभूत कर लिया। अब उसकी बारी थी। और वह रोती जा रही थी, बुरी तरह रोती जा रही थी।

६

कुछ मिनट और शान्ति रही।

बच्ची ने रोना बन्द किया परन्तु सिसकियाँ अभी तक चल रही थीं, यद्यपि वह उन्हें भी रोकने का प्रयत्न कर रही थी। बहते हुए आँसुओं में से उसने अस्त होते हुए सूर्य को देखा। उसे लगा कि धीरे-धीरे क्षितिज के उस पार डूबता हुआ यह लाल-लाल गोला तपती हुई वायु में चक्कर लगा रहा है, घूम रहा है। अब उसके जलते हुए किनारे सुनहरे दिखाई पड़ रहे थे और उसमें से आखिरी चिनगारियाँ निकल रही थीं। सहसा दूर स्थित वनों पर नीलिमा छा गयी।

नदी की ओर से शीतल वायु बहने लगी और निकट आती हुई सायंकालीन शान्ति अन्धे बच्चे के चेहरे पर प्रतिबिम्बित हो उठी। वह सिर झुकाये बैठा रहा। ऐसा प्रतीत लग रहा था जैसे वह इस सहानुभूति प्रदर्शन के कारण उद्विग्न हो उठा हो।

"मुझे बड़ा दुख है..." आख़िर अपनी कमज़ोरी की सफ़ाई देते हुए बालिका बोली। वह अभी तक अपनी सिसकियाँ रोकने का प्रयास कर रही थी।

जब उसकी आवाज़ कुछ-कुछ उसके वश में हुई तो उसने बातचीत को एक ऐसी दिशा में मोड़ने का प्रयत्न किया जिसमें उन दोनों का मनबहलाव हो और दोनों निस्संकोच अपने-अपने विचार व्यक्त कर सकें।

"सूर्य डूब चुका है," वह बुदबुदायी।

"मैं नहीं जानता सूर्य कैसा होता है," उसका सीधा-सा उत्तर था। "मैं... मैं तो सिर्फ़ उसका अनुभव कर सकता हूं।"

"सूर्य को नहीं जानते?"

"किस तरह का है यह नहीं जानता।"

"लेकिन... तो ...तो शायद तुम अपनी माँ को भी नहीं जानते?"

"माँ को जानता हूं। उसके पैरों की चाप मैं दूर से, बहुत दूर से, जान लेता हूं।"

"यह बात है। मैं भी माँ को जान लेती हूं चाहे भी जितनी कस कर आँखें क्यों न बन्द कर लूं।"

बातचीत का लहजा शान्त था।

"तुम्हें मालूम है," पेत्रो के चेहरे पर चमक आती जा रही थी, "मैं सूर्य का अनुभव कर सकता हूं और हमेशा बतला सकता हूं कि वह कब अस्त होता है।"

"कैसे बता सकते हो?"

"कैसे बता सकता हूं?..यह तो मैं ठीक-ठीक नहीं बता सकता।"

"आ...आ," बालिका ने उत्तर दिया। वह पेत्रो के जवाब से सन्तुष्ट थी।

दोनों कुछ क्षण के लिए चुप हो गये। पेत्रो ने फिर बात शुरू की।

"मैं पढ़ सकता हूं और शीघ्र ही क़लम दावात से लिखना भी सीख जाऊंगा।"

"लेकिन कैसे..." वह कुछ और पूछना चाहती थी परन्तु यह सोच कर कि इससे उसके हृदय को कोई ठेस न पहुँचे वह कुछ रुक गयी।

पेत्रो ने समझ लिया था कि वह क्या पूछना चाहती थी।

"मैं उंगलियों की सहायता से एक ख़ास क़िस्म की पुस्तक पढ़ता हूं," उसने उत्तर दिया।

"उंगलियों की सहायता से? मैं तो कभी नहीं पढ़ सकती! मैं तो आँखों से देख कर भी बड़ा ख़राब पढ़ती हूं। पिता जी कहते हैं कि लड़कियाँ पढ़ने के लिए पैदा ही नहीं होतीं।"

"मैं फ़्रांसीसी भी पढ़ सकता हूं।"

"फ़्रांसीसी! उंगलियों से! तुम कितने होशियार हो!" वह चिल्ला उठी। उसके इन प्रशंसात्मक शब्दों में सच्चाई थी। "मुझे डर है कि कहीं तुम्हें सर्दी न लग जाय। सामने से नदी के किनारे-किनारे कोहरे के बादल चले आ रहे हैं।"

"और तुम्हें?"

"मुझे डर नहीं लगता। कोहरा मुझे कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकता।"

"तो मुझे भी डर नहीं लगता। अगर औरत को सर्दी नहीं लग सकती तो मर्द को कैसे लगेगी। चचा मक्सिम कहा करते हैं कि मर्द को कभी डरना नहीं चाहिए—सर्दी से, भूख से, आँधी से या तूफ़ान से।"

"चचा मक्सिम – वही जो बैसाखी लेकर चलते हैं? मैंने उन्हें देखा है। कितने भयानक हैं वे!"

"वे भयानक नहीं हैं, बड़े नरमदिल हैं।"

"ओफ़, लेकिन वे हैं..." पूरे विश्वास के साथ उसने कहना शुरू किया, "तुमने उन्हें देखा नहीं इसी लिए तुम नहीं बता सकते।"

"अगर मैं ही नहीं बता सकता तो फिर कौन बता सकता है? वे मुझे पढ़ाते हैं।"

"और बेंत भी जमाते हैं?"

"कभी नहीं। डांटते तक नहीं। कभी नहीं, कभी नहीं।"

"यह भी अच्छा है। अन्धे बच्चे को कोई चोट भी कैसे पहुँचाए। यह पाप जो है।"

"क्यों, लेकिन वे तो किसी को भी नुक़सान नहीं पहुँचाते," पेत्रो ने जवाब दिया। लेकिन उसके कान दूसरी ओर लगे हुए थे। उसने इयोहिम के पैरों की आहट पहचान ली थी।

एक ही क्षण बाद लम-तड़ंग इयोहिम टीले से नीचे आता हुआ दिखाई दिया। उसकी आवाज़ भी साफ़-साफ़ सुनाई दी।

"पेत्रो-ओ-ओ!.."

"तुम्हें कोई पुकार रहा है," बालिका उठते उठते बोली।

"जानता हूं, लेकिन अभी घर जाने की इच्छा नहीं है।"

"मगर अब तुम्हें जाना चाहिए। कल मैं तुमसे मिलने आऊंगी। लोग तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे होंगे। और अब मुझे भी घर जाना है।"

७

पेत्रो को आशा न थी कि बालिका इतनी जल्दी अपना वचन निभायेगी। परन्तु वह सचमुच अपनी बात पर दृढ़ रही। अगले दिन जब पेत्रो मक्सिम के साथ अपना सबक़ पढ़ रहा था तो सहसा उसने सिर उठाया, एक क्षण तक बैठा-बैठा कुछ सुनता रहा और फिर उत्तेजित हो कर पूछ ही तो बैठा—

"एक मिनट के लिए बाहर जाऊंगा? वह लड़की आ रही है।"

"कौन लड़की?" मक्सिम ने साश्चर्य प्रश्न किया। पेत्रो के पीछे-पीछे वह भी दरवाज़े तक आ गया।

लड़की फाटक से होती हुई चली आ रही थी। उस समय आन्ना मिखाइलोव्ना अहाते से होकर उसकी ओर जा रही थी। बालिका उसे देखते ही निर्भय उसके पास तक दौड़ी-दौड़ी चली गयी।

"क्या बात है, मेरी बच्ची?" आन्ना मिखाइलोव्ना ने उससे पूछा। वह समझ रही थी कि किसी ने बालिका को उसके पास किसी काम से भेजा है।

लेकिन इस नन्ही ने बड़े गर्व से उसके आगे हाथ फैलाते हुए कहा—

"वह अन्धा बालक आपका ही बेटा है?"

"हाँ बेटी, मेरा ही है," आन्ना मिखाइलोव्ना ने जवाब दिया। वह बालिका की निर्भय मुद्रा और नीली आँखों की चमक देख कर बड़ी प्रभावित हो उठी थी।

"तब ठीक! मेरी माँ ने मुझे उससे मिलने की इजाज़त दे दी है। क्या मैं उससे मिल सकती हूं?"

लेकिन ठीक इसी समय पेत्रो दौड़ता हुआ उसके पास आ गया। चचा मक्सिम दालान में खड़े तमाशा देख रहे थे।

"माँ! यही वह लड़की है जिसके बारे में मैंने तुमसे कहा था," पेत्रो ने कहा और बालिका की ओर मुड़ गया—

"इस समय मैं पढ़ रहा हूं।"

"ओह, मैं समझती हूं। इस बार चचा मक्सिम तुम्हें क्षमा कर देंगे," माँ बोली, "कहो तो उनसे कह दूं।"

बालिका मक्सिम से मिलने के लिए चल पड़ी। वे अहाता पार करके धीरे-धीरे स्वयं उन्हीं की ओर बढ़े चले आ रहे थे। बालिका उनकी ओर हाथ बढ़ाते हुए बड़े तपाक से बोली—

"आप बहुत अच्छे हैं कि इस अंधे बालक को बेंत नहीं लगाते। उसी ने मुझे बताया था।"

"क्या सचमुच, मेरी नन्हीं मुन्नी?" मक्सिम ने कुछ मस्ती में आ कर बच्ची को जवाब दिया और उसका छोटा-सा हाथ अपने हाथ में ले लिया, "तुम जैसी सुन्दरी से मेरे शागिर्द ने मेरी जो तारीफ़ की है उसके लिए मैं उसका आभारी हूं।"

और मक्सिम क़हक़हे लगाने और उस हाथ को थपथपाने लगा जिसे वह अपने हाथ में लिये

था। बालिका खड़ी खड़ी उसकी ओर देखती रही। और शीघ्र ही उसकी चंचल, निर्भय दृष्टि ने औरतों से घृणा करने वाले इस विचित्र आदमी के हृदय को जीत लिया।

"देखो, आन्ना," बहन की ओर मुड़ते तथा ओंठों पर विचित्र मुस्कान बिखेरते हुए चचा मक्सिम बोले, "हमारा पेत्रो ख़ुद ही अपने दोस्त बना रहा है। तुम्हें समझना चाहिए कि... हालांकि है अन्धा फिर भी उसने चीज़ अच्छी चुनी है। है न?"

"मक्स! तुम्हारा इशारा किधर है?" युवा माँ ने पूछा। उसका मुंह लाल हो रहा था और आवाज़ कर्कश।

"कुछ नहीं। मैं तो मज़ाक़ कर रहा था," वह जल्दी से कह गया और शीघ्र ही उसने यह अनुभव किया कि लापरवाही से कहे गये उसके इन शब्दों ने माँ के मर्मस्थल पर चोट की है और उस पीड़ा को सजग कर दिया है जो बच्चे के भविष्य के संबंध में उसे व्यथित कर रही थी।

आन्ना मिखाइलोव्ना का चेहरा और भी लाल हो गया। वह जल्दी से बालिका की ओर झुकी, उसने उसे गोदी में उठाया और हृदय से चिपका लिया। लड़की उसकी ओर अवाक् देख रही थी और आश्चर्य में डूबी जा रही थी।

८

यह दो जागीरों के बीच स्थायी मैत्री का श्रीगणेश था। अब बालिका एवेलिना रोज़ अपना कुछ न कुछ समय पेत्रो के घर बिताने लगी और आख़िर चचा मक्सिम की शिष्या बन गयी। बालिका के पिता पान यास्कुल्स्की को पहले-पहल यह विचार कुछ अच्छा न लगा; पहले तो इसलिए कि वे समझते थे कि अगर औरत इतना जानती है कि धोबी को दिये गये कपड़ों की सूची कैसे बनायी जाय या घर का हिसाब-किताब कैसे रखा जाय तो बहुत है। एक दूसरी बात भी हमेशा उसे खटका करती थी। वह एक कैथोलिक था और उसका अपना विचार था कि जब हमारे "पिता पोप" ने आस्ट्रियनों के विरुद्ध लड़ाई में

जाने के खिलाफ़ अपनी आवाज़ बुलन्द की थी तो पान मक्सिम को लड़ाई में नहीं जाना चाहिए था। उसका एक अखंड विश्वास यह भी था कि भगवान हैं ज़रूर और स्वर्ग ही में रहते हैं, और वोल्टेयर और उनके समस्त अनुयायी मरने के बाद नर्क की ज्वाला में भूने जायंगे—लोगों का कहना था कि यही दशा पान मक्सिम की भी होगी। जब दोस्ती और भी गहरी हुई तो उसे यह मानना पड़ा कि यह विधर्मी और झगड़ालू आदमी है मज़े का और होशियार भी है। आखिर वह राज़ी हो गया।

फिर भी दिल के किसी कोने में वह एक बेचैनी का अनुभव कर रहा था। इसलिए जब वह पहली बार अपनी बच्ची को पढ़वाने के लिए पान मक्सिम के पास लाया तो उसने बच्ची को कुछ ज़रूरी शिक्षा दे देना ज़्यादा उचित समझा। इस शिक्षा का गूढ़ संकेत मक्सिम की ओर था न कि बालिका की ओर।

"तो एवेलिना," पुत्री के कंधों पर हाथ रखते तथा उसके शिक्षक की तरफ़ कनखियों से देखते हुए उसने कहा, "तुम्हें भगवान को याद रखना चाहिए जो स्वर्ग में है और उसके पवित्र पोप को भी जो रोम में हैं। मैं,

यानी वलेन्टिन यास्कुल्स्की, तुमसे कह रहा हूं कि तुम्हें मुझमें विश्वास रखना चाहिए क्योंकि मैं तुम्हारा पिता हूं। यह है प्रीमो*।"

और इस बार जब उसने पान मक्सिम की तरफ़ कनखियों से देखा तो उसके ख़ास माने थे। लैटिन का एक शब्द कह कर वह सिर्फ़ यही दिखाना चाहता था कि विद्वत्ता के क्षेत्र में वह भी कोई नौसिखिया नहीं है और लोग उसे आसानी से धोखा नहीं दे सकते।

"और सेकुन्दो**," वह कहता जा रहा था, "कि मैं एक भला आदमी हूं और हमारे परिवार में 'पुआल और कौए' का जो चिह्न है उसमें नीले खेत की पृष्ठभूमि में एक पवित्र क्रास है। यास्कुल्स्की हमेशा बहादुर लोग रहे हैं और कई बार तो उन्होंने तलवारों की जगह धर्म-ग्रन्थ ग्रहण किये थे। उन्होंने कभी धर्म की ओर से आँखें नहीं मीचीं। इसलिए तुम्हें हमपर आस्था रखनी चाहिए और जहाँ तक बाक़ी दूसरी चीज़ों का ताल्लुक है यानी दुनिया की चीज़ों का उसमें तुम्हें

* पहली बात – संपादक।

** दूसरी बात – संपादक।

पान मक्सिम के कहने के मुताबिक चलना चाहिए। तुम्हें चाहिए कि तुम उनकी अच्छी शिष्या बनो।"

"तुम डरो मत, पान यास्कुल्स्की," मक्सिम ने मुस्कराते हुए बूढ़े को आश्वासन दिलाया, "मैं छोकरियों को गरीबाल्डी की तरफ़ से लड़ने के लिए नहीं भरती करता।"

६

साथ-साथ पढ़ने से दोनों ही बच्चों को फ़ायदा रहा। यह ठीक है कि पेत्रो पढ़ाई में कुछ आगे था फिर भी दोनों में प्रतिस्पर्द्धा की भावना ज़ोर पकड़ती जा रही थी। पेत्रो पाठ याद कराने में एवेलिना की मदद करता और एवेलिना उसे ऐसी-ऐसी चीज़ें समझने में मदद देती जिसे ख़ुद समझ लेना पेत्रो के अंधेपन के कारण उसके लिए दुष्कर होता। और सच्ची बात यह थी कि उसकी उपस्थिति ही पेत्रो में अध्ययन के लिए नया जोश, नया उत्साह पैदा करने और उसे मानसिक प्रयासों की ओर लगाने के लिए काफ़ी थी।

जो भी हो, यह मित्रता बड़े भाग्य से हुई थी। अब पेत्रो को अकेला रहना पसन्द न रह गया था।

अब उसे अपने विचारों के आदान-प्रदान का एक ऐसा सूत्र मिल गया था जो उसके बुज़ुर्ग, प्रेम भाव के होते हुए भी, उसे देने में असमर्थ थे। अब वह अपने निकट एक ऐसी उपस्थिति का अनुभव किया करता था जो उसे प्रसन्न रखती थी। जब बच्चे नदी के किनारे अथवा उस टीले पर साथ-साथ जाते और पेत्रो अपनी बाँसुरी उठाता तो एवेलिना बड़े उल्लास के साथ उसे सुना करती, और जब वह उसे हटा कर एक ओर रख देता तो वह उससे बातें करने लग जाती और अपने चतुर्दिक की उन सब चीज़ों का वैसा वर्णन करती जैसा कि उनका उसपर प्रभाव पड़ता था। यह ठीक था कि वह जो कुछ देखती थी उसका वर्णन उन शब्दों में न कर पाती जिन्हें सुन कर उसके साथी के समक्ष वर्णित वस्तु का स्पष्ट बोध होता, फिर भी जिस सादगी से वह वस्तुओं का चित्रण आरम्भ करती, जिस लहजे में वह बात करती, उससे उसके मित्र को प्रत्येक उस वस्तु की प्रमुख बातों का बोध अवश्य हो जाता जिसका वह वर्णन करना चाहती थी। यदि वह रात के अंधेरे का, उसकी नमी

का, निरुत्साह कर डालने वाले उसके कालेपन का, और इस बात का कि अंधेरा सारी पृथ्वी को घेरे हुए है ज़िक्र करती तो बालक उसकी डरी हुई बोली की सी-सी से ही अंधेरे की आवाज़ सुनने लगता। यदि वह अपना छोटा गम्भीर मुखड़ा आसमान की तरफ़ उठाती और चिल्ला कर कहती "अरे वहाँ कैसा बादल है, कितना बड़ा, कितना भूरा! वह उधर तैर रहा है" तो बच्चे को ऐसा लगता कि वह बादल के ठंढेपन का अनुभव कर रहा है, और उसे आसमान की ऊंची से ऊंची उंचाइयों से अपनी ओर आते हुए इस भयंकर दैत्य के कराहने जैसी आवाज़ बालिका की मीठी बोली में ही सुनाई पड़ जाती।

चौथा अध्याय

१

कभी कभी संसार में दुःख, चिन्ताओं और क्लेश से परिपूर्ण प्रेम-मार्ग का अनुसरण करने के लिए भी कुछ आत्माओं का अवतरण होता है, जो दूसरों के दुख से दुखी रहती हैं और उन लोगों की

सहायता करना अपना नैतिक धर्म समझती हैं जो दुर्भाग्य के थपेड़े खाने के लिए ही इस पृथ्वी पर जन्म लेते हैं। प्रकृति ने भी इन अनूठी आत्माओं को वह सौम्यता और सहनशक्ति प्रदान की है जो उनके चिर-ध्येयों की पूर्ति में उनका मार्गदर्शन करती है और आकांक्षाओं एवं तृष्णाओं जैसे सांसारिक गुणों को उन तक नहीं फटकने देती। यद्यपि महान हैं ये आत्माएं, फिर भी वे ज़रूरत से ज़्यादा गम्भीर और जड़ प्रतीत होती हैं। उनमें आत्मसंयम और स्वार्थत्याग की एक स्थायी अनुभूति मिलती है और फलतः अपने कंटकाकीर्ण मार्ग का अनुसरण करने में सामने आने वाली भौतिक कठिनाइयाँ उन्हें पुष्प-शय्या सी लगती हैं। वाह्यतः वे हिमावृत्र पर्वत शिखरों की भाँति एकाकी और उदासीन दिखाई पड़ती हैं और उन्हीं शिखरों की भाँति गर्व से सिर ऊंचा किये अपने कर्तव्य-पालन में चट्टान की तरह अटल होती हैं। और, संसार के समस्त दुर्गुण, समस्त व्यसन उनके चरणों पर लोटते हैं, धूल की तरह, तिनके की तरह। उनके विषय में सांसारिक व्यक्तियों द्वारा कही गयी मानापमान की बातें उनका स्पर्श तक नहीं कर पातीं और उन तक पहुंचने

के पूर्व इस प्रकार विलीन हो जाती हैं जैसे रविकर का स्पर्श होने पर ओस के कण।

प्रकृति जब कभी बहुत सदय हो उठती है तब वह अपना प्रसाद किसी एक को देकर उसे उपर्युक्त आत्माओं की कोटि में रखती है। पेत्रो की वह छोटी-सी सहेली ऐसी ही पवित्र आत्माओं में से एक थी। माँ ने शीघ्र ही यह जान लिया था कि इस बालिका की मित्रता उसके अंधे बेटे के लिए कितनी सुखकर होगी। और मक्सिम तथा माँ दोनों ही इस बात का अनुभव करने लगे थे कि अब जब बच्चे के पास वह सब कुछ है, जिसका अभाव उसे खटकता था, तो उसके आध्यात्मिक विकास का मार्ग और भी साफ़ हो जायगा—और भी निर्बाध, और भी निर्द्वन्द्व।

किन्तु यह भूल थी और एक भयंकर भूल।

२

कुछ वर्षों तक, जब पेत्रो अभी छोटा ही था, मक्सिम यही समझता रहा कि वही बच्चे के मानसिक विकास पर पूरा-पूरा नियंत्रण रख रहा है। लेकिन

शायद इस विकास की प्रत्येक गति शिक्षक के ही प्रत्यक्ष प्रभाव का परिणाम न थी। हाँ इस बात का उसे विश्वास था कि यदि बालक में कोई नयी प्रगति होगी, कोई नव मानसिक उत्थान होगा तो उसका उसे ज्ञान अवश्य हो जायगा। परन्तु जब पेत्रो कुछ बड़ा हुआ और बालपन तथा कुमारावस्था के संधिकाल में आया तो बाल-शिक्षण-विज्ञान के ये बड़े-बड़े स्वप्न मिट्टी में मिल गये। अब शायद ही कोई सप्ताह ऐसा जाता हो जब कोई न कोई नयी रोमांचकारी घटना न घटती हो। और यह बात मक्सिम की समझ में ही न आ पाती थी कि बच्चे के दिमाग़ में उपजने वाली ये खुराफ़ातें, ये नयी-नयी बातें आख़िर आती कहाँ से हैं और कैसे आती हैं। बच्चे के अन्तस् की गहराइयों में अवश्य ऐसी कोई अज्ञात शक्ति काम कर रही थी जो स्वतंत्र आध्यात्मिक विकास के अप्रत्याशित स्वरूपों को मानसिक धरातल तक लाकर उन्हें सब पर प्रकट कर देती थी। उसके शिक्षण में बाधा डालने वाली इन रहस्यपूर्ण प्रक्रियाओं के आगे सिवा सभय नतमस्तक होने के मक्सिम के पास और चारा ही क्या था। ऐसा प्रतीत होता था कि प्रकृति के पास कोई ऐसी

प्रेरक शक्ति, उद्घाटन का कोई ऐसा रहस्य है कि वह अन्धे बच्चे में ऐसी नयी-नयी धारणाएं पैदा करती है जिनका विकास उसमें स्वतः, अपने अनुभव से, कभी सम्भव ही नहीं। इन्हीं सब बातों पर विचार करते करते मक्सिम का ध्यान जीवन की अनेकताओं और विविधताओं पर भी गया और वह मानव जीवन में घटने वाली आश्चर्यजनक घटनाओं के बारे में सोचने लगा।

पहले तो यह सोच कर मक्सिम को भय लगा कि अकेले वही बच्चे की मानसिक शक्ति का विकास करने वाला शिक्षक नहीं है वल्कि कोई और चीज़ भी है जो न उसकी इच्छानुसार काम ही करती है और न उससे प्रभावित ही होती है। ज़रूर ऐसी ही कोई चीज़ उसके शिष्य पर असर डाल रही है। मगर वह है क्या? इसकी वह कल्पना न कर सका। वह बच्चे के भविष्य के प्रति आशंकित हो उठा। उसे यह भी शंका होने लगी कि कहीं बच्चे में ऐसी-ऐसी तृष्णाएं घर न कर लें जिनका शमन असम्भव हो जाय और जिनके कारण बालक को अपार कष्टों का सामना करना पड़े। अब वह बालक के ज्ञान के इन नये-नये स्वरूपों

के स्रोतों का पता चलाने में जुट गया, इस आशा में कि वह स्वयं बच्चे के हित में उसकी खुराफ़ातों को नष्ट करेगा।

माँ ने भी उसकी ये नयी-नयी बातें देखीं-समझीं। एक दिन प्रातःकाल पेत्रो दौड़ता हुआ उसके पास आया। उस समय वह इतना उत्तेजित था जितना पहले कभी नहीं हुआ था।

"माँ, माँ!" वह चिल्लाया, "मैंने एक स्वप्न देखा है!"

"क्या देखा, मेरे बच्चे?" माँ ने पूछा। उसके हृदय में कोई आशंका उठ रही थी जिसे वह दबा न पा रही थी।

"मैंने देखा... स्वप्न में तुम्हें और चचा मक्सिम को... और मैंने हर चीज़ देखी। सब कुछ कितना सुन्दर था माँ, कितना सुन्दर!"

"और, स्वप्न में तुमने क्या देखा, बेटे?"

"मुझे याद नहीं।"

"मेरी याद है?"

"नहीं," बालक विचारशील मुद्रा में बोल उठा, "नहीं, मुझे कुछ याद नहीं, कुछ भी याद नहीं।"

एक क्षण शान्ति रही।

"लेकिन मैंने देखा ज़रूर है, वैसे ही, ठीक वैसे ही, ज़रूर देखा है," वह बोला।

उसका चेहरा फक पड़ गया। उसकी अन्धी आँखों से आँसू लुढ़क लुढ़क कर ज़मीन पर गिरने लगे।

यही घटना कई बार घटी और प्रत्येक बार जब उसकी आवृत्ति होती वह और भी दुखी और भी अशान्त हो उठता।

३

एक दिन अहाते से गुज़रते हुए मक्सिम को उस बैठक से कुछ विचित्र सुर-ध्वनियाँ आती हुई सुनाई दीं, जहाँ पेत्रो संगीत का अभ्यास करता था। विचित्र अभ्यास है! इसमें केवल दो सुर थे—पहला ऊपरी पंक्ति का सबसे ऊंचा और सबसे मधुर, और जब-जब उसका स्पर्श किया जाता वह कंपकंपा कर तेज़ी से झनझना उठता; और दूसरा गम्भीर। इस असाधारण संगीत का क्या मतलब? मक्सिम तुरन्त

घर की ओर लौट पड़ा और दरवाज़ा खोल कर उसने जो कुछ देखा उससे स्तम्भित रह गया।

पेत्रो दस वर्ष का हो रहा था। वह अपनी माँ के पैरों के पास एक छोटी-सी तिपाई पर बैठा था। उसी के पास गर्दन फैलाये तथा चोंच को बेचैनी से इधर-उधर घुमाते हुए एक क्रौंच पक्षी खड़ा था जिसे कभी इयोहिम ने पाला था और अब पेत्रो को दे दिया था। पेत्रो इस पक्षी को अपने ही हाथों से खिलाता-पिलाता; और जहाँ-जहाँ वह जाता क्रौंच भी उसके पीछे-पीछे हो लिया करता। इस समय वह एक हाथ से उसे पकड़े था और दूसरे से कभी उसके परों को, कभी गर्दन को, कभी पीठ को और कभी डैनों को धीरे-धीरे थपथपा रहा था। उसका जड़वत् चेहरा एक विशेष दिशा की ओर देख रहा था। और पियानो पर बैठी हुई उसकी माँ एक ही सुर-कुंजिका को बार-बार और तेज़ी के साथ बजाये जा रही थी। उसका चेहरा उत्तेजना के कारण लाल और आँखें उदासी के कारण काली पड़ गयी थीं। सुर में से लगातार प्रकम्पित ऊंची ध्वनि निकलती चली आ रही थी। सुर-वादन के साथ ही साथ उसकी नज़र पास बैठे

हुए अपने पुत्र के व्यथित चेहरे पर भी गड़ी थीं। जब क्रौंच को थपथपाता हुआ बालक का हाथ पर के उस सिरे पर पहुँचता जहाँ उसकी सफ़ेदी समाप्त होती और कृष्णता का आरम्भ हो जाता तो माँ का हाथ भी सहसा कुंजिका-पट से उतर कर एक गम्भीर सुर पर पड़ जाता और उसकी आवाज़ से सारा कमरा झनझना उठता।

दोनों ही अपने-अपने कार्यों में इतने व्यस्त थे कि किसी को भी मक्सिम के आने का उस समय तक पता न चला जब तक कि स्वयं उसी ने अपनी तेज़ आवाज़ से सारे कमरे को न गुंजा दिया।

"आन्ना, यह सब क्या तमाशा है?"

भाई की प्रश्नसूचक दृष्टि पर नज़र पड़ते ही आन्ना मिखाइलोव्ना ने अपना सिर उस छोटी-सी बालिका की भाँति लटका लिया जिसे उसकी अध्यापिका ने शरारत करते हुए देख लिया हो।

"तुम्हीं देखो," उसने समझाना शुरू किया, "पेत्रो कहता है कि उसे परों के रंगों में अन्तर लगता है। लेकिन वह यह नहीं समझ पाता कि उनमें क्या अन्तर है। उसने स्वयं ही इसके बारे में कहा था, और मैं समझती हूं कि उसे अन्तर ज़रूर लगता है।"

"और अगर लगता ही है, तो फिर?"

"क्यों, कुछ नहीं... तुम्हीं देखो... मैंने सोचा शायद मैं उसे इस फ़र्क़ के बारे में थोड़ा बहुत समझाने की कोशिश करूं—ध्वनियों के अन्तर द्वारा। मुझ पर ग़ुस्सा मत करो, मक्स। मैं ख़ुद ही सब कुछ जानती हूं।"

पहले-पहल तो मक्सिम को बहन की इस सूझ से इतना आश्चर्य हुआ कि वह कुछ कह ही न सका। उसने उस से अपना परीक्षण जारी रखने को कहा और सिर हिलाते हुए बच्चे के चेहरे को शान्ति से देखने लगा।

"मुझे समझने की कोशिश करो, आन्ना," बच्चे के कमरे से बाहर चले जाने के बाद उसने कहना शुरू किया, "बच्चे के दिमाग़ में ऐसे-ऐसे प्रश्न पैदा करना अच्छी बात नहीं जिनका तुम वह उत्तर न दे सको जिससे बच्चे का समाधान हो सके।"

"लेकिन प्रश्न तो स्वयं उसी ने किया था। मैं सच कहती हूं, उसी ने किया था," वह बोली।

"उससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। सिवा भाग्य के भरोसे बैठे रहने के बच्चे के लिए दूसरा कोई चारा नहीं।

श्रौर हमें चाहिए कि हम उसे रोशनी जैसी किसी भी चीज़ की याद न दिलायें बल्कि कोशिश करें कि वह इन सब बातों को भूल जाये। मैं स्वयं यही प्रयत्न करता रहता हूं कि उसपर ऐसा कोई बाहरी प्रभाव न पड़े जिससे उसे ऐसे-ऐसे प्रश्न करने की नौबत न श्राये, जिनका समुचित उत्तर न मिलने के कारण उसे निराश होना पड़े। श्रौर यदि हम इन बाह्य-प्रभावों को उस तक पहुँचने से रोक सकें तो वह कभी भी इनके श्रभावों का श्रनुभव न कर सकेगा वैसे ही जैसे हम सब पांच इन्द्रियों के होते हुए छठी की श्रावश्यकता नहीं समझते।"

"श्रोफ, लेकिन हम समझते हैं," उसने धीरे से उत्तर दिया।

"श्रान्ना!"

"हाँ हाँ, हम समझते हैं," वह कहती गयी, "प्रायः हम उस वस्तु को पाने की इच्छा करते हैं जिसका मिलना श्रसम्भव होता है।"

फिर भी उसने भाई के परामर्श को मान लिया। परन्तु इस बार मक्सिम ग़लती पर था। बाह्य प्रभावों

को उस तक न पहुँचने देने की अपनी उत्सुकता में वह उन प्रेरणाओं की बात बिल्कुल भूल गया जिन्हें प्रकृति ने बच्चे की नस-नस में पिरो दिया था।

४

किसी ने ठीक कहा है–

"नयना देत बताय सब दिल की हेत अहेत।"

यह कहना शायद अधिक ठीक होगा कि नेत्र उन खिड़कियों के समान हैं जिनके द्वारा आत्मा बाह्य संसार के प्रभावों को ग्रहण करती है। कौन कह सकता है कि हमारे आध्यात्मिक उत्थान का कितना अंश हमारे नेत्रों द्वारा प्राप्त अनुभवों पर निर्भर है?

मनुष्य तो उस अनन्त शृंखला की एक कड़ी है जो आवागमन के रूप में अनादि काल से शुरू होती है और अनन्त भविष्य तक चलती चली जाती है। ऐसी ही एक कड़ी के रूप में एक अन्धे बच्चे का जन्म हुआ और दुर्भाग्य ने उसके नेत्रों की खिड़कियाँ बन्द कर दीं। अब उसका सारा जीवन अन्धकार में व्यतीत होगा। किन्तु क्या इसका अर्थ यह हुआ कि जिस स्नायुमंडल

के माध्यम से आत्मा को नेत्रों द्वारा बाह्य संसार की अनुभूति होती थी वह भी इतना मृत-प्राय हो चुका है कि उसमें जीवन नहीं डाला जा सकता। नहीं, इस अंधेरे जीवन में भी आत्मा की ग्रहण-शक्ति बराबर बनी रहेगी और पीढ़ी दर पीढ़ी चलती चलेगी। अन्धे बालक की आत्मा सामान्य मनुष्य की ही आत्मा थी और उसमें वे सारी क्षमताएं थीं जो किसी भी साधारण मनुष्य में हो सकती हैं। और चूंकि प्रत्येक क्षमता में सफलता की कामना होती है इसलिए इस अन्धी आत्मा में भी रोशनी देखने की एक अदम्य आकांक्षा थी।

उस अन्धे बालक के अन्तस् की गहराइयों में कहीं कोई ऐसी शक्ति ज़रूर थी जो सुप्तावस्था में थी किन्तु जिसमें प्रकाश का साक्षात्कार होते ही चेतनता पैदा होती थी। लेकिन खिड़कियाँ बन्द रहीं और उन्हीं के साथ उसके ललाट के कपाट भी बन्द रहे। वह प्रकाश की किरणें न देख सकेगा! उसकी सारी ज़िन्दगी अंधेरे में टटोलते-टटोलते ही बीतेगी!

और अन्धकार के साथ ही साथ कल्पना की छाया भी जीवित रही।

यदि बच्चे को ग़रीबी के बीच ज़िन्दगी बसर करनी होती, यदि वह दुख-दर्द की चक्कियों में पिसता होता तो शायद उसके विचार इन बाह्य कष्टों के स्रोत ढूंढने में ही लगे रहते। किन्तु उसके परिवार वालों ने इस बात का ध्यान रखा था कि उसके सामने ऐसी कोई चीज़ें न लायी जायं जिनसे उसे कष्ट और चिन्ता की अनुभूति हो। उन्होंने उसके लिए शांत वातावरण की व्यावस्था की थी। और अब उसकी आत्मा में व्याप्त इस मौन के बीच उसकी आन्तरिक कामना अधिक सजीव हो उठी थी। अपने चारों ओर के अन्धकार के बीच भी वह निरन्तर एक ऐसी अस्पष्ट आवश्यकता का अनुभव करने लगा जो पूर्ति के लिए व्याकुल थी। यह उन आन्तरिक शक्तियों को एक स्वरूप देने की उत्कट अभिलाषा थी जो उसके हृदय की गहराइयों में सुप्तावस्था में पड़ी थीं।

इन सबके कारण बालक में ऐसी ऐसी विचित्र एवं अस्पष्ट आशाओं और प्रेरणाओं का जन्म हुआ जैसी कि प्रायः हम सबों को अपने बचपन में हुआ

करती हैं जब हम अपनी कल्पनाओं के साथ-साथ स्वयं भी कल्पना लोक में उड़ जाने के हवाई क़िले बांधा करते हैं।

इन सब आशाओं और प्रेरणाओं के प्रभाव के कारण बच्चे में मानसिक प्रयासों ने जन्म लेना शुरू किया और उनकी प्रतिच्छाया मूक पीड़ा के रूप में उसके मुखमंडल पर झलकने लगी। उसमें दृष्टि द्वारा मानस पर पड़ने वाले प्रभावों की "सम्भाव्यताएं" तो थीं परन्तु उनका उपयोग नहीं किया गया था। इन सम्भाव्यताओं ने बच्चे के बालसुलभ मस्तिष्क में निराकार, अव्यक्त एवं पीड़ादायक ऐसी ऐसी विचित्र कल्पनाएं खड़ी कर दीं कि वह कुछ न कुछ प्राप्त करने के लिए व्यग्र हो उठा। मगर क्या प्राप्त करने के लिए? यह वह स्वयं न जानता था।

यह प्रकृति थी जो इस वैयक्तिक "अपवाद" के विरुद्ध मूक प्रतिवाद करने के लिए व्याकुल हो उठी थी और उस सार्वभौमिक सिद्धान्त का पुनः प्रतिपादन करने के लिए उत्सुक थी जिसका यहाँ उल्लंघन किया जा चुका था।

५

मक्सिम इस बात का प्रयत्न अवश्य करते कि बच्चे पर कोई बाह्य प्रभाव न पड़े। परन्तु वह बालक के अन्तस् की अपूर्त आवश्यकताओं के दबाव को निर्मूल करने में असमर्थ थे। अधिक से अधिक यही होता था कि उनकी सजगता के कारण इस प्रकार की आवश्यकताओं की आकांक्षा जल्दी जल्दी न उठ कर देर में उठती और, फलतः, बच्चे के अन्तस् की पीड़ा अधिक शीघ्र घनीभूत न हो पाती। बाक़ी जिस बात पर मक्सिम का कोई बस न था उसके बारे में वे करते ही क्या! यह बालक के भाग्य की बात थी। और उसे बदला नहीं जा सकता था। इसलिए यदि उसके अन्धेपन के कारण दुर्भाग्य उसके लिए कोई मुसीबतें खड़ी कर देता है तो वह उन्हें भुगते, सहन करे।

शीघ्र ही मक्सिम को लगा कि बच्चा दुर्भाग्य के वातचक्र में फंस जायगा। जैसे ही जैसे वर्ष पर वर्ष बीतते गये, उतरते हुए ज्वार की भाँति उसकी आन्तरिक स्फूर्ति एवं भावुकता कम होती गयी और वह अपने भीतर निरन्तर एक उदासीनता का, जो अभी

तक अस्पष्ट थी, अनुभव करने लगा—अधिक और अधिक। इसके कारण उसके चरित्र पर भी प्रभाव पड़ने लगा था। बचपन में बाह्य संसार की प्रत्येक छाप के साथ उसके अधरों पर जो मुस्कराहट, उल्लास की जो छटा बिखर जाती थी अब वह धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। अब वह जीवन की मुस्कराहट, उल्लास और हास्य की रंचमात्र अनुभूति ही कर पाता। परन्तु प्रकृति में, दक्षिणी प्रदेश की अपनी पितृभूमि में और अपने लोक-गीतों में पाये जानेवाले कारुण्य और उदासीनता की छाया के प्रति वह अत्यधिक जागरूक रहता। जब वह इस आशय का गान सुनता कि "खुले खेत में क़ब्र ने वायु के कानों में क्या क्या फूंका," तो उसकी आँखों में आँसू आ जाते और वह इस फुसफुसाहट सुनने के लिए स्वयं खेतों में निकल जाता। अब उसमें एकाकी रहने की कामना का अधिकाधिक विकास हो चुका था। जब उसका पाठ पूरा हो जाता तो वह चुपके से किसी एकान्त स्थान पर निकल जाता और घर में किसी की भी हिम्मत न होती कि वह उसके एकाकीपन में बाधक बने। वह स्टेपी में किसी पुरानी क़ब्र की ओर अथवा नदी तट के अपने चिरपरिचित

टीले पर, अथवा उस ऊंची पहाड़ी पर, जिसे वह बहुत समय से जानता रहा है, निकल जाता और लेटा लेटा कुछ गुनता रहता, कुछ सुनता रहता। उसके चारों ओर ध्वनियाँ न सुनाई पड़तीं परन्तु पत्तियों की सरसराहट, घास की फुसफुसाहट और शायद स्टेपी की वायु के झकोरे उसके कानों से छिपे न रहते। ये सारी चीज़ें उसके अन्तस् की गहराइयों में छिपे हुए भावों से एकाकार हो जातीं, इतनी तन्मयता के साथ कि वह प्रकृति के संकेतों का अभिप्राय समझने लगता। और यहाँ पर उसने प्रकृति को यथाशक्ति समझा भी था। यहां प्रकृति उसके सामने ऐसी ऐसी समस्याएं रख कर उसे क्लेश नहीं पहुँचाती थी जिनका समाधान न हो सकता हो। यहाँ वायु थी जो सीधे उसके हृदय में प्रवेश करके उसकी अनुभूतियों को अनुप्राणित कर रही थी, यहाँ घास थी जो सहानुभूति के शब्दों में उसे सान्त्वना दिया करती थी। और जब यह नन्हीं सी आत्मा अपने चारों ओर के सुखद वातावरण के साथ तद्रूप और प्रकृति के हृदय की उष्णता पा कर शान्त हो जाती तो उसे ऐसा प्रतीत होता कि उसके सीने में कोई ऐसी चीज़ उठ रही है, जो उसके सारे शरीर में व्याप्त

हो रही है। ऐसे क्षणों में वह ठंढी, नम घास में अपना मुंह छिपा लेता और उसके खुशी के आँसू बहते रहते, बहते रहते। अथवा, कभी कभी वह अपनी बाँसुरी उठाता और फिर उससे ऐसी ऐसी करुण धुनें निकालता जो उसकी आन्तरिक अनुभूतियों और स्टेपी के शान्त वातावरण के अनुरूप होतीं। और तब वह सारी दुनिया को भूल जाता।

ऐसे समय यदि उसे किसी मनुष्य की बोली सुनाई पड़ जाती तो उसकी मानसिक स्थिति डगमगा जाती और उसके सारे शरीर में झनझनाहट होने लगती। और यह स्वाभाविक भी था। ऐसे क्षणों में सौहार्द का प्रसाद तो उन्हीं लोगों से मिल सकता है जो हृदय के सबसे निकट हों, उसे सबसे अधिक प्रिय लगें। और बालक की ऐसी एक ही सहेली थी जो उसी की अवस्था की थी—पास वाली जागीर की सुन्दर बालों वाली छोटी-सी लड़की...

उनकी मित्रता बराबर बढ़ती गयी। दोनों में एक दूसरे के प्रति घनिष्ठता थी। एवेलिना ने अपने मित्र को अपनी शांति दी, अपने जीवन का मौन उल्लास दिया और उसे अपने चारों ओर के जीवन की नूतनताओं की

अनुभूति कराने में उसकी सहायता की। लेकिन पेत्रो ने उसे क्या दिया—अपना दुख, अपना दर्द... ऐसा लगता कि जब बालिका को उसके दुख और शोक का सर्वप्रथम ज्ञान हुआ था तो उसके नन्हें रमणी हृदय पर गहरा आघात हुआ था। परन्तु इस आघात के कारण को अलग कर देना तो उसकी मृत्यु ही थी। नदी किनारे के टीले पर जब दोनों ने पहली बार परस्पर बातचीत की थी और बालिका ने उसे सान्त्वनासूचक अपने मर्मभेदी शब्दों से आहत किया था, उस घटना के बाद उसका निरन्तर साथ देना बालिका के लिए अनिवार्य हो गया था। जब दोनों अलग-अलग रहते तो उनका हृदय पीड़ित हो उठता और एवेलिना अपने मित्र की देखरेख करके अपनी व्यथा शान्त करने के लिए उसके पास दौड़ी चली जाती।

६

शरद् ऋतु। एक दिन सायंकाल घर के सामने वाले घास के मैदान में दोनों परिवार बैठे बैठे एक दूसरे से भिन्न भिन्न विषयों पर बातचीत कर रहे थे, और प्रायः सिर

ऊपर उठा कर तारों से जगमगाते हुए नीले आकाश की ओर देख लिया करते थे। अन्धा बच्चा हमेशा की तरह अपनी माँ के पास बैठा था। एवेलिना उसी की बग़ल में थी।

एक क्षण के लिए बातों का सिलसिला टूट गया। संध्या में नीरवता थी। कभी कभी केवल पत्तियाँ हिल उठतीं और कुछ फुसफुसा कर ज़मीन पर झर जातीं।

नीरवता के इस क्षण में गहरे नीले आकाश के किसी कोने से एक चमचमाता हुआ तारा टूटा और उसकी प्रकाश-रेखा से अंधकारपूर्ण आकाश जगमगाने लगा। तारा अदृश्य हो जाने के पश्चात् अब उसका प्रकाश भी धीरे-धीरे लुप्त होता जा रहा था। सभी लोगों ने यह घटना देखी। आन्ना मिखाइलोव्ना पेत्रो की बांह पकड़े थी। सहसा उसे ऐसा लगा मानो बच्चा कांप गया हो, जैसे डर कर।

"क्या था यह ... यह क्या था ?" माँ की ओर मुड़ते हुए उसने पूछा।

"बेटे, यह तारा टूटा था।"

"तारा ? बेशक मैं जान गया था कि यह तारा ही होगा।"

"तुमने कैसे जाना, पेत्रो ?" मां की आवाज़ में आशंका की भावना व्यक्त हो रही थी।

"ओह, वह सच कहता है," एवेलिना बोली, "वह बहुत-सी बातें जानता है... जानता है किसी तरह।"

बाह्य संसार की यह अनुभूति, जो दिन प्रति दिन बढ़ती ही जा रही थी, कौमार्य और युवावस्था के बीच की अवस्था की सूचक थीं। परन्तु अभी तक पेत्रो का विकास एक प्रकार से शांत-सा था। उसके मुख पर कभी कभी उदासीनता के विचित्र भाव झलक जाते थे। और यद्यपि वे गहन न होने पाते फिर भी उसके स्वभाव का अंग बन चुके थे। अब वे पूर्वापेक्षा कम दिखने लगे थे। परन्तु यह केवल क्षणिक स्थिरता थी–शायद प्रकृति की इस लीला में भी कोई गूढ़ प्रयोजन था, शायद इसलिए कि वह नन्हा पुरुष नये-नये तूफ़ानों और नयी-नयी कठिनाइयों को झेलने की तैयारी कर सके, उनका सामना करने के लिए कमर कस सके। नीरवता के इन क्षणों में अप्रत्यक्ष ही नयी-नयी समस्याएं पैदा होती हैं और एक स्वरूप ग्रहण करती हैं। मानव हृदय के साथ उनका स्पर्श आत्मिक शांति का संतुलन बिगाड़ देने के लिए काफ़ी है और उसमें हाहाकार मचा देने में समर्थ, वैसा ही हाहाकार जैसा भयंकर तूफ़ान के समय सागर में मचता है।

पाँचवाँ अध्याय

१

कुछ साल और बीत गये।

जागीर के इलाके में कोई परिवर्तन न हुआ। बीच-वृक्ष बाग़ में वैसे ही मर्मर करते रहे। हाँ, उनकी पत्तियाँ इस समय पहले से ज़्यादा घनी, ज़्यादा गहरे रंग की हो गयी थीं,। सफ़ेद मकान पहले की ही तरह आकर्षक दिखाई पड़ते थे, केवल उनकी दीवालों में थोड़ा-सा परिवर्तन हो गया था और समय के आघात उनपर साफ़-साफ़ झलक पड़ रहे थे। इयोहिम पहले की भाँति ही ब्रह्मचारियों-जैसा जीवन व्यतीत करता हुआ घोड़ों की रखवाली में लगा था। बाँसुरी की आवाज़ अब भी अस्तबल के फाटक से आती सुनाई पड़ती लेकिन अब फ़र्क यह था कि अन्धा बाँसुरी या पियानो बजाता और इयोहिम अधिकतर सुना करता।

मक्सिम के बालों में थोड़ी-सी सफ़ेदी और दौड़ चुकी थी। पोपेल्स्की दम्पति के और कोई भी बच्चे न हुए और अन्धा बालक इकलौता रह गया। अब वही एक

विन्दु था जिसपर इन जागीरदारों की हँसी-खुशी केन्द्रित थी। उसी के लिए इस दम्पति ने अपने को एक छोटे-से केन्द्र में सीमित कर लिया था। वे पड़ोस के जागीरदारों की तरह अपने इस शांत, एकाकी जीवन से संतुष्ट थे। इस प्रकार बालक, जो अब जवान हो चुका था, गर्म मकानों में रखे हुए पौधे की तरह बड़ा हुआ। उसे बराबर उन कठोर प्रभावों से बचाया जाता रहा जो उसपर दूर के बाह्य क्षेत्रों से आकर पड़ सकते थे।

हमेशा की भाँति वह अन्धकार के एक महासागर के बीच रहता रहा। ऊपर अन्धकार, नीचे अन्धकार, चारों ओर अन्धकार – निस्सीम, अनन्त, अभेद्य। और इसी अन्धकार में से उसकी भावुक प्रकृति ने प्रत्येक नयी छाप का स्वागत करने की कोशिश की – ध्वनि-प्रतिध्वनि के रूप में वीणा के तारों की तरह। वह किसी की प्रतीक्षा करता-सा लगता और ऐसा प्रतीत होता जैसे क्षण अन्धकार अपने अदृष्ट हाथों से उसके हृदय के किसी तार को छू रहा हो। और, उसमें फिर झनझनाहट पैदा हो जाती और किसी अनुभूति की इच्छा प्रबल हो उठती।

किन्तु तालुके का चिर-परिचित अन्धकार उसके लिए सदय होने के साथ ही साथ घटना-शून्य भी बना रहा।

हाँ, यदाकदा वह उसके कानों में पुराने बाग़ के वृक्षों की मधुर मर्मर ज़रूर पैदा कर देता और यह मर्मर उसके मस्तिष्क को थोड़ी शांति देती, थोड़ा संतोष। दूरस्थ दुनिया के बारे में जो कुछ उसने जाना-समझा था उसका माध्यम था उसके गाने, उसकी पुस्तकें और इतिहास। यहीं बाग़ की इस करुण मर्मर और ताल्लुक़े की मौन शान्ति के बीच उसे सुनी-सुनाई बातों द्वारा दूरस्थ जीवन की झंझाओं और कामुकताओं की भी अनुभूति हुई थी। और जब उसका ध्यान इन अनुभूतियों की ओर जाता तो वह सोचने लगता कि माया की छाया से आती हुई उसने कौनसी पुकार सुनी थी, और कैसे? गान द्वारा अथवा वीरगाथाएं या आश्चर्यजनक कहानियाँ सुन कर।

ऐसा लगा जैसे सब कुछ ठीक ठीक चलता रहा हो। माँ अपने पुत्र की ओर देखती तो उसे लगता मानो उसकी आत्मा मन्त्रमुग्ध हो गयी है। उसे यह सोच कर सन्तोष हो जाता कि उसके पुत्र को शान्ति मिल रही है और उसे किसी प्रकार का क्लेश नहीं है। वह यह कभी नहीं चाहती थी कि पुत्र की शान्ति भंग हो। उसे ऐसी प्रत्येक वस्तु से डर लगता था जो उसकी शान्ति में बाधक बन सकती थी।

एवेलिना भी अब धीरे-धीरे बड़ी हो गयी। उसकी बड़ी-बड़ी आँखें पेत्रो को देखतीं और कभी कभी बेचैन हो कर भविष्य की कल्पना करने लगतीं – न जाने उसकी तक़दीर में क्या लिखा है! परन्तु उनमें कभी असंतोष और असंयम की झलक न दिखाई दी।

इन वर्षों में पान पोपेल्स्की ने अपनी जागीर को एक आदर्श जागीर बना रखा था। परन्तु उनके अन्धे पुत्र का भविष्य! वह उनके हाथ की बात न थी। उसके बारे में जो कुछ भी किया जा चुका था उसमें उनका अपना कोई योग न था। परन्तु मक्सिम की बात दूसरी थी। उन्हें अपने शिष्य का विशेष ध्यान था, उसके लिए उनकी अपनी योजना थी। उनका तर्क था कि युवक-आत्मा को संतुलित होने तथा शक्ति का संग्रह करने का अवसर मिलना चाहिए ताकि वह जीवन की विभीषिकाओं का सामना कर सके, उनसे मोर्चा ले सके।

लेकिन सच्चा उत्साहपूर्ण जीवन घर की चहारदीवारी के बाहर था। आख़िर, वह समय आया जब उसके शिक्षक ने अनुभव किया कि पेत्रो की सीमाएं तोड़ दी जायं और घर के दरवाज़े खोल दिये जायं ताकि बाहर की ताज़ी हवा भीतर आ सके।

२

अपनी योजना का श्रीगणेश करने के लिए मक्सिम ने ताल्लुक़े में अपने एक वृद्ध मित्र को बुलाने का निश्चय किया। उसका यह मित्र लगभग सत्तर मील दूर किसी जागीर में रहता था। स्तवरुचेन्को नामक अपने इस मित्र से मक्सिम समय समय पर मिला करता था। लेकिन अब, जब मक्सिम को यह मालूम हुआ कि उसके मित्र के साथ कुछ जवान आदमी भी रह रहे हैं, तो उसने उन सबको ताल्लुक़े में आने और आतिथ्य स्वीकार करने के लिए लिखा। निमंत्रण ख़ुशी ख़ुशी स्वीकार कर लिया गया – बूढ़े ने इसलिए स्वीकार किया कि मक्सिम से उसकी पुरानी दोस्ती थी और उन युवा व्यक्तियों ने इसलिए कि मक्सिम यात्सेन्को के नाम में अब भी जादू था और पुरानी परम्पराएं अब भी उसके नाम से चिपकी हुई थीं। इन युवकों में से दो तो स्तवरुचेन्को के पुत्र थे – एक किएव विश्वविद्यालय का विद्यार्थी था, जो (जैसी कि उस समय लोगों में धुन होती थी) भाषा विज्ञान का अध्ययन कर रहा था; और दूसरा सेंट-पीटर्सबर्ग के संगीत विद्यालय में पढ़ रहा था। तीसरा एक युवक कैडेट था जो एक पड़ोसी ज़मींदार का पुत्र था।

स्तवरुचेन्को एक हृष्टपुष्ट बूढ़ा आदमी था—बाल सफ़ेद, कज़्ज़ाकों जैसी नीचे झुकी हुई लम्बी-लम्बी मूंछें, कमर में पहनी हुई लम्बी-चौड़ी कज़्ज़ाकी सलवार, पेटी में लटकता हुआ तम्बाकू का बटुआ और पाइप। बस यही उसका हुलिया था। वह सिवा उक्रइनी के दूसरी भाषा नहीं बोल सकता था। जब वह सफ़ेद उक्रइनी लबादा तथा कढ़ी हुई उक्रइनी कमीज़ें पहने अपने दोनों बेटों के बीच खड़ा हो जाता तो गोगोल का तारास बूल्बा ही लगता। किन्तु उसमें बूल्बा के रोमानी जीवन का कोई भी अंश न था। स्तवरुचेन्को एक ज़मींदार था और दुनिया देखे था। सामन्तशाही के युग में भी, जब भूदासत्व की प्रथा का बोलबाला था, सारी ज़िन्दगी उसने अपना काम पूरी होशियारी के साथ किया था। और, "आज़ादी" की हवा चलने के बाद लोगों के बीच जो नये-नये संबंध पैदा हो गये थे उनमें भी उसने अपनी पटरी बिठा ली थी। वह किसानों को उसी प्रकार जानता-समझता था जैसा कि किसी जागीरदार को जानना चाहिए—गाँव के हर किसान के बारे में, उनके खेत-खलिहानों की हर गाय और उनकी जेब के एक एक पैसे के बारे में।

हाँ, अगरचे बूढ़ा अपने बच्चों से बूल्बा जैसी मुक्केबाज़ी पर नहीं उतरता था, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि कोई भी जगह हो, कैसा भी मौक़ा हो, उनमें झपट ज़रूर हो जाती और झपट भी होती तो बड़ी तगड़ी होती। कहीं भी वे रहें और उनके साथ कैसे ही व्यक्ति क्यों न हों बस बे-बात की बात में कूद-फांद आरम्भ हो जाती और तू-तू मैं-मैं का जो सिलसिला शुरू होता वह ख़तम ही होने न आता। ज़्यादातर बात बूढ़े की तरफ़ से शुरू होती क्योंकि वह प्रायः अपने बेटों को यह कह कर छेड़ दिया करता कि "देखो तो कैसे भोले-भाले लग रहे हैं! क्या कहने!" और बेटे पैजामे से बाहर हो जाते। और, ख़ुद बूढ़ा भी जोश में आ जाता और फिर वह होहल्ला मचता कि कान धरे आवाज़ न सुनाई पड़ती। इतना ही नहीं दोनों एक दूसरे को ऐसी चुन चुन कर सुनाते कि देखने वाले दाँतों तले उंगली दबा लेते।

"पिता और पुत्र" एक दूसरे से कोसों दूर थे। उनकी आपसी झपट तो इस दूरी की एक झलक-मात्र थी। किन्तु यह झपट हमेशा होने वाली झपटों से कहीं हल्की थी। चूंकि उन दिनों के युवक बचपन से ही स्कूलों

में पढ़ने भेज दिये जाते थे इसलिए उन्हें देहातों में सिर्फ़ छठे-छिमाही, कभी कभी छुट्टियों में ही, जाने की नौबत आती थी। यही वजह थी कि उन्हें उस कृषक-समुदाय के बारे में वैसा व्यवहारिक ज्ञान न हो पाता था जैसा कि साल बसाल अपनी जागीरों पर रहने वाले उनके बाप-दादों को हुआ करता था। जब हमारे समाज में "जनता को प्यार करो" आन्दोलन छेड़ा गया उस समय स्तवरुचेन्को के बेटे माध्यमिक स्कूल के आख़िरी वर्षों में पढ़ रहे थे। लेकिन उन्होंने जनता का अध्ययन अपनी किताबों के पन्नों से आरम्भ कर दिया था। कुछ समय बाद वे बढ़ कर अध्ययन के दूसरे चरण में पहुँच गये—यानी अब उन्होंने लोक-कला में व्यक्त होने वाली "जन-भावना" का प्रत्यक्ष निरीक्षण आरम्भ कर दिया था। दक्षिण-पश्चिमी प्रदेश के धनी वर्ग के युवकों में उस समय एक विचित्र रिवाज चल पड़ा था। वह था "लोगों के बीच आने जाने का"; और जब कभी इसकी नौबत आती तो सफ़ेद उक्रइनी लबादा डाटे और चिकन की लपालप कमीज़ झमके वे गाँवों में इधर-उधर घूमा करते। ये इन लोगों की आर्थिक दशा का अध्ययन करने के निमित्त तो इनसे मिलने-जुलने न जाते, हाँ गाँव-गाँव में जाकर लोक गीतों के शब्द और संगीत लिखते, जनश्रुतियों

और अन्धविश्वासों का अध्ययन करते और इतिहास में लिखी बातों की वहाँ सुनी-सुनाई विगतकालीन बातों से तुलना करते। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वे शृंगारिक राष्ट्रीयता के कविता रूपी दर्पण में कृषक वर्ग का दर्शन किया करते थे। यह आदत बड़ी उम्र के लोगों में भी पायी जाती थी। लेकिन इतना सब होते हुए भी बूढ़ों और जवानों की रायें अलग-अलग होती थीं।

"तुम्हीं देखो!" बूढ़ा स्तवरुचेन्को मक्सिम की पसलियों में अपनी कोहनी गड़ाता हुआ उससे कहता— जब कभी उससे और उसके विद्यार्थी बेटे से कुछ तू-तू मैं-मैं हो जाती, उस समय विद्यार्थी का चेहरा लाल और आँखें अंगारे जैसी हो उठतीं—"यह उल्लू का पट्ठा! किताब की तरह बात करता है। अरे भाई, आदमी को सोचना चाहिए कि भगवान ने उसके कन्धे पर यह हंडा जैसा सिर क्यों रखा है। है न! तो दोस्त तुम्हीं देखो न, एक मामूली से किसान नेचीपोर ने उसे कैसा उंगलियों पर नचा दिया।"

बूढ़ा अपनी मूंछें मरोड़ता और क़हक़हे लगाता हुआ ज़ोर ज़ोर से अपने बेटों तथा नेचीपोर की कहानी कह

डालता। उसके वर्णन में उकइनी हास्य एवं चुटकियों की कोई कमी न रहती। जवानों का सिर शर्म से नीचा हो जाता, लेकिन तुरन्त ही उन्हें कोई न कोई जवाब सूझ जाता।

वे कहते "यह भी कोई बात हुई कि हम तुम्हारे फ़लाँ फ़लाँ गाँव के नेचीपोर या फ़ेदको को जानें ही। हमसे इन सबसे क्या मतलब, हम तो सारी जनता का अध्ययन कर रहे हैं, एक ऊंचे ध्येय को सामने रख कर जीवन का अध्ययन कर रहे हैं। यही एक तरीक़ा है जिससे ठीक ठीक निष्कर्ष निकाले जा सकते थे और सामान्य रूप से कोई निश्चित बात कही जा सकती है। एक ही नज़र में हम बड़ी-बड़ी सम्भावनाएं देख सकते हैं। हमारे कुछ बुज़ुर्ग तो सिर्फ़ लकीर पीटा करते थे।"

बूढ़ा जब अपने बच्चों को इस प्रकार बुद्धिमानों की तरह तर्क करते देखता तो रुष्ट न होता।

"तुम कह सकते हो कि उन्होंने स्कूल की हवा खायी है," श्रोताओं की ओर सगर्व देखते हुए वह कहने लगता—और फिर अपने पुत्रों की तरफ़ मुखातिब हो कर कहता, "तुम कह चाहे जो लो लेकिन मेरा फ़ेदको अगर

चाहे तो तुम्हारी नाक में नकेल डाल कर तुम्हें कहीं भी घुमा सकता है, बछड़ों की तरह! मैं ठीक कहता हूं। और मैं, मैं उस शैतान फ़ेदको को इस बटुए में भर कर अपनी जेब में रख सकता हूँ। समझे! और इससे नतीजा क्या निकलता है—यही न, कि मेरे जैसे खुर्राट कुत्ते के आगे तुम दुम हिलाते हुए पिल्ले हो, पिल्ले!"

३

इनमें से एक बहस अभी अभी समाप्त हुई थी। बुज़ुर्गवार घर में चले गये थे, और खुली हुई खिड़कियों में से स्तवरुचेन्को की आवाज़ साफ़ सुनाई पड़ रही थी। वह कुछ चुटकुले बयान कर रहा था और लोग सुन सुन कर लोटपोट हो रहे थे।

युवकों की टोली जहाँ थी वहीं रह गयी—बाग़ में। विद्यार्थी बेटा घास पर लबादा बिछाये मस्त लेटा था; न दुनिया की फ़िक्र न जहान की ख़बर। उसका बड़ा भाई एवेलिना की बग़ल में था और कैडेट गले तक बटन मारे ठीक उसी के पास। प्योत्र भी यहीं दूसरों से कुछ हट कर खिड़की पर झुका बैठा था। उसका

सिर लटका हुश्रा-सा था। वह उस वाद-विवाद के बारे में सोच रहा था जिसे उसने श्रभी श्रभी सुना था। इसमें उसने बड़ी दिलचस्पी ली थी।

"पान्ना एवेलिना इस सब बातचीत के बारे में तुम्हारा श्रपना क्या ख़्याल है?" बड़े भाई ने पूछा, "तुमने तो एक शब्द भी नहीं कहा।"

"क्यों, यह सब कुछ बहुत श्रच्छा था – मेरा मतलब है श्राप लोगों ने श्रपने पिता से जो कुछ कहा। सिर्फ़ ..."

"सिर्फ़ क्या?"

एवेलिना ने तुरन्त कोई उत्तर नहीं दिया। उसने कढ़ाई घुटनों पर रख दी, उसपर थोड़ा हाथ फेरा श्रौर उसे ध्यान से देखने लगी। यह कहना मुश्किल है कि वह क्या सोच रही थी – शायद यह कि श्रगर उसने कढ़ाई में दूसरा नमूना डाला होता तो ज़्यादा श्रच्छा होता, या शायद यह कि उससे जो प्रश्न किया गया है श्रब वह उसका क्या उत्तर दे।

युवक मंडली उत्तर सुनने को बेचैन थी। विद्यार्थी पलट कर कोहनी के बल लेट गया श्रौर उत्सुकता से उसने सिर थोड़ा श्रौर ऊपर उठा दिया। उसका बड़ा भाई

शान्त, प्रश्नसूचक नेत्रों से उसे देखता हुआ बैठा रहा। प्योत्र ने भी अपना सिर ऊपर उठाया लेकिन एक ही क्षण बाद अपना चेहरा एक ओर घुमा लिया।

"सिर्फ़ यह कि" एवेलिना ने धीरे से कहा, वह अभी तक कढ़ाई पर हाथ फेरे जा रही थी, "हर कोई ज़िन्दगी के एक ही रास्ते पर नहीं चलेगा। हम सब अपना अपना भाग्य साथ लाये हैं।"

"हे भगवान," विद्यार्थी तड़ से बोल उठा, "कितनी गम्भीर विद्वत्ता है! वाह। तुम्हारी उम्र क्या है, पान्ना एवेलिना, ज़रा बताओ तो!"

"सत्रह," उसने धीरे से जवाब दिया लेकिन फिर तुरन्त ही उत्सुकता से कहने लगी, "तुम्हारा ख़्याल था ज़्यादा होगी?"

युवक मंडली हँस पड़ी।

"यदि मुझसे तुम्हारी उम्र पूछी जाय," बड़ा भाई बोला, "तो मैं तेरह और तेईस के बीच कहूंगा क्योंकि कभी कभी तो तुम बच्ची जैसी लगती हो, सचमुच बच्ची जैसी, और कभी बुढ़ियों की तरह बात करती हो।"

"गम्भीर मामलों में गम्भीरता के साथ ही बात करनी चाहिए, गव्रीलो पेत्रोविच," युवती ने बुद्धिमानी दिखाते हुए उत्तर दिया और फिर कढ़ाई करने लगी।

मौन का वातावरण छा गया। एवेलिना की सूई पूरी गति से अपना काम कर रही थी। और नवागत इस नन्ही किन्तु शान्त एवं धीर युवती की ओर उत्सुक दृष्टि से देख रहे थे।

४

प्योत्र के साथ पहली मुलाक़ात के बाद से एवेलिना बड़ी बेशक हो गयी थी लेकिन छोटे स्तवरुचेन्को का कहना ग़लत न था। उसके दुबले-पतले शरीर पर पहली नज़र पड़ते ही कोई भी उसे बालिका से अधिक नहीं कह सकता था। लेकिन फिर भी उसकी मन्थर किन्तु समान गति में ऐसी कोई बात ज़रूर झलक जाती जिसकी वजह से उसमें वयस्क नारी का भ्रम होने लगता। उसके चेहरे से भी इसी बात का आभास मिलता। मैं समझता हूं, ऐसे मुखड़े स्लावों में देखने को मिलते हैं: आकृति—आकर्षक और कोमल-मृदुल; आँखें—नीली, शान्त और अचंचल; गाल—सुन्दर और बर्फ़ जैसे मुलायम

जिनपर कभी कभी गुलाबी दौड़ जाया करती। उसके लम्बे-लम्बे, सुनहरे बाल कनपटी पर होते हुए जूड़े के रूप में बंधे रहते। और जूड़ा इतना भारी हो जाता कि चलते समय सिर को पीछे की ओर खींचता-सा लगता।

प्योत्र भी बड़ा और समझदार हो गया था। इस समय वह युवक मंडली से थोड़ा हट कर बैठा था और यदि कोई उसे देखता तो वह उसके खूबसूरत चेहरे पर निगाह डालते ही प्रभावित हो उठता क्योंकि उसका चेहरा भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से दूसरों से भिन्न था; और आत्मा के प्रत्येक संवेदन के साथ उसमें रह रह कर परिवर्तन हो रहे थे। उसके मस्तक पर कभी कभी एक आध हल्की झुर्रियाँ दिखाई पड़ जातीं। उसके काले-काले घुंघराले बाल अपनी निराली छटा दिखा रहे थे। उसके गालों में कभी लाली दौड़ती, कभी सफ़ेदी। कभी कभी उसके नीचे की ओर मुड़े हुए ओंठ पर भय जैसी थरथराहट होने लगती। उसकी भौहें भी बराबर चंचल बनी रहतीं। किन्तु उसकी सुन्दर आँखें जब जड़वत् किसी एक ही दिशा में स्थिर दिखाई पड़तीं तो उसके चेहरे पर निराशा की एक असाधारण झलक दौड़ जाती।

"और इसलिए," विद्यार्थी ने कुछ देर बाद कहना शुरू किया, "पान्ना एवेलिना का विचार है कि हम जिन बातों के बारे में कह सुन रहे थे वे औरत के दिमाग़ के बाहर की चीज़ें हैं, और उसकी दुनिया चूल्हा फूंकना या बच्चों की देखरेख करना है, बस।"

युवक की ध्वनिव्यंजना में आत्मसंतोष की झलक थी (क्योंकि उस समय ये विचार एकदम नये थे) और व्यंग की उक्ति। एक क्षण फिर शांति छायी रही। एवेलिना उत्तेजित हो उठी।

"आप अपने निष्कर्षों पर आने में जल्दबाज़ी कर रहे हैं," उसने जवाब दिया, "मैंने आप सब की बातें अच्छी तरह समझी हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि इन बातों को कोई भी औरत समझ सकती है। मैंने जो भाग्य वाली बात कही थी उसका आशय मेरे अपने यानी मेरे निजी जीवन से था।"

वह चुप हो गयी और अपने काम में इतने मनोयोग से जुट गयी कि युवक की शक्ति भी जवाब देने लगी।

"तुम कैसी विचित्र बातें कर रही हो," उसने घबड़ा कर कहना शुरू किया, "तुम्हें देख कर तो कोई

भी कह सकता है कि तुमने अपने जीवन-क्रम की पूरी-पूरी योजना तैयार कर ली होगी मरने तक की।"

"लेकिन इसमें विचित्र कौनसी बात है?" एवेलिना ने तत्काल उत्तर दिया, "मुझे विश्वास है कि खुद ईल्या इवानोविच ने भी," — यह कैडेट का नाम था — "अपने जीवन की पूरी-पूरी योजना बना ली है! और वह तो अभी मुझ से छोटा ही है! है न?"

"तुम बिल्कुल ठीक कहती हो," अपने नाम को बातचीत के बीच आता हुआ देख कर कैडेट प्रसन्नतापूर्वक बोला, "तुम्हें मालूम है कि मैंने कुछ समय पहले न० न० की आत्मकथा पढ़ी थी। उसका सारा जीवन योजनानुसार ही चलता था। उसने बीस साल में ब्याह किया और पैंतीस में कमांडर बन गया।"

विद्यार्थी उसे चिढ़ाते हुए हँस दिया। एवेलिना के गाल फिर लाल हो उठे।

"यही बात है," एक क्षण रुकने के बाद एवेलिना ने कहना शुरू किया, "हम सब अपनी-अपनी तक़दीर साथ लाये हैं।"

इस बात पर आगे किसी ने भी बहस करने का प्रयत्न नहीं किया। युवक मंडली पर चुप्पी छा गयी।

सबने यह अनुभव किया था कि उनकी बातचीत ने किसी के अन्तस् के कोमल तारों को झनझना दिया है; और एवेलिना के सीधे-सादे शब्दों में उसके अन्तस् के उद्गारों पर परदा डालने की कोशिश की गयी थी।

इस नीरवता को मनुष्यों के मुंह से निकले हुए शब्दों ने नहीं अपितु वृक्षों की मर्मर ने भंग किया। अंधेरा हो रहा था और पुराने बाग़ के वृक्ष असन्तुष्ट होकर आपस में फुसफुसाते-से दिखाई दे रहे थे।

५

यह सारी बातचीत, तर्क-वितर्क, जवानी की आशाएं और दिलचस्पियाँ, सम्मतियाँ और विश्वास एक तूफ़ान की भाँति अन्धे युवक पर छा गये। पहले तो उसने सारी बातें बड़ी उत्सुकता से सुनीं और उसका चेहरा ख़ुशी से दमक उठा, किन्तु कुछ देर बाद ही उसे मालूम हो गया कि इस तूफ़ान ने उसे अपने साथ बहा ले जाने का कोई प्रयत्न नहीं किया और उसने उसमें कोई दिलचस्पी नहीं पैदा की। युवक से कोई भी प्रश्न नहीं किये गये थे, उसकी

कोई भी राय नहीं माँगी गयी थी। इन मामलों में उसे दूध की मक्खी की भाँति निकाल कर फेंक दिया गया था मानो उसका अपना कोई महत्व ही न हो।

किन्तु वह अब भी बड़ी दिलचस्पी के साथ सारी बातें सुन रहा था क्योंकि वे उसके लिए बिल्कुल नयी, बिल्कुल विचित्र थीं। और जब वह इन्हें सुनता तो उसकी भौंहें खिंच जातीं और उसके श्वेत मुख पर ऐसे भाव आने लगते मानो वह हर बात में पूरी दिलचस्पी ले रहा हो, मानो हर बात उसके दिल में बैठती जा रही हो। मगर यह दिलचस्पी सुखकर न थी। उसके मस्तिष्क में उठने वाले विचार उसके दिल पर बोझ बन रहे थे, उसे कचोट रहे थे।

शोकाकुल माता अपने पुत्र की गतिविधि पर निगाह रखती रही। एवेलिना की आँखों में सहानुभूति थी और आशंका भी। केवल मक्सिम ही इस बात पर कोई ध्यान न दे पाया कि उसके शिष्य पर क्या बीत रही है। पूरे अतिथि-सत्कार के साथ उसने अपने मित्रों से बार बार आने का अनुरोध किया और उनसे वादा किया कि वह उनके लिए मानव-जाति-शास्त्र विषयक ढेर सी रुचिकर सामग्री इकट्ठी करके रख लेगा।

लौटने का वादा करके वे लोग चले गये। युवकों ने जाते समय प्योत्र से हाथ मिलाया जिससे उनकी मैत्री का परिचय मिलता था। उसने भी उसी भाव से हाथ मिला कर जवाब दिया और जब वे गाड़ियों पर बैठ कर चले गये तो वह बड़ी देर तक पहियों की गड़गड़ाहट सुनता रहा और फिर शीघ्रता के साथ मुड़ा और बाग़ में जा कर अदृश्य हो गया।

उन लोगों के चले जाने के बाद ताल्लुक़े में फिर पहले की ही तरह मौन व्याप्त हो गया। किन्तु प्योत्र को लग रहा था कि यह मौन पहले जैसा नहीं है। इसमें कोई विचित्रता, कोई असाधारणता ज़रूर है। इस नीरवता में उसे ऐसा लगता कि यहीं, ठीक यहीं, कोई ऐसी बात हो गयी है जिसका कोई विशेष महत्व है। उन शान्त पथों पर सिवा बीच और लिलक वृक्षों की मर्मर के और कोई भी आवाज़ नहीं सुनाई पड़ती थी। वहाँ उसे ऐसा लगता जैसे वह हाल ही की हुई बातों की प्रतिध्वनियाँ सुन रहा हो। और सचमुच कभी कभी उसे, खुली हुई खिड़कियों में से, बैठक में होने वाला वाद-विवाद और अपनी माँ की आवाज़ सुनाई पड़ती जिसमें दर्द भी होता और तर्क भी। फिर एवेलिना की

आवाज़ आती जिसमें रोष होता, कर्कशता होती। और प्रत्यक्षत: दोनों ही आवाज़ें मक्सिम के विरोध में उठतीं। मक्सिम आरोपों का दृढ़ता से किन्तु सरोष उत्तर देता। यदि इसी समय प्योत्र कहीं दिखाई पड़ जाता तो बातचीत का यह सिलसिला टूट जाता और मौन छा जाता।

मक्सिम ने जान-बूझ कर उस दीवाल को ढहा देने का प्रयत्न किया था जो उसके अन्धे शिष्य का दुनिया से संबंध तोड़ने पर अड़ी हुई थी। अब उस दीवाल में दरार पड़ चुकी थी और उससे हो कर आने वाले झोंकों ने प्योत्र की आध्यात्मिक शान्ति को झकझोर दिया था।

अब प्योत्र अपनी चहारदीवारी में बन्द रहते रहते ऊब उठा। घर का मौन शान्त वातावरण उसे काटने को दौड़ने लगा, ताल्लुक़े के पुराने बाग़ की मर्मर और सरसर में उसके लिए कोई आकर्षण न रह गया और उसकी युवा आत्मा फड़फड़ा उठी। उसे अन्धकार से आती हुई नयी-नयी आवाज़ें सुनाई दीं, जो उसे पुकार रही थीं, फुसला रही थीं। यह अन्धकार नयी-नयी अनुभूतियों के प्रति सजग था। और ये अनुभूतियाँ स्पष्ट न थीं किन्तु उसके मानस में प्रवेश कर उसे

झकझोर रही थीं, उसे अपूर्त तृष्णाओं से भरे दे रही थीं।

लग रहा था जैसे अन्धकार उसे कुछ संदेश दे रहा है, अपनी ओर बुला रहा है; और इस प्रथम आह्वान ने उसपर कुछ चिह्न छोड़ रखे हैं। उसका चेहरा श्वेत पड़ गया और हृदय में एक कसक उठने लगी।

माँ और एवेलिना ने उसकी इस उद्विग्नता को देखा था। विचित्र बात है कि हम आँख वाले जब दूसरों के अन्तम् की उथल-पुथल को उनके मुंह पर प्रतिबिम्बित होते देखते हैं तो धीरे-धीरे यह भी सीख लेते हैं कि हृदय के भाव हमारे मुंह पर न झलक जायं। मगर अन्धे इस मामले में असहाय हैं। प्योत्र का श्वेत चेहरा मेज़ पर पड़ी डायरी की तरह आसानी से पढ़ा जा सकता था और इस मुखाध्ययन से पता चलता था कि उसके हृदय में कोई तूफ़ान अंगड़ाइयाँ ले रहा है। उन्होंने देखा था कि जिस प्रकार प्योत्र के मुखमंडल का उन्होंने अध्ययन किया था उसी प्रकार मक्सिम ने भी किया था और उन सबको लग रहा था कि उसके दिमाग़ में कोई फ़ितूर उठ रहा है जिसे वह कार्यान्वित करना चाहता है। उनका विचार था कि यह बड़ा अशुभ है,

बड़ा भयंकर है। अगर माँ का वस चलता तो अपने जीवन की बलि देकर भी वह बच्चे की रक्षा करती। मक्सिम का कहना था कि प्योत्र एक गर्म पौध-घर में रह रहा था। मगर इससे क्या, उसका बेटा वहाँ आराम से तो है... जैसा वह हमेशा से रहता आया है वैसा ही रहता रहे – शान्त, संयमित, संतुलित। एवेलिना अपने विचार स्पष्ट नहीं कर रही थी। लेकिन मक्सिम के प्रति उसकी धारणा बदल गयी थी। अब वह उसके बहुत से प्रस्तावों से, यहाँ तक कि उसकी छोटी से छोटी बातों से भी, विरोध प्रकट करती और यह विरोध इतना प्रखर होता कि मक्सिम चकरा जाता। और जब वह अपनी अनुभवी आँखों से एवेलिना के चेहरे में कुछ पढ़ने का प्रयत्न करता तो उसे उसमें क्रोध की लाली दिखाई पड़ जाती और वह अपना सिर हिलाने लगता, फिर कुछ बड़बड़ाता और पाइप के धुएं से अपने आपको सारे का सारा ढक लेता, जो इस बात की निशानी होती कि उसके दिमाग़ में उथल-पुथल मची हुई है। मगर वह अपनी बात पर अड़ा रहता और प्रायः ऐसी-ऐसी बातें कह जाता जिनका तात्पर्य बड़ा गूढ़ और मार्मिक होता: "औरतों के प्रेम ने ही तो सारा गुड़-गोबर किया

है, उन्हें कुछ आता जाता भी है, दिमाग़ के नाम पर तो सिर में भूसा भरा है भूसा। कोई मैं अकेला कहता हूं, दुनिया कहती है। जो कुछ हो रहा है–अच्छा-बुरा, सुख-दुख–उन्हें सिर्फ़ उसी से मतलब; बाद में जो होगा देखा जायगा।" बेशक ये सारी बातें वह किसी को सम्बोधित करते हुए न कहता। प्योत्र के लिए वह शान्ति ही नहीं अपितु जीवन की उच्च से उच्च पूर्णता भी चाहता था, वह पूर्णता जिसे प्राप्त करना सम्भव था। लोगों का कहना है कि हर शिक्षक यही चाहता है कि मेरा शिष्य आगे चल कर मेरे जैसा ही बने। मक्सिम भी अपने भांजे से सिर्फ़ वही चाहता था जिसका उसने स्वयं अनुभव किया था और जिसे शीघ्र ही खो दिया था–संघर्ष पूर्ण जीवन, विचारों का मानसिक द्वन्द्व जिसमें उत्तेजना हो, उद्दीपन हो। मगर यह सब हो कैसे? इसके बारे में वह स्वयं कुछ भी न जानता था। हाँ, उसने इस बात का पूरा प्रयत्न किया कि उसे बाह्य संसार का ज्ञान हो जाय भले ही इससे उसके हृदय को चोट लगे या उसकी आध्यात्मिकता धूल में मिल जाय। वह जानता था कि उसकी बहन और एवेलिना जो कुछ चाहती हैं वह उसके अपने विचारों से बिल्कुल भिन्न है...

"माँ की ममता अन्धी है!" वह कभी कभी बड़बड़ा उठता और बैसाखी को फ़र्श पर तेज़ी से खटखटाता हुआ कमरे में इधर उधर घूमने लगता। परन्तु क्रोध के क्षण कम ही आ पाते। साधारणतया वह अपनी बहन के तर्कों का सीधा-सादा जवाब दे देता। और जब कभी एवेलिना वहाँ न होती तो वह उसके तर्कों के आगे झुक भी जाती। लेकिन एवेलिना की मौजूदगी में तो ये तर्क-वितर्क और भी अधिक प्रबल हो जाते, और ऐसे मौक़ों पर बूढ़े को चुप्पी साधनी पड़ती। ऐसा लगता कि इन दोनों में कोई मुठभेड़ हो रही है, ऐसी मुठभेड़ जिसमें प्रत्येक अपने प्रतिद्वन्द्वी पर निगाह रखता है और दूसरे को अपने मन की थाह नहीं लगने देता।

६

जब दो सप्ताह बाद मेहमान फिर ताल्लुक़े में आये तो एवेलिना ने उनका खुल कर स्वागत न किया। लेकिन उनके यौवन के आकर्षण से वह अप्रभावित हुए बिना न रह सकी। दिन प्रति दिन युवक मंडली गाँव

में घूमने निकल जाती, जंगलों में शिकार खेलने चली जाती या खेतों में जा कर अनाज कटाई के समय गाये जाने वाले गीत लिखा करती। शाम को वे लोग आकर बाग़ में एकत्र होते और मकान के पास जम जाते। एक दिन सायंकाल, इसके पहले कि एवेलिना को यह मालूम हो सके कि क्या हो रहा है, बातचीत का प्रसंग कुछ अप्रिय विषयों पर केन्द्रित हो गया। प्रसंग कैसे आरम्भ हुआ, किसने आरम्भ किया यह न तो वह स्वयं जान सकी न कोई दूसरा ही। सूरज कब डूबा, कब गोधूलि की बेला आयी और कब झाड़ियों में बुलबुल ने अपनी चहक से वातावरण को जीवन प्रदान किया इन सब का भी किसी को पता न चला।

विद्यार्थी ने अपनी बातचीत में, अपनी शब्दावली में यौवन-सुलभ चटपटाहट का प्रयोग किया और बिना किसी भय अथवा हिचकिचाहट के भविष्य की अपनी उन योजनाओं पर प्रकाश डाला जिनका संबंध स्वयं उसी से था। उसके कथन में विश्वास का बल था और वह पूर्ण आस्था के साथ अपने भविष्य और उसकी काल्पनिक सुखानुभूतियों के बारे में बातें कर रहा था।

एवेलिना के गाल लाल हो उठे और उसने स्पष्ट यह अनुभव किया कि ये बातें उसे, और केवल उसे ही, लक्ष्य करके कही जा रही हैं।

वह अपनी कढ़ाई पर और भी झुक गयी। उसकी आँखों में चमक थी और गाल आग की तरह जल रहे थे। हृदय तेज़ी से धड़क रहा था... किन्तु धीरे-धीरे उसकी आँखों की चमक और गालों की जलन कम हुई। मगर हृदय अब भी तेज़ी से धकधक कर रहा था। सहसा उसके ओंठ दबे और उसके चेहरे पर भय की एक रेखा दौड़ गयी।

भय! एवेलिना को ऐसा लगा कि उसकी आँखों के सामने की अंधेरी दीवाल में दरार पड़ गयी है और अब इसी दरार में से उसे उस नयी दुनिया के सुखद एवं मनोहर दृश्य दिखाई पड़ रहे हैं जिसमें सौंदर्य है, जीवन है, स्फूर्ति है।

हाँ, यह दुनिया न जाने कब से उसे अपनी ओर बुला रही थी। कई बार वह पुराने बाग़ में किसी पेड़ के नीचे बैठ जाती और विचित्र-विचित्र कल्पनाएं किया करती – उसकी कल्पना के समक्ष दूरस्थ स्थानों के मनोरम दृश्य होते जो उसे अपनी ओर आकृष्ट किया करते। अपनी

इन कल्पनाओं में उसने अन्धे पेत्रो को कोई स्थान न दिया था...

अब यह संसार उसे सहसा अपने बिल्कुल निकट दिखाई पड़ने लगा। वह केवल उसे अपनी ओर बुलाता ही न प्रतीत होता अपितु ऐसा भी लगता मानो उसका उसपर कोई ऐसा अधिकार है जिसका वह प्रयोग कर रही है।

एवेलिना ने प्योत्र पर एक सरसरी निगाह डाली और उसके हृदय में एक टीस-सी उठी। वह शान्त, विचारशील मुद्रा में बुत बना बैठा था। उसकी आकृति-प्रकृति में कुछ इतनी विषमता थी कि वह उसे जल्दी न भूल सकी। "वह समझता है, सब कुछ समझता है।" और जैसे ही यह विचार उसके दिमाग़ में घूमा कि वह फिर उदास हो गयी और उसका हृदय इतनी ज़ोरों से धड़कने लगा कि चेहरा तक फक पड़ गया। एक क्षण के लिए उसे लगा कि वह स्वयं तो उस दूरस्थ, मनोरम संसार में पहुँच गयी है, लेकिन प्योत्र! प्योत्र सिर झुकाये अकेले वहीं, उसी वीराने में, बैठा है... नहीं, यहाँ नहीं... उसे याद आया वह दिन जब एक छोटा सा अन्धा बच्चा नदी किनारे के एक टीले पर बैठा था और वह उसपर बरस रही थी...

और उसे डर लगने लगा। उसके हृदय में एक कसक उठी, एक पीड़ा, एक वेदना।

अब उसे याद आयीं मक्सिम की वे आँखें जो पिछले कुछ दिनों में कई बार उसकी ओर घूम चुकी थीं। तो उन बड़ी-बड़ी, ख़ामोश नज़रों का यह मतलब था! उसने उसकी मानसिक स्थिति समझ ली थी और शायद यह भी जान लिया था कि अपनी पसन्द की चीज़ चुनने में वह अब भी स्वतंत्र है, लेकिन फिर भी उसे अपने पर विश्वास न होता... परन्तु मक्सिम ग़लती पर था! हाँ वह जानती थी कि उसका पहला क़दम क्या होगा और उस क़दम को उठाने के बाद वह जीवन से जितना लाभ उठा सकेगी उठायेगी।

उसने एक गहरी साँस ली, एक आह भरी और अपने चारों ओर एक उड़ती-सी नज़र डाली। वह न जान सकी कि वे कितनी देर इस प्रकार मौन बैठे रहे। विद्यार्थी ने कुछ और भी कहा, कहा भी या नहीं और कब उसने कहना बन्द किया—यह सब वह न जान सकी। उसने उधर देखने के लिए निगाह उठायी जहाँ प्योत्र बैठा हुआ था...

वह वहाँ नहीं था।

७

"आप लोग मुझे क्षमा करें," अपनी कढ़ाई समेटते हुए वह बोली, "मैं कुछ देर के लिए आपसे क्षमा चाहूंगी।"

और वह बाग़ की पगडंडी से होती हुई निकल गयी।

एवेलिना को ही शाम के ये घंटे दुखद प्रतीत हुए हों यह बात न थी। रास्ते के मोड़ पर उसे कुछ दूर से आती हुई अस्पष्ट आवाज़ें सुनाई देने लगीं। पास ही एक बेंच पर मक्सिम और आन्ना मिखाइलोव्ना बैठे बातचीत कर रहे थे। दोनों ही चिन्ताग्रस्त लग रहे थे।

"यही बात है। मैं भी इसी लड़की के बारे में सोच रहा था वैसे ही जैसे मैं प्योत्र के बारे में सोचता हूं," मक्सिम कह रहा था, "एक क्षण के लिए तुम्हीं सोचो। वह तो अभी बच्ची है। जीवन क्या है इसे वह अभी नहीं समझती। तो, क्या तुम उसकी अबोधता का लाभ उठाओगी? तुम यह नहीं करोगी, सचमुच नहीं करोगी!"

और जब माँ कुछ जवाब देने को हुई तो उसकी पलकें आँसुओं से भीग गयीं।

"मक्स, लेकिन मक्स... यदि उसने... तो क्या... मेरे बेटे का क्या होगा?"

"जो भी हो," बूढ़ा सिपाही दृढ़ता से बोला। उसकी आवाज़ भारी हो रही थी, "अगर ऐसा वक़्त आया तो हमसे जो भी बन पड़ेगा करेंगे। लेकिन किसी भी हालत में उसके दिमाग़ में यह बात न आनी चाहिए कि उसके कारण किसी का जीवन बरबाद हो गया है... हाँ, आन्ना तुम और मैं– क्या हमारे आत्मा नहीं है? तुम्हें इसका भी ख़्याल करना पड़ेगा," उसकी आवाज़ धीमी पड़ गयी।

बहन का हाथ उठाते हुए उसने उसे चूम लिया और आन्ना मिखाइलोव्ना ने अपना सिर झुका दिया।

"मेरा बेटा, मेरा बेटा! अगर वह उससे न मिला होता तो कितना अच्छा होता," वह इतने धीरे से बोली कि एवेलिना सुन तो न पायी, हाँ, उसने यह अनुमान ज़रूर लगा लिया था कि माँ ने क्या कहा था।

लड़की एक क्षण के लिए फिर रुक गयी। उसके हृदय

में एक टीस-सी उठी। यदि इस समय वह उनके पास से हो कर गुज़र जाती तो वे अवश्य समझ लेते कि उसने उनकी गुप्त बातें सुन ली हैं।

लेकिन तभी सगर्व उसने अपना सिर उठाया। आख़िर उसने ख़ुद तो छिप छिप कर किसी की बातें सुनी नहीं। और फिर कृत्रिम लज्जा के कारण ही तो वह रुकेगी नहीं! इसके अलावा चचा मक्सिम ने अपने ऊपर ज़रूरत से ज़्यादा ज़िम्मेदारी ले ली थी। उसकी ज़िन्दगी अपनी ज़िन्दगी है और उसके साथ वह जो चाहे सो करे। उसे रोकने वाला कौन?

और, सिर ऊंचा किये हुए वह धीरे-धीरे उस रास्ते से हो कर निकलने लगी जहाँ वे बैठे थे। मक्सिम ने अपनी बैसाखी जल्दी से रास्ते में से हटा ली। और आन्ना मिखाइलोव्ना अपनी दयनीय दृष्टि से उसे देखती रही जिसमें स्नेह की अनुभूति थी, प्रशंसा की अभिव्यक्ति थी और भय का संचार था। उसका माँ का दिल यह अनुभव कर रहा था कि यह सुन्दर गर्वीली लड़की, जो उनपर सरोष दृष्टि डालती हुई निकली जा रही है, उसके पुत्र के भावी जीवन के लिए सुख का कारण भी हो सकती है और दुख का भी।

८

बाग़ के एक किनारे एक पुरानी पनचक्की थी जो किसी काम नहीं आ रही थी। अरसे से उसकी चक्कियाँ बन्द पड़ी थीं, उसके धुरों में काई उग आयी थी और जलमार्ग के अवरोधक फाटकों में दरारें पड़ जाने से उसमें इधर उधर से हो कर पानी बहा करता था। अन्धा युवक प्रायः इसी जगह आ जाया करता और घंटों बांध के पास बैठा बैठा झरते हुए जल की कलकल सुना करता। और तब घर जा कर पियानो पर वैसी ही ध्वनियाँ निकाला करता। लेकिन अब इस कलकल के लिए भी उसके हृदय में कोई जगह न रह गयी थी... अब वह वहाँ जा कर केवल चहलक़दमी करता, तरह तरह की बातें सोचता और कभी कभी विचारों में इतना तन्मय हो जाता कि हृदय में उठने वाली हूक के कारण उसका चेहरा तक विकृत हो उठता।

एवेलिना के पैरों की हल्की चापें सुन कर प्योत्र कुछ देर के लिए रुक गया। वह भी उसके पास तक आयी और उसने उसके कंधे पर हाथ रख दिया।

"प्योत्र, मुझे बताओ," उसने कहना शुरू किया, "मुझे बताओ बात क्या है? तुम इतने परेशान क्यों रहते हो?"

लेकिन प्योत्र तेज़ी से एक तरफ़ घूमा और पगडंडी पर चलने लगा। एवेलिना बराबर उसी के साथ बनी रही।

एवेलिना ने उसके मौन का और इस तरह एकदम घूम जाने का अभिप्राय समझा और एक क्षण तक सिर लटकाये चुपचाप उसके साथ चलती रही। पीछे से कोई गा रहा था—

ऊंचे पहाड़ों की चोटियों को देखो—
और, सुनो उनपर मंडराते
बाज़ों के स्वर तेज़ से—
देखो, वे—
कैसे ऊंचे ही, बस, ऊंचे उड़े जाते हैं—
नीचे फिर उतरते हैं—
हवा के समुन्दर में डुबकी-सी
लगाते हैं—
टूट पड़ते हैं जो शिकार देख पाते हैं!

दूर से आते हुए गाने की सुरीली धुन में प्रेम

की अनुभूति और सुख की कल्पना थी। यह गान सायंकालीन वातावरण में गूंज गूंज कर बाग़ से आने वाली मर्मर ध्वनियों को दबाता-सा प्रतीत हो रहा था।

युवक प्रसन्न थे और जीवन की रंगीनियों की बातें करके उसमें और भी अधिक मधुरता बिखेर रहे थे। कुछ ही मिनट पहले एवेलिना भी उन्हीं के साथ थी, उन्हीं की तरह सोचती-विचारती थी और उन्हीं की तरह एक आकर्षक जीवन के स्वप्न देख देख कर मस्ती में झूम रही थी। उसके इन स्वप्नों में प्योत्र के लिए कोई स्थान न था। वह कब उठ कर चल दिया यह भी एवेलिना को न मालूम हो सका था। और कौन जाने इस अकेलेपन में पीड़ा और कसक के ये थोड़े से क्षण प्योत्र के लिए कितने लम्बे हो गये थे?

प्योत्र की बग़ल में चलते चलते एवेलिना यही सब सोच-विचार रही थी। उसे प्योत्र के साथ बातचीत करने तथा उसकी मानसिक स्थिति बदलने में आज से पहले कभी इतनी परेशानी न हुई थी। लेकिन वह इस समय भी इस बात का अनुभव कर रही थी कि उसकी उपस्थिति ने प्योत्र की उदासीनता में कुछ कमी अवश्य कर दी है।

अधिक देर न लगी होगी कि प्योत्र की तेज़ चाल कुछ धीमी पड़ी और उसका चेहरा भी कुछ स्वस्थ होने लगा। पास में एवेलिना का अनुभव करते हुए उसके हृदय की पीड़ा कुछ कम हुई, लेकिन साथ ही उसमें एक ऐसी मृदु अनुभूति भी जाग्रत हुई जो यद्यपि उसके लिए पूर्वपरिचित थी फिर भी वह क्या थी यह वह नहीं बता सकता था। हाँ, वह यह ज़रूर समझता था कि यह अनुभूति उसके लिए मरहम का काम कर रही है। वह इसके आगे ख़ुशी से झुक जाता।

"बताओ क्या बात है?" एवेलिना ने फिर पूछा।

"कोई ख़ास बात नहीं," प्योत्र ने जवाब दिया। उसकी आवाज़ में तीखापन था। "बात सिर्फ़ इतनी ही है कि मुझे लगता है कि दुनिया में मैं किसी मर्ज़ की दवा नहीं, दुनिया को मेरी कोई ज़रूरत नहीं। मैं यहाँ बोझ बन कर जीता हूं, सिर्फ़ बोझ बन कर।"

घर से आता हुआ सुनाई पड़ने वाला गाना बन्द हो चुका था। कुछ क्षण सन्नाटा रहा, किन्तु थोड़ी ही देर के बाद उन्हें एक नये गाने की आवाज़ सुनाई दी जो बहुत

धीमी थी। यह एक पुराना उक्रइनी "दुमका" था जिसे बन्दूरियों* की शैली पर हल्के हल्के गाया जाता था। कभी कभी गवैये की आवाज़ धीमी पड़ जाती लेकिन श्रोता के दिल के तार झनझनाते रहते। थोड़ी ही देर बाद वृक्षों की मर्मर के बीच से आती हुई सुरीली धुन धीमे-धीमे फिर सुनाई पड़ने लगती।

प्योत्र सहसा उसे सुनने के लिए रुका।

"जानती हो," उसने कहना आरम्भ किया, "हमारे बुज़ुर्ग प्रायः कहा करते हैं कि दुनिया गर्त की ओर जा रही है और रहने योग्य नहीं रह गयी है। मुझे लगता है यह बात ठीक है। पुराना ज़माना अन्धों तक के लिए आज से अच्छा था। अगर मैं उस ज़माने में होता तो पियानो की जगह बन्दूरा बजाता और नगरों और देहातों में घूम घूम कर उनमें संगीत का प्रसाद बांटा करता... लोग मुझे सुनने के लिए टूट पड़ते और मैं उन्हें उनके बाप-दादाओं की वीर गाथाएं, उनके महान कार्य और उनकी तारीफ़ें सुनाता फिरता। अन्धा भी होता तो भी दुनिया में मेरी

*उक्रइनी वाद्य – बन्दूरा – बजाने वाले।

कोई जगह तो होती। जबकि अब... वह कैडेट का छोकरा तक, जिसकी आवाज़ फटी बाँसुरी जैसी है, अपने जीवन का मार्ग निश्चित कर चुका है। तुमने उसे कहते हुए सुना नहीं कि कब वह विवाह करेगा, कब कमांडर बनेगा। दूसरे लोग उसपर हँसते थे। लेकिन मेरे लिए—ये सब बातें मेरी पहुँच के बाहर हैं।"

एवेलिना की नीली-नीली आँखों में भय की झलक दिखाई दी और एक आँसू टपक कर धूल में बिखर गया।

"तुमने उस युवक स्तवरुचेन्को की बातें भी सुनीं," एवेलिना ने धीरे से कहा। वह प्रयत्न कर रही थी कि कहीं उसकी चिन्ता प्रकट न हो जाय।

"हां," प्योत्र ने धीरे से उत्तर दिया, "उसकी आवाज़ बड़ी मीठी है। क्या वह सुन्दर भी है?"

"अच्छा है," एवेलिना ने कुछ विचार करते हुए कहा—किन्तु तुरन्त ही उसे स्वयं अपने ऊपर क्रोध आ गया और वह तेज़ी से बोल उठी—"नहीं, वह... वह बिल्कुल अच्छा नहीं। मुझे वह ज़रा भी पसन्द नहीं। वह अपने को जाने क्या समझता है। और

उसकी आवाज़! उसमें भी क्या धरा है? भैंस जैसी तो है।"

प्योत्र ने कुछ न कहा। एवेलिना के सहसा क्रोध में आ जाने से उसे आश्चर्य हो रहा था।

"किन्तु यह बेवक़ूफ़ी आख़िर है कितनी बड़ी!" एवेलिना पैर पटकती हुई जल्दी-जल्दी कहती गयी, "मैं जानती हूं यह सब मक्सिम का किया-धरा है। मुझे तो वह फूटी आँखों नहीं सुहाता, वह बुड्ढा मक्सिम!"

"कह क्या रही हो, एवेलिना?" प्योत्र ने आश्चर्यचकित होते हुए पूछा, "तुम्हारा मतलब क्या है? उसका किया-धरा! क्या किया-धरा।"

"हाँ हाँ ठीक कह रही हूं। मुझे उससे नफ़रत है!" उसने दृढ़तापूर्वक अपनी बात दुहरायी, "उसकी हर बात निराली है। वह हर बात योजना के हिसाब से पूरी जाँच-पड़ताल के बाद उस समय तक करता रहेगा जब तक उसमें दया-भाव का रत्ती भर भी अंश बाक़ी है हुँह, दयाभाव! कभी दिखाई है उसने किसी पर दया। आख़िर दूसरों के मामलों में दखल देने का अधिकार उसे दिया किसने?"

फिर सहसा एक तरफ़ हट कर एवेलिना ने अपने दोनों हाथ भींचे यहाँ तक कि उसकी अंगुलियों के पोर चिटखने लगे और वह बच्चों की तरह रोने लगी।

प्योत्र ने उसके हाथ अपने हाथों में ले लिये। वह आश्चर्य-विमूढ़ हो रहा था। वह अकस्मात् निकले हुए एवेलिना के इन उद्गारों का कारण न समझ सका। एवेलिना हमेशा मौन रहती थी। उसका अपने ऊपर पूरा वश था। वह खड़ा खड़ा उसकी सिसकियाँ सुनता रहा, और सुनता रहा उस विचित्र प्रतिध्वनि को जो उसकी सिसकियाँ उसके हृदय से टकरा टकरा कर पैदा कर रही थीं। उसकी कल्पना के सामने पुरानी स्मृतियाँ दौड़ने लगीं— आज ही की भाँति उदास वह एक टीले पर बैठा है और एक छोटी-सी लड़की उसके सामने रो रही है वैसे ही जैसे वह इस समय रो रही थी।

लेकिन सहसा एवेलिना ने अपने हाथ छुड़ा लिये और प्योत्र फिर आश्चर्य में डूब गया क्योंकि अब वह खड़ी खड़ी मुस्करा रही थी।

"मैं भी कैसी गधी हूं! इसमें रोने-धोने की क्या बात थी?"

उसने अपनी आँखें पोंछीं और विनम्रतापूर्वक कहने लगी –

"मुझे ज़्यादती नहीं करनी चाहिए। सचमुच वे बड़े अच्छे लोग हैं, दोनों ही। और वे जो भी बातें कर रहे थे वे बहुत अच्छी थीं, ज़रूर अच्छी रही होंगी – लेकिन हर एक के लिए तो नहीं हो सकतीं।"

"हाँ, हरेक के लिए नहीं, परन्तु उनके लिए तो हो सकती हैं जो उनके अनुसार चल सकते हैं," एवेलिना बोल उठा।

"क्या बकवास कर रहे हो!" उसने उत्तर दिया, यद्यपि उसने अधरों पर मुस्कान बिखेरने का प्रयत्न किया था फिर भी उसकी बोली में सिसकियों की सी-सी साफ़ सुनाई पड़ रही थी। "हाँ, तो मक्सिम की ही बात ले लो, जब तक शरीर में शक्ति रही तब तक लड़ता रहा और जब असमर्थ हो गया तो जो सिर पर पड़ती है उसे झेलता है। और हम लोग भी..."

"हम लोग मत कहो। तुम्हारी बात अलग है..."

"नहीं, अलग नहीं है।"

"क्यों नहीं ?"

"क्योंकि... क्योंकि तुम मुझसे विवाह करोगे! है न? और इसलिए हमारे जीवन एक जैसे होंगे।"

"तुमसे विवाह? मैं?... तुम... यानी तुम मुझसे विवाह करोगी?"

"क्यों? करूंगी, ज़रूर करूंगी!" वह चिल्ला कर बोली। उत्तेजना के कारण जल्दी में उसकी ज़बान से शब्द फिसलते जा रहे थे। "बुद्धू कहीं के! क्या तुमने इसके बारे में कभी सोचा ही न था? इतनी मामूली सी बात! क्यों, मुझसे नहीं तो किससे विवाह की सोच रहे थे?"

"हाँ, बेशक," प्योत्र ने सिर हिला कर हामी भरी, लेकिन सहसा यह समझ कर कि वह क्या कहने जा रहा है उसने एवेलिना का हाथ अपने हाथ में लेते हुए बात बदल दी, "नहीं, एवेलिना। मेरी बात समझने की कोशिश करो। तुमने अभी उनकी बातचीत सुनी है। शहरों में लड़कियाँ पढ़-लिख सकती हैं, बहुत कुछ सीख सकती हैं। और ख़ुद तुम भी—तुम्हारे लिए तो लोग जाने क्या क्या कर सकते हैं। जबकि मैं..."

"और तुम, तुम क्या?"

"मैं ... मैं अन्धा हूं!" उसका तर्कहीन निष्कर्ष था।

एक बार फिर बचपन की स्मृतियाँ प्योत्र के दिमाग़ में घूम गयीं—किनारे पर धीरे-धीरे बहती हुई नदी, एवेलिना से उसकी पहली मुलाक़ात, "अन्धेपन" की बात सुन कर उसका फूट-फूट कर रोना... और वह सहसा यह सोच कर चुप हो गया कि शायद पहले की ही तरह इस बार भी उसके शब्दों से एवेलिना को कोई चोट न पहुँच जाय। कुछ क्षण के लिए सिवा सामने वाले बांध से झरते हुए पानी की झरझर के उसे और कुछ भी सुनाई न दिया। एवेलिना मूर्तिवत खड़ी रही—गुमसुम, चुप। उस क्षण उसके मानस की वेदना उसके चेहरे पर अभिव्यंजित हो रही थी। लेकिन शीघ्र ही उसने अपने को संभाला और अब जब बोली तो उसकी आवाज़ हल्की थी और उससे चिन्ता की कोई झलक न मिल रही थी।

"और अगर तुम अन्धे हो तो इससे क्या?" वह कहने लगी, "अगर कोई लड़की किसी अन्धे से प्रेम करने लगे तो सिवा उसके साथ विवाह कर लेने के और वह करेगी ही क्या? हमेशा से ही ऐसा होता रहा है। तुम्हें तो मालूम ही है। हम और कर ही क्या सकते हैं?"

"अगर कोई लड़की प्रेम करने लगे," प्योत्र ने धीरे-धीरे यह बात दुहरायी, और जैसे ही ये चिर-परिचित

शब्द एक नया स्वरूप धारण कर उसके अन्तस् में उतरे कि उसकी सचल भौहें विचारशील मुद्रा में खिंच गयीं। "अगर वह प्रेम करने लगे?" इस समय उसकी आवाज़ कुछ तेज़ थी और उत्तेजित भी ...

"क्यों, बेशक! तुम और मैं—हम दोनों ही एक दूसरे को प्यार करते हैं। तुम तो निरे बुद्धू हो! क्यों? ज़रा सोचो तो यदि मैं चली जाऊं तो क्या तुम अकेले यहाँ रह सकोगे?"

प्योत्र का चेहरा मुर्झा गया और अंधी आँखें और भी अधिक खुल गयीं।

वातावरण शान्त था। केवल पानी की झरझर सुनाई पड़ रही थी, जो कभी कभी इतनी हल्की पड़ जाती कि बन्द-सी होने लगती। मगर उसका क्रम बराबर बना रहता, उसकी झरझर की कहानी समाप्त होने को ही न आती। वृक्षों में से कभी कभी कोई हल्की सी फुसफुसाहट सुनाई दे जाती। मकान से आती हुई गाने की आवाज़ बन्द हो चुकी थी, लेकिन तालाब के आसपास कहीं बैठी हुई बुलबुल अब भी अपना कलरव बिखेरे जा रही थी।

"मैं तो मर जाऊंगा," प्योत्र ने उत्तर दिया और मुंह लटका लिया।

एवेलिना के ओंठ हिलने लगे वैसे ही जैसे पहली मुलाक़ात के समय हिले थे।

"और मैं भी," उसने बच्चों जैसी धीमी आवाज़ में कहा, "अकेली, तुमसे दूर, बिना तुम्हारे मैं भी मर जाऊंगी।"

प्योत्र ने उसकी पतली-पतली अंगुलियाँ दबायीं। आश्चर्य की बात यह थी कि उत्तर देते समय की एवेलिना की यह मुद्रा पहले से भिन्न थी, अनूठी थी। उसकी अंगुलियों में होने वाली सिहरन उसके हृदय की गहराइयों में प्रवेश कर चुकी थी। और, इस समय वह उसकी बचपन की दोस्त ही नहीं अपितु बिल्कुल नयी-सी लग रही थी। ऐसा प्रतीत होता था कि प्योत्र में पुरुषत्व है, पुंसत्व है और एवेलिना में निर्बलता और आँसू। प्रेम विभोर हो कर प्योत्र ने एवेलिना को अपने और पास खींचा और उसके रेशमी बालों में अपनी अंगुलियाँ उलझा दीं।

प्योत्र को लगा कि उसके हृदय का सारा क्लेश धुल चुका है, उसकी सारी आकांक्षाएं और अभिलाषाएं शान्त हो चुकी हैं और उसके जीवन में इस क्षण के अलावा और कोई माधुर्य नहीं रह गया है।

अब पोखरे के पास से बुलबुल का भी मधुर संगीत सुनाई देने लगा। ऐसा प्रतीत होता कि इस संगीत

की स्वर-लहरियाँ शान्त उद्यान में नये जीवन का संचार कर रही हैं। एवेलिना में भी प्रकम्पन हुआ और सहसा उसने प्योत्र का हाथ छोड़ दिया।

प्योत्र ने उसे मुक्त कर दिया और गहरी साँस लेते हुए खड़ा खड़ा कुछ सुनता रहा। एवेलिना बाल संवार रही थी। अब प्योत्र खुश था। उसका हृदय धड़क रहा था और सारे शरीर में खून तेज़ी से दौड़ रहा था। उसे अपने में एक अनूठी शक्ति का अनुभव हो रहा था। एक क्षण बाद एवेलिना बोल उठी "अब हमें अपने मेहमानों के पास चलना चाहिए"। और प्योत्र विस्मय-विमुग्ध इस प्रिय ध्वनि से निकलते हुए नये सुरीले सुर सुन रहा था।

९

प्योत्र और एवेलिना के अलावा सब के सब बैठक में जमा थे। मक्सिम बूढ़े स्तवरुचेन्को से गप्प लड़ा रहे थे और युवक मंडली खुली हुई खिड़कियों के पास चुपचाप बैठी थी। वहाँ का वातावरण विचित्र था—उनकी एक विचित्र मानसिक स्थिति थी, बहुत कुछ वैसी ही जैसी

कि भावुक क्षणों में देखने को मिलती है, जिसका अनुभव तो सभी करते हैं लेकिन सभी जिसे ठीक ठीक समझ नहीं पाते। प्योत्र और एवेलिना का न होना सभी को खल रहा था। मक्सिम कभी कभी अपनी बातचीत के दौरान किसी आशा में खुले दरवाज़े पर भी निगाह दौड़ा लेते। आन्ना मिखाइलोव्ना की आँखों से उदासी टपक रही थी और शायद वेदना भी झलक रही थी। वह इस बात का पूरा प्रयत्न कर रही थी कि उसके अतिथि-सत्कार में कोई कमी न आये। केवल पान पोपेल्स्की, जो वर्ष प्रतिवर्ष भारी-भरकम होते जा रहे थे, हमेशा की भाँति शान्त बैठे खाने के इन्तज़ार में कुर्सी पर ऊंघ रहे थे।

बरामदे में पैरों की चापें सुनाई पड़ीं और सभी निगाहें उस ओर मुड़ गयीं। बरामदे के दरवाज़े पर एवेलिना थी और उसके पीछे-पीछे प्योत्र सीढ़ियाँ चढ़ता चला आ रहा था।

एवेलिना ने अनुभव किया कि कई आँखें उसे घूर रही हैं मगर उसने माथे पर बल न पड़ने दिये। हमेशा की तरह उस समय भी उसके पैरों की चापों में स्थिरता थी, संतुलन था। सिर्फ़ एक ही बार, जब उसकी दृष्टि मक्सिम पर पड़ी थी, उसके ओंठों में व्यंग्य भरी

मुस्कराहट दौड़ी और फिर विलीन हो गयी। आन्ना मिखाइलोव्ना की आँखें केवल अपने पुत्र को देख रही थीं।

प्योत्र एवेलिना के पीछे आ रहा था। उसे मालूम ही न हो सका कि आख़िर वह है कहाँ। दरवाज़े से आते हुए प्रकाश में वह कुछ क्षण खड़ा हुआ और फिर दहलीज़ से होता हुआ पियानो के पास चला गया।

ताल्लुक़े के शान्त जीवन में संगीत का कोई विशेष महत्व न था। यह एक घरेलू चीज़ थी और बाह्य संसार की किसी बात में बाधक न थी। इन दिनों घर भर में अभ्यागतों की बातों तथा गानों की धूम मची रहती। और संगीत का विद्यार्थी, बड़ा स्तवरुचेन्को, कभी कभी पियानो बजाया करता। लेकिन प्योत्र बाजे के पास तक न फटकता। उसकी यह चुप्पी ही उसे उस चहल-पहल, मेहमानों की हँसी ठठोली और हा-हा हू-हू में, सबके पीछे ढकेल देती, पृष्ठभूमि में डाल देती जिसे देख कर माँ का हृदय रो उठता, लेकिन अब पहली बार प्योत्र अपने परिचित स्थान पर पहुँचा था। ऐसा लगता था कि जो कुछ वह कर रहा है उसका उसे कोई ज्ञान नहीं। उसने इस बात पर भी ध्यान न दिया कि कमरे में कोई बैठा भी

है या नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि उसके तथा एवेलिना के आ जाने पर कमरे में इतनी नीरवता छा गयी थी कि अगर उसकी अन्धी आँखों ने कमरे को खाली समझ लिया हो तो इसमें अस्वाभाविकता की कोई बात न थी।

उसने पियानो खोला, और उसकी उंगलियाँ सुरों पर दौड़ने लगीं। सुरों में उसके प्रश्नों की धुन थी। जब वह सुर-कुंजिका दबाता तो प्रतीत होता कि वह कुछ पूछ रहा है। किससे? पियानो से या फिर शायद अपने हृदय से, अपने मस्तिष्क से।

सुर थम गये लेकिन वह शान्त बैठा रहा—निश्चल, स्थिर। उसके मस्तिष्क में विचारों की झंझा थी। उसके हाथ सुर-कुंजिकाओं की ओर बढ़े और बैठक की नीरवता और भी गहन हो उठी।

खिड़की के बाहर रात्रि का अन्धकार बढ़ता जा रहा था। कभी कभी जब किसी वृक्ष पर लैम्प से प्रकाश पड़ने लगता तो उसकी पत्तियाँ कमरे में झांकती-सी दिखाई देने लगतीं। अभ्यागत उसके सुर-साम्य तथा श्वेत मुख से प्रतिबिम्बित होने वाले उसके विचित्र प्रेरक चमत्कार

से इतने मन्त्रमुग्ध हो उठे थे कि वे मूक बैठे रहे, सुर-लहरियों में डूब जाने के लिए।

लेकिन प्योत्र के हाथ अब भी सुर-कुंजिकाओं पर निश्चल रखे हुए थे। वह शान्त बैठा था मानो कुछ सुन रहा हो। उसकी अन्धी आँखें खुली हुई थीं। उसके मानस में भावनाओं का समुद्र हिलोरें ले रहा था। एक अज्ञात एवं अननुभूत जीवन उससे टकरा रहा था वैसे ही जैसे उठती हुई तरंगें उस नाव से टकराती हैं जो दीर्घ काल से समुद्र के तट पर बालू के बीच धंसी-धंसी अपनी मुक्ति के स्वप्न देखा करती है...

उसके मुखमंडल पर आश्चर्य की एक झलक थी और था प्रश्नसूचक कौतूहल। इसके अतिरिक्त और भी कुछ था—एक अनूठी उत्तेजना, एक अनूठा उत्साह। उसकी अन्धी आँखें गहन थीं, गम्भीर थीं।

एक क्षण के लिए ऐसा लगा जैसे उसे अपनी आत्मा की अभिलषित वस्तु प्राप्त नहीं हो रही है। लेकिन फिर सहसा उसकी मानसिक स्थिति में कुछ परिवर्तन आता-सा प्रतीत हुआ और यद्यपि उसके आश्चर्य एवं कौतूहल की मुद्रा में किसी प्रकार का व्यतिक्रम न आया था फिर भी वह सहसा उछल पड़ा। उसने अपनी उंगलियाँ सुर-

कुंजिकाओं पर चलायीं और वह नयी-नयी अनुभूतियों से अनुप्राणित हो कर संगीत के प्रवाह में बहने लगा। अब चारों ओर सुर-लहरियाँ नृत्य कर रही थीं—मादक और मधुर।

१०

साधारण स्वर-तालिका की सहायता से संगीत का अध्ययन करना अंधों के लिए सम्भव नहीं। उनके लिए उठे हुए चिह्नों का प्रयोग किया जाता है—अर्थात् पुस्तक के शब्दों की तरह पंक्तियों में हर सुर के लिए अलग अलग चिह्न होते हैं और साथ बजाये जाने वाले सुरों के बीच बीच—उनका पारस्परिक संबंध दिखाने के लिए—कुछ विशेष बिन्दु। फिर वादक को अंगुलियों की सहायता से पढ़ कर हर सुर अलग अलग याद करने होते हैं। यह एक लम्बी एवं श्रमपूर्ण प्रक्रिया है। लेकिन प्योत्र तो हमेशा संगीत की सृष्टि करने वाले तत्वों को प्यार करता और जब प्रत्येक हाथ से बजने वाले कुछ सुरों को याद कर लेने के बाद वह उन्हें बजाने बैठता और उठे हुए स्वर बाजे से निकलने वाली सुरीली सुर-लहरियों के रूप में फूटते तो उसकी प्रसन्नता

इतनी बढ़ जाती कि उन सुरीले सुरों को निकालने में की गयी मेहनत का उसे कोई अहसास न होता। बल्कि सच बात तो यह थी कि ऐसे समय उसकी ख़ुशी की सीमा ही न रहती।

सुरों की तालिका तथा ध्वनि के रूप में उनकी अभिव्यक्ति के बीच अनेक कड़ियाँ पार करनी पड़तीं। संगीत का रूप लेने के पूर्व प्रत्येक चिह्न को उंगलियों के माध्यम से होते हुए मस्तिष्क तक की यात्रा करनी होती, स्मृति-कक्ष में अपनी जड़ जमानी होती और फिर जब अंगुलियाँ सुर-कुंजिकाओं को दबातीं तो उन्हें मस्तिष्क से लेकर अंगुली तक का सफ़र एक बार फिर करना होता। और चूंकि प्योत्र की संगीत प्रतिभा बचपन से ही बड़ी प्रखर थी अतएव वह स्मरण-प्रक्रिया में स्वयं भी अपना योग देती और इसका परिणाम यह होता कि जब भी वह किसी अन्य संगीत रचनाकार के संगीत की धुन बजाता तो उसमें उसके अपने व्यक्तित्व की छाप होती जो उसके संगीत में जान डाल देती।

प्योत्र की संगीतानुभूति ने उसमें वह स्वरूप ग्रहण किया जिसके माध्यम से संगीत की प्रथम सुर-लहरी

ने उसके मानस में प्रवेश किया था। यही वह स्वरूप था जो उसकी माता के संगीत में भी मुखर हुआ था। उसकी आत्मा में उसका वह देशज लोक-संगीत प्रतिध्वनित हो रहा था जिसके आधार पर उसकी आत्मा का प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित होता था।

और इतालवी संगीत के प्रथम सुरों में, जिसे वह धड़कते हुए हृदय से बजा रहा था, कुछ इतनी असाधारणता थी कि मेहमान आश्चर्य से एक दूसरे का मुंह देख रहे थे—विस्मित, अवाक्। और जब उसकी उंगलियाँ नाच रही थीं और बाजे से सुर निकल निकल कर कमरे में बिखर रहे थे उस समय सभी मन्त्रमुग्ध थे। अकेले संगीतकार स्तवरुचेन्को ने ही उस परिचित धुन को समझने तथा उसका विश्लेषण करने का प्रयत्न किया था।

संगीत कमरे में भर गया और उसकी प्रतिध्वनि बाहर बाग़ में सुनाई पड़ने लगी। युवक मंडली आँखों में कौतूहल लिये बड़ी रुचि के साथ उसे सुनती रही, सुनती रही। बूढ़ा स्तवरुचेन्को पहले तो सिर झुकाये मौन बैठा रहा, लेकिन शीघ्र ही उसने भी उसमें मज़ा लेना शुरू किया।

"क्या खूब बजाता है, है न?" मक्सिम को कोहनी से कुरेदते हुए वह फुसफुसाया, "इसके बारे में तुम्हें क्या कहना है?"

जैसे ही जैसे संगीत का प्रभाव बढ़ता गया उसकी पुरानी स्मृतियाँ ताज़ी होती गयीं और शायद उसे अपनी जवानी की याद आने लगी क्योंकि उसके कन्धे सीधे हुए, उसके गालों में लाली दौड़ी और उसकी आँखों में चमक आयी। उसकी मुट्ठी भिंची और ऐसा लगा कि वह अभी उसे मेज़ पर दे मारेगा, मगर उसनें वैसा नहीं किया और चुपके से हाथ नीचे गिरा दिया।

"बूढ़े को भट्ठी में झोंको! यही लोग ज़रा अपनी बानगी दिखायें!" उसने धीरे से मक्सिम से कहा और अपने पुत्रों पर सरसरी नज़र डाली। "तुम और मैं... मेरे भाई... हम अपने ज़माने में... और अब भी... क्या यह बात नहीं है?" और वह अपनी लम्बी-लम्बी मूंछें मरोड़ने लगा।

साधारणतया मक्सिम संगीत के प्रति बिल्कुल उदासीन रहता। लेकिन आज उसे अपने शिष्य के वादन में नवीनता दिखाई दी और वह पाइप से निकलते हुए धुएं के पीछे सिर हिलाता हुआ बैठा बैठा उसे बड़े ध्यान

से सुनता रहा। और, कभी प्योत्र की तरफ़ देखता तो कभी एवेलिना की तरफ़। उसे ऐसा लगा कि जीवन एक बार फिर उसकी योजना में हस्तक्षेप कर रहा है। आन्ना मिखाइलोव्ना ने भी कई बार एवेलिना की ओर देखा। वह यह समझने की कोशिश कर रही थी कि प्योत्र के संगीत में जो प्रतिध्वनि थी वह दुख की थी या सुख की...

एवेलिना एक कोने में बैठी थी। उसका चेहरा लैम्प के पीछे अंधेरे में था। उस अन्धकार में केवल उसकी बड़ी-बड़ी आँखें चमक रही थीं। वह उस संगीत में अपने ही हृदय की प्रतिच्छाया देख रही थी क्योंकि उसमें उसे पनचक्की के पास से आती हुई जल की छलछल और छायादार बाग़ से निकलती हुई वृक्षों की मर्मर सुनाई पड़ रही थी।

११

संगीत की धुन बदल चुकी थी। प्योत्र ने जो इतालवी धुन आरम्भ की थी अब वह बहुत पीछे छूट गयी थी और उसके स्थान पर उसमें स्वयं उसकी अपनी कल्पनाएं मुखरित हो रही थीं—वे सब कल्पनाएं जो उस समय उसके

मस्तिष्क में उपजी थीं जब वह पियानो की सुर-कुंजिकाओं पर हाथ धरे ध्यान-मग्न बैठा था। उसके वादन में प्रकृति की पुकार थी — वायु के निश्वास और वन की मर्मर, जल की छलछल और दूर, बहुत दूर, विलीन होती हुई अस्पष्ट ध्वनियाँ। और इन सबके पीछे थीं हृदय में उद्रेक पैदा करने वाली वे भावनाएं, जिन्हें प्रकृति की नैसर्गिकता मानव हृदय में जन्म देती है, वे भावनाएं जिनकी परिभाषा नहीं की जा सकती, जिन्हें शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता... तो क्या वह खिन्नता का प्रतीक है? और यदि है तो उसमें माधुर्य क्यों? शायद हर्षोन्माद हो? तो फिर उसमें इतनी गहन, इतनी अनन्त करुणा का समावेश क्यों?

कभी कभी संगीत के सुरों में तीव्रता की अनुभूति होती और फिर अन्धे युवक की आकृति-प्रकृति में एक विचित्र कर्कशता आ जाती — मानो अपने संगीत की नयी शक्ति ने उसे स्वयं असमंजस में डाल दिया है, मानो बड़ी बेचैनी के साथ वह स्वयं इस बात की प्रतीक्षा कर रहा है कि आगे सुरों का स्वरूप क्या होगा, उनकी लय और गति क्या होगी... श्रोता साँस रोके वाद्य से निकलने वाले प्रत्येक स्वर को बड़े ध्यान से सुनते और उन्हें ऐसा

प्रतीत होता कि बस थोड़े से सुर और, और फिर संगीत का अनुपम स्वर-साम्य एवं माधुर्य यहीं एक अनूठे सौन्दर्य की सृष्टि कर देगा। मगर वह क्षण आने के पहले ही सुर-लहरियाँ करवटें लेटीं और वातावरण में एक विचित्र करुणा व्याप्त हो जाती—ऐसा लगता कि सीधी चली आने वाली तरंग-माला ने सहसा टूट कर फेन और फुहार का रूप ले लिया है। और फिर देर तक संगीत में उद्वेग और आकुलता के तीक्ष्ण सुर सुनाई पड़ा करते।

तब एक क्षण के लिए, दौड़ती हुई अंगुलियाँ सहसा थम जातीं और एक बार फिर कमरे में मौन छा जाता जो प्रायः बाग़ के वृक्षों की सरसराहट से ही टूटा करता। और श्रोताओं को उनके इस भौतिक संसार से उठा कर कल्पना के मधुर लोक में ले जाने वाला मायावी चमत्कार सहसा लुप्त हो जाता और उन्हें फिर कमरे की दीवालें और खिड़की से झांकने वाली अंधेरी रात दिखाई पड़ने लगती। यह स्थिति तब तक बनी रहती जब तक कि कोमल उंगलियाँ बाजे पर फिर से न दौड़ने लगतीं।

संगीत फिर आरम्भ हो जाता—सुर-लहरी में विकास होता और माधुर्य की उंचाइयों पर पहुँच कर

उसमें पुनः सौन्दर्य की सृष्टि होने लगती। सुर-लहरी के निरंतर नया स्वरूप ग्रहण करते रहने के कारण प्रेम कथाओं, प्राचीन काल के यश और संताप की करुण स्मृतियों अथवा युवावस्था के हर्षोन्माद से पूर्ण मनोविनोदों एवं गगनचुम्बी आशाओं से ओत-प्रोत लोक-संगीत की ध्वनियाँ अधिक मुखर हो उठतीं। और अन्धा संगीतज्ञ संगीत के परिचित स्वरूपों के माध्यम से इन सभी भावनाओं को साकार बनाने का प्रयत्न करता।

लेकिन गान धीरे-धीरे विलीन होने लगते और कुतूहल सूचक करुण सुर एक बार फिर कमरे में गूंजने लगते।

१२

संगीत की अन्तिम सुर-लहरी भी विलीन हो गयी। अब आन्ना मिखाइलोव्ना ने अपने पुत्र के चेहरे पर वह मुद्रा देखी जिसकी उसे अच्छी तरह याद थी। उसकी कल्पना के समक्ष वसन्त काल का एक धुपहला दिन घूम गया और एक बार फिर उसने प्रकृति की अंगड़ाइयों के अति स्पष्ट अंकनों से मुग्ध नन्हे पेत्रो को नदी-तट के समीप की घास पर लेटे हुए देखा।

किन्तु उसके चेहरे पर झलक उठने वाले विकारों पर अन्य किसी भी व्यक्ति ने कोई ध्यान न दिया। कमरे में बातों का बाज़ार गर्म था। वृद्ध स्तवरुचेन्को मक्सिम से चिल्ला चिल्ला कर कुछ कह रहा था और युवक मंडली उत्तेजित एवं प्रभावित होने के कारण प्योत्र के हाथों को दबा दबा कर यह भविष्यवाणी कर रही थी कि आगे चल कर वह एक बड़ा संगीतज्ञ होगा और उसे सफलता मिलेगी, प्रसिद्धि मिलेगी।

"इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं," बड़े भाई ने कहना आरम्भ किया, "आश्चर्य तो यह है कि तुमने हमारे लोक-संगीत के सारतत्व को ग्रहण कैसे किया और फिर इतनी निपुणता के साथ। आरम्भ में तुम जो बजा रहे थे वह क्या था?"

प्योत्र ने उसका नाम बता दिया। वह एक इतालवी रचना थी।

"वही तो मैं सोच रहा था," युवा स्तवरुचेन्को बोला, "मुझे इसका कुछ ज्ञान अवश्य है—लेकिन तुम्हारे बजाने का ढंग अनोखा है, उसमें तुम्हारी अपनी छाप है। ऐसे बहुत से पड़े हैं जो बजाते अच्छा हैं, मगर इसमें सन्देह नहीं कि जैसा तुमने बजाया वैसा किसी दूसरे ने

कभी न बजाया होगा। ऐसा लगता था कि वह इतालवी संगीत का उक्रइनी संगीत में रूपान्तर है मगर कितना अद्भुत। तुम्हें ज़रूरत है अध्ययन की, प्रशिक्षण की और तब..."

प्योत्र बैठा बैठा ध्यानपूर्वक सब कुछ सुनता रहा। आज से पहले वह इतनी उत्सुकतापूर्ण बातचीत का विषय, या केन्द्र, कभी नहीं रहा। और अब उसमें एक ऐसी अनुभूति जन्म ले रही थी जो उसके लिए बिल्कुल नयी थी। अब वह अपनी शक्ति के प्रति जागरूक था और उसकी चेतना में गर्व का गौरव था। आज के संगीत ने उसमें पहले से कहीं अधिक पीड़ा, कहीं अधिक कसक पैदा की थी। आज वह अपने वादन से अन्य दिवसों की अपेक्षा कहीं अधिक असन्तुष्ट था। क्या यह भी सम्भव है कि उसके इस संगीत ने लोगों पर सचमुच कोई अमिट प्रभाव डाला है? क्या सचमुच उसके संगीत में इतनी शक्ति है, इतनी जान है? तो फिर ऐसा लगता है कि वह भी जीवन में कुछ कर सकेगा, ज़रूर कर सकेगा। और, जब बातचीत अपनी चरम सीमा पर थी, उसे सुर-कुंजिकाओं पर पड़ी हुई अपनी अंगुलियों पर,

एक उष्णता, एक दबाव, का अनुभव हुआ। यह एवेलिना थी।

"क्या तुम सुन रहे हो? कुछ समझ रहे हो?" उसने प्रसन्नतापूर्वक उसके कान में धीरे से कहा, "अब तुम्हारी साधना, तुम्हारी तपश्चर्या, तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। काश तुम देख सकते और जान सकते कि तुमने हम सबको कितना प्रभावित किया है!"

प्योत्र ने सिर हिलाया और गर्व के साथ कन्धे उचका दिये।

एवेलिना की फुसफुसाहट तथा प्योत्र पर उसका प्रभाव माँ की आँखों से न छिप सका। माँ को ऐसा लगा जैसे युवावस्था के प्रेम की प्रथम रोमांचकारी अनुभूति स्वयं उसी को हुई हो।

प्योत्र अपने स्थान से हिला तक नहीं। अब वह उस नयी प्रसन्नता में विभोर हो जाना चाहता था जो उसके मानस में भर चुकी थी। और शायद इसी समय उसने उस झंझा के प्रथम प्रतिबिम्ब का भी अनुभव किया जो उसके अन्तस् की गूढ़तम गहराइयों के किसी कोने में उठ रही थी—अस्पष्ट, निराकार।

छठा अध्याय

१

प्योत्र दूसरे दिन प्रातःकाल ज़रा जल्दी उठ पड़ा। उसके कमरे में नीरवता छायी हुई थी और सारा मकान शान्त था। दिन निकलने के साथ साथ बाहरी संसार में होने वाली हलचल का इस समय पूर्ण अभाव था। खुली हुई खिड़की से हो कर बाग़ से आने वाली प्रातःकालीन बयार उसपर अपनी अमिट छाप छोड़ रही थी। प्योत्र अन्धा ज़रूर था मगर उसे अपने चातुर्दिक प्रकृति की अनुभूति किसी भी आँख वाले से अधिक होती थी। उसने जान लिया था कि अभी प्रभात है और खिड़की खुली है। कमरे के ठीक बाहर खड़े झूमते हुए वृक्षों की मर्मर उसे साफ़ साफ़ सुनाई दे रही थी। आज यह अनुभूति सदा की अपेक्षा अधिक प्रखर थी। उसने जान लिया था कि सूर्य कमरे में झांकने लगा है और यदि वह खिड़की के बाहर हाथ फैलाये तो बाहर के झुरमुटों में ठहरे हुए ओस के कुछ कण अवश्य नीचे गिर पड़ेंगे। और, आज उसे एक दूसरी अनुभूति हो रही थी, ऐसी

अनुभूति जो उसके लिए पूर्णतः नवीन थी, जो पहले कभी नहीं हुई थी। यह अनुभूति उसके सारे मानस में प्रवेश करती जा रही थी।

वह कुछ देर तक पड़ा पड़ा बाग़ से आने वाली किसी नन्हीं चिड़िया की टुटुर-टुटुर . सुनता रहा और अपने हृदय की इस विचित्र एवं नयी अनुभूति पर आश्चर्य करता रहा।

यह क्या चीज़ थी? क्या बात थी? और सहसा जब यह प्रश्न उसके मस्तिष्क में उठा तो उसे पिछली शाम पनचक्की के निकट कहे गये उसके वे शब्द याद आये –

"क्या सचमुच तुमने इसके बारे में कभी सोचा तक न था?" उसने कहा था, "तुम निरे बुद्धू हो।"

नहीं, उसने इसके बारे में कभी नहीं सोचा। उसकी उपस्थिति उसके लिए सदैव प्रसन्नता का कारण बनी रही। किन्तु उस शाम तक उस प्रसन्नता का जो रूप था उसे उसके चेतन ने पहचाना तक न था वैसे ही जैसे हम उस हवा को नहीं पहचान पाते जो हर समय हमारी साँसों के साथ आती जाती है। शान्त जल में फेंके गये पत्थर की भाँति इन शब्दों ने उसकी

आत्मा में एक कम्पन पैदा कर दिया था। और जिस प्रकार एक हलके-से स्पर्श से पानी की चिकनी चमकीली सतह और उसपर प्रतिबिम्बित होने वाला सूर्य का प्रकाश और नीलाकाश सभी कुछ लुप्त हो जाता है, जल-तल तक खलभला उठता है, उसी प्रकार उसकी आत्मा में भी उथल-पुथल मची हुई थी।

अब वह आत्मा में एक नया प्रकाश, एक नयी अनुभूति लिये हुए उठा और अपनी पुरानी सहेली को एक नये रूप में देखने लगा। और पिछली शाम को जो बातें हुई थीं वे सब उसकी आँखों के आगे नाचने लगीं। लेकिन जब उसकी आवाज़ भी उसके कानों में आती हुई सुनाई दी तो वह उससे प्रतिध्वनित होने वाली नयी व्यंजना को सुन कर चकित हो गया। "यदि कोई लड़की प्रेम करने लगे..." और—"तुम निरे बुद्धू हो!"

वह पलंग से उछल पड़ा और जल्दी जल्दी कपड़े पहन ओस से भीगे हुए उद्यान-पथों से होता हुआ पनचक्की की ओर भागा। पानी की छलछल और वृक्षों की मर्मर उसे पिछली शाम की भाँति ही सुनाई पड़ रही थी, परन्तु उस समय अंधकार था, और इस समय था

प्रकाश और धूप। आज से पूर्व उसने प्रकाश का इतना गहन "अनुभव" कभी न किया था—ऐसा लगता था जैसे आर्द्र सुरभि और प्रातःकाल की ताज़गी प्रकाश के हर्षोन्माद के एक अंश को अपने साथ उसके स्नायु-केन्द्र में भी संवहित कर रही है।

२

ताल्लुक़े की ज़िन्दगी में अब एक नयी बहार आ गयी थी—आन्ना मिखाइलोव्ना युवती दिखाई पड़ने लगी थीं और मक्सिम के मुख पर मुस्कराहट खेल रही थी। अब लोग मक्सिम के मुंह से भी हँसी-मज़ाक़ के फ़ौवारे छूटते हुए देखते। हाँ, कभी कभी उसके पाइप के धुएं के पीछे उसकी विचारमग्न आशंकित मुद्रा दिखाई दे जाती और किसी दूरस्थ झंझा की गड़गड़ाहट की भाँति उसकी बुदबुदाहट सुनाई पड़ जाती। उसका कहना था कि कुछ लोग समझते हैं कि ज़िन्दगी केवल उस उपन्यास के घटनाक्रम की भाँति है जिसका अन्त विवाह के गीतों में होता है। लेकिन हमारी दुनिया में और भी बहुत सी बातें हैं जिनपर

यदि ऐसे लोग ध्यान दें तो कोई हानि न होगी। और पान पोपेल्स्की–जो हृष्ट-पुष्ट और खूबसूरत हो गया था, लाल लाल गाल, चाँदी जैसे चमकदार बाल–प्रायः यही समझता कि मक्सिम ने वे बातें उसी को लक्ष्य करके कही हैं। अतएव वह भी उनके समर्थन में अपना सिर हिला देता और फिर अपने काम में जुट जाता। उसकी एक यह विशेषता थी कि उसके सारे काम ठीक ठीक और क्रम से चलते थे। लेकिन जवान लोग अपनी अपनी मस्ती में उसपर केवल हँस देते। अब प्योत्र को बड़ी गम्भीरता के साथ संगीत का अध्ययन करना था।

मधुर शरद् का आगमन हुआ। फ़सल कट चुकी थी और वातावरण में मादकता छा गयी थी। ऐसे समय सारा परिवार स्तवरुकोवो–स्तवरुचेन्को की जागीर का यही नाम था–की ओर चल पड़ा। यह लगभग सत्तर मील की यात्रा थी, परन्तु इस छोटी सी दूरी ने आसपास के वातावरण में बड़ा परिवर्तन उपस्थित कर दिया था। कार्पेथियन्स की अन्तिम पर्वत श्रेणियाँ वोल्हीनिया में और बुग के किनारे किनारे दिखाई पड़ रही थीं। धीरे-धीरे वे भी दृष्टि से ओझल हो गयीं। और अब उक्रइन की स्टेपी वाली भूमि

दीख पड़ने लगी। यहाँ के गाँव हरे-भरे थे और उनके चारों ओर फल-फूल से लदे बाग़ दिख रहे थे। स्टेपी के बीच बीच बनी हुई अनेकानेक नालियाँ और सामने क्षितिज के पास कुछ ऊंची-ऊंची क़ब्रें नज़र आ रही थीं। क़ब्रों के आसपास की सारी ज़मीन जुती-बुई थी और, जहाँ तक निगाह जाती थी, सूखी घास के पीले-पीले खेत दिखाई पड़ रहे थे।

पूरा परिवार पहले शायद ही कभी इतनी लम्बी यात्रा पर निकला हो। प्योत्र अपने गाँव और खेतों की तो चप्पा चप्पा भूमि से परिचित था। मगर इस नयी जगह में सुगमतापूर्वक चल-फिर लेना उसके लिए सम्भव न था। अब उसे अपना अन्धापन काटने दौड़ता। फलतः उसमें घबड़ाहट और चिड़चिड़ाहट के लक्षण दिखाई पड़ने लगे। फिर भी उसने स्तवरुचेन्को का निमंत्रण स्वीकार किया। उस स्मरणीय रात्रि के पश्चात्, जब उसने अपने प्रेम तथा प्रस्फुटित होती हुई अपनी प्रतिभा से सर्वप्रथम साक्षात्कार किया था, वह बाह्य संसार के प्रति धीरे-धीरे आकृष्ट होने लगा। अब उसे उन अन्धकारपूर्ण, अज्ञात सांसारिक दृश्यों से भय न लगता जिनका अनुभव वह अपने परिचित जीवन-

क्षेत्र के उस पार कल्पना में किया करता था। अब यही बाह्य संसार उसपर अधिक, और अधिक, छाता चला जा रहा था।

स्तवरुकोवो में दिन हँसी-खुशी में बीतने लगे। इस बार प्योत्र युवकों की मंडली में बड़ा प्रसन्न था। वह बड़े स्तवरुचेन्को का वादन सुनता और मस्त हो जाता। वह संगीत विद्यालय और नाच-गानों की उसकी कहानियाँ भी बड़े ध्यान से सुनता और जब बड़ा स्तवरुचेन्को प्योत्र की उस प्रतिभा के बारे में कुछ कहता, जिसका उसमें परिचय तो मिलने लगा था परन्तु जो अभी तक प्रखर नहीं हुई थी, तो प्योत्र खुशी से झूम उठता। वह अब कमरे के कोने में न बैठा रहता और जब बातचीत का सिलसिला जम जाता तो वह भी उसमें भाग लेता लेकिन दूसरों की भाँति खुल कर नहीं। स्वयं एवेलिना भी अब दूसरों से कटी कटी न रहती जैसी कि अभी तक रह रही थी। अब वह सबसे मिलती-जुलती और उसके क़हक़हों से उस छोटे से समाज में जान आ जाती।

स्तवरुकोवो से लगभग दस मील दूर एक पुराना मठ था जो इस इलाक़े में इसलिए बड़ा प्रसिद्ध था कि

उसने अपने ज़माने में एक बड़ा महत्वपूर्ण काम किया था और यह स्थानीय इतिहास में एक गर्व की बात समझी जाती थी। तातार सेनाओं ने टिड्डी दलों की भाँति उसे घेर लिया था और उसके रक्षकों पर असंख्यों तीर बरसाने आरम्भ कर दिये थे। कभी कभी पोलिश सेनाओं ने भी उसपर आक्रमण किये थे और उसे जीता भी था। परन्तु फिर कज़्ज़ाकों ने अपनी शक्ति संग्रह की और वे उसे आज़ाद कराने के लिए युद्धस्थल में कूद पड़े।

इस समय उसकी पुरानी मीनारें खंडहर हो रही थीं और घेरों द्वारा सुदृढ़ बनायी गयीं, उसकी टूटी-फूटी दीवालें मठों के शाक-सब्ज़ियों के बाग़ों की स्थानीय कृषकों के मवेशियों से रक्षा कर रही थीं। मठ के चारों ओर की खाई में जौ उगा हुआ था।

एक दिन शरद् ऋतु में स्तवरुचेन्को तथा उसके अतिथि इस मठ को देखने चले। मक्सिम, उसकी बहन और एवेलिना बड़ी सी एक पुरानी गाड़ी में बैठे जो हवा से चलने वाली नाव की भाँति अपनी स्प्रिंगों पर हिचकोले खाती जा रही थी। प्योत्र और बाक़ी सारे युवक घोड़ों पर थे।

साथियों के घोड़ों की चापों तथा सामने चलती हुई गाड़ी की आवाज़ से प्योत्र को अपना रास्ता तय करने में पूरी मदद मिल रही थी और उन्हीं के सहारे वह निडर आगे बढ़ भी रहा था। वह इतने इतमीनान और निर्भयता के साथ घोड़े पर चल रहा था कि यदि कोई अपरिचित व्यक्ति देखता तो यह अनुमान भी न लगा पाता कि यह युवक घुड़सवार रास्ता नहीं देख सकता, कि उसने दीर्घकालीन अभ्यास से ही घोड़े की अन्तःचेतना पर विश्वास करना सीखा है। आन्ना मिखाइलोव्ना ने व्यग्रतापूर्वक अपने पुत्र की ओर देखा क्योंकि वह घोड़ा और सड़क दोनों ही से अपरिचित था। मक्सिम भी उसे कनखियों से देखता रहा। उसे अपने शिष्य पर गर्व हो रहा था। वह स्त्रियों के व्यर्थ के भयों को तिरस्कार की दृष्टि से देखता था।

"आप जानते हैं," गाड़ी के पास आकर सहसा विद्यार्थी कहने लगा, "अभी अभी मेरे दिमाग़ में एक बात आयी है। यहां एक क़ब्र है जिसे आप लोगों को ज़रूर देखना चाहिए। अभी हाल ही में मठ के कुछ पुराने काग़ज़ पत्रों में हमने उसका इतिहास पढ़ा

था जो बड़ा रोचक है। अगर आप लोग चाहें तो हम सीधे वहीं चलें। यह हमारे रास्ते से बहुत हट कर भी नहीं है। बस गाँव के सिरे पर है।"

"यह तुम्हें क़ब्रों की बात इस वक़्त कैसे सूझी?" हँसते हुए एवेलिना ने पूछा, "क्या हम सब साथी सचमुच इतने दुखी हैं?"

"इस सवाल का जवाब मैं बाद में दूंगा," और विद्यार्थी ने घूम कर गाड़ीवान को हुक्म दिया कि वह अपनी गाड़ी कलोद्ना की ओर मोड़े और ओस्ताप के बाग़ के पास रुक जाय। और, तब घोड़े को पीछे फेरते हुए वह आकर अन्य घुड़सवारों से मिल गया।

गाड़ी अब एक संकरी छोटी सड़क से हो कर चल रही थी और उसके पहिये धूल की एक मोटी सी तह में धंसे जा रहे थे। नवयुवक अपने घोड़ों को दौड़ाते हुए तेजी से आगे निकल गये और सड़क के किनारे एक बाड़े के पास उतर पड़े। घोड़ों को यहाँ बांध चुकने के बाद युवक स्तवरुचेन्को पीछे वापस लौटे ताकि जब गाड़ी यहाँ पहुँचे तो वे उतरने में स्त्रियों की सहायता कर सकें। प्योत्र घोड़े की ज़ीन के सहारे सिर झुकाये खड़ा खड़ा वहीं इन्तजार करता रहा। वह वहाँ की ध्वनियाँ

सुन रहा था और इस अपरिचित स्थान को समझने का प्रयत्न कर रहा था। प्योत्र के लिए शरद का यह धुपहला दिन अंधेरी रात की तरह था जिसमें उसके इर्द-गिर्द की दिवसकालीन आवाज़ें ही कुछ जान डाल सकती थीं। उसे आती हुई गाड़ी की आवाज़ तथा दोनों युवकों की बातचीत और हँसी साफ़-साफ़ सुनाई पड़ रही थी। उसके पास खड़े हुए घोड़े बार-बार अपना सिर बाड़े के उस पार उगी हुई घास की ओर बढ़ा रहे थे। फलतः उसे घोड़ों की लगामों में बंधी हुई घंटियों की टुनटुन सुनाई पड़ने लगी। हल्की-हल्की वायु के साथ एक गाने की धुन भी उसके कानों में पड़ी। यह कहीं बहुत नज़दीक से, शायद बाग़ में से, आ रही थी। बाग़ में पत्तियों की मर्मर हुई, एक सारस ने अपनी चोंच पटपटायी और एक मुर्ग़े ने कुकुड़ूकूं करते हुए अपने पंख फड़फड़ाये। ऐसा लगता था कि वह किसी ज़रूरी बात की याद दिला रहा हो। पास ही एक कुएं के रहंट की भी आवाज़ आ रही थी। ये किसी व्यस्त ग्राम जीवन की ध्वनियाँ थीं।

वे गांव के किनारे ही एक बाग़ के पास रुक गये। अधिक दूर से आने वाली ध्वनियों में सबसे साफ़ आवाज़

मठ में बजने वाले घंटे की थी। यह ध्वनि पतली थी, ऊंची थी। घंटा बजता रहा। प्योत्र को (शायद वायु के स्पर्श से अथवा अन्य किसी चिह्न से, जिसे वह स्वयं नहीं बता सकता था कि वह क्या था) ऐसा लगा कि मठ के उस पार कहीं, शायद नदी के तट पर, या तो सहसा भूमि टूटेगी या गिरेगी। मठ-पार की लम्बी चौड़ी चौरस भूमि शान्त जीवन की ध्वनियों से परिपूर्ण थी। ये ध्वनियाँ भी हल्के-हल्के और रुक रुक कर उसके कानों में पहुँच रही थीं और उसे उनकी दूरी की अनुभूति हो रही थी, अस्पष्ट, प्रकम्पित – वैसे ही जैसे हम आँख वालों को दूरस्थ रेखाएं सायंकाल की हल्की रोशनी में झिलमिलाती हुई सी लगती हैं।

वायु प्योत्र के टोप के नीचे के केश-समूहों से खेल रही थी और वीणा की हल्की ध्वनि की तरह उसके कानों के पास से मर्मर करती हुई बह रही थी। अस्पष्ट स्मृतियों ने उसके मस्तिष्क को झकझोर दिया। विस्मृति के गर्भ से निकलती हुई उसके बालपन की स्मृतियाँ वायु, स्पर्श एवं ध्वनि के रूप में साकार हो उठीं। यह वायु दूर से आती हुई घंटे की आवाज़ और

उद्यान से सुनाई पड़ते हुए संगीत से एकाकार हो कर इन स्थानों के प्राचीन करुण इतिहास को या शायद अपने ही विगत इतिहास को सुनाती हुई सी लग रही थी और सम्भवतः उसके उस भविष्य की ओर इशारा कर रही थी जो अन्धकारपूर्ण था, अस्पष्ट था।

लेकिन इस समय तक गाड़ी आ चुकी थी। अब सब लोगों ने बाग़ के भीतर प्रवेश किया। बाग़ के एक कोने में घास-फूस के बीच ज़मीन की सतह से कुछ उठा हुआ पत्थर का एक लम्बा-सा टुकड़ा पड़ा था। और घासों से कुछ ऊपर भिन्न-भिन्न प्रकार के पौधों की पत्तियाँ एवं फूल वायु के स्पर्श से हिल-डुल कर कुछ ऐसी ध्वनि कर रहे थे कि प्योत्र को लगा जैसे वे उस उपेक्षित क़ब्र के ऊपर कुछ फ़ुसफ़ुसा रहे हैं।

"अभी हाल ही में हमें इसका पता चला है," छोटे स्तवरुचेन्को ने कहना आरम्भ किया, "तुम जानते हो कि इस क़ब्र के नीचे किसका शव है? अपने ज़माने में वह बड़ा मशहूर था– वृद्ध इगनात कारी..."

"तो बूढ़े योद्धा तुम यहाँ हो," मक्सिम धीरे से बोला, "वह यहाँ कलोद्ना में कैसे आया?"

"यह अठारहवीं सदी की बात है। उस समय मठ पर पोलिश सेनाओं का अधिकार हो चुका था और कज़्ज़ाकों ने तातार सैनिकों के गठबन्धन से उसे चारों ओर से घेर रखा था। और आपको तो मालूम ही है कि तातार कितने ख़तरनाक सहयोगी होते हैं। दुश्मनों ने किसी न किसी प्रकार से उनके मिर्ज़ा को ख़रीद लेने की कोई तरक़ीब निकाल ली होगी। फलतः रात को तातारों के साथ पोलों ने कज़्ज़ाकों के विरुद्ध आक्रमण किया। अंधेरे में घमासान युद्ध हुआ। अन्त में तातार हार गये और मठ वापस ले लिया गया। लेकिन इस लड़ाई में कज़्ज़ाकों का नेता मारा गया।"

युवक एक क्षण के लिए रुक गया।

"कहानी में एक और नाम मिलता है," उसने धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया, "यद्यपि हमें किसी दूसरी क़ब्र का पता नहीं चला है। मठ के अभिलेखों में एक अन्धे युवक बन्दूरिये का उल्लेख मिलता है जो कारी की ही बग़ल में दफ़नाया गया था। वह कारी के साथ कई अभियानों में रहा है।"

"अन्धा ?" थर्राती हुई आवाज़ में आन्ना मिख़ाइलोव्ना ने चिल्ला कर पूछा, "और कारी के साथ अभियानों में ?"

उसके सामने अंधेरे में चलने वाले उस घमासान युद्ध में अपने ही अन्धे पुत्र का चित्र खिंच गया।

"हां, वह अन्धा था और अपने गाने के लिए सारे ज़परोज्ये में विख्यात था। जो भी हो हमें उसके बारे में ऐसा उल्लेख उन अभिलेखों में मिलता है जो पोलिश, उक्रइनी तथा चर्च स्लावोनिक इन तीनों की खिचड़ी भाषा में लिखे गये हैं। अगर आप चाहें तो मैं उनके उद्धरण भी दे सकता हूं। मुझे इसका एक अंश अक्षरशः याद है। यह रहा–'और उसके साथ मशहूर कज़्ज़ाक गवैया युरको भी था जिसने उसका साथ कभी न छोड़ा। वह युरको को बहुत प्यार करता था। जब कारी मर गया तो उन असभ्य अधर्मियों ने युरको को भी काट डाला, क्योंकि उनकी वहशी आस्थाओं में न तो लुंजों के लिए ही कोई दया थी और न संगीत-साधना की यशस्वी प्रतिभा तथा तारों की उस झंकार के लिए ही, जिसे सुन कर स्टेपी के भेड़िये तक शान्त हो जाते थे। गरज़ यह कि इन

वहशियों ने रात्रि के अन्धकार में उसे भी न छोड़ा। और अब गायक और योद्धा एक दूसरे की बग़ल में मीठी नींद सो रहे हैं। उनका यह महान बलिदान अनन्त काल तक अमर रहे। आमीन।'"

"पत्थर चौड़ा है," एक ने कहना शुरू किया, "शायद वे इसके नीचे साथ-साथ दफ़नाये गये हैं।"

"हो सकता है। लेकिन पत्थर पर खुदे हुए शब्द अब लुप्त हो गये हैं। यहाँ सिरे पर कुछ युद्ध-चिह्न ज़रूर दिखाई पड़ते हैं परन्तु बाक़ी कुछ नहीं। अब तो इन पत्थरों में उगने वाली घास ही रह गयी है—घास और केवल घास।"

"एक मिनट ठहरो," प्योत्र चिल्ला उठा। वह इस कहानी को बड़ी दिलचस्पी के साथ साँस रोके हुए सुन रहा था।

वह पत्थर पर झुक गया। उसने अपनी पतली-पतली अंगुलियों से उसपर उगी हुई हरी-हरी काई हटायी। काई में से वह पत्थर का कड़ापन महसूस कर रहा था और उसपर खुदे हुए अक्षरों की हल्की-हल्की रेखाएं टटोल रहा था।

वह एक क्षण तक बैठा रहा। उसका चेहरा ऊपर उठा था और भौहें तन गयी थीं। सहसा उसने ज़ोर ज़ोर से पढ़ना आरम्भ किया—

"इगनाती, जो कारी के नाम से प्रसिद्ध है... एक तातारी तीर का निशाना बन गया है..."

"हाँ इतना हमने भी पढ़ा था," विद्यार्थी बोला।

प्योत्र की अंगुलियाँ पत्थर पर आगे, और आगे, बढ़ती गयीं। " 'जब कारी मरा पड़ा था'..."

"'तो उस अधर्मी सेना ने,'" विद्यार्थी ने बीच में ही बोलना शुरू किया, "अभिलेखों में युरको की मृत्यु का वर्णन इसी प्रकार किया गया है। तो यह सच है—वह भी यहीं इसी पत्थर के नीचे पड़ा है।"

"हाँ—'तो उस अधर्मी सेना ने'," प्योत्र ने पुष्टि की। "और बस मैं इतना ही पढ़ सकता हूं। लेकिन नहीं, ज़रा ठहरो! यहाँ कुछ और भी है: 'तातारों की तलवारों से काट डाला गया...' और कुछ और भी है—लेकिन नहीं, वह पढ़ने में नहीं आ रहा है। बस।"

युवक बन्दूरिये की और अधिक स्मृति अब काल के कराल गाल में समा चुकी थी क्योंकि पत्थर के डेढ़

सौ वर्षों से क़ब्र पर पड़े रहने के कारण उसपर खुदे हुए अक्षर अब धूमिल पड़ चुके थे।

एक क्षण के लिए सारे उद्यान पर गहन नीरवता छा गयी। वायु में केवल पत्तियों की सरसराहट ही सुन पड़ती थी। शीघ्र ही एक लम्बी निश्वास से नीरवता भंग हुई। निश्वास ओस्ताप की थी। वह उद्यान का मालिक था और इन भले आदमियों का स्वागत करने के लिए आगे बढ़ा आ रहा था। उसकी निगाह एक अन्धे युवक पर पड़ी। युवक स्पर्श द्वारा क़ब्र पर खुदे हुए वे शब्द पढ़ने की कोशिश कर रहा था जिन्हें दसियों दशाब्दियों, वर्षा और तूफ़ान इन सभी ने मिल-जुल कर, मानव-दृष्टि से छिपाने के लिए, एड़ी-चोटी का पसीना एक कर दिया था।

"भगवान की कृपा है," उसने कहना आरम्भ किया। निगाहों में कौतूहल भरे वह प्योत्र की ओर देख रहा था, "यह सब ईश्वर की ही माया है कि वह अन्धों को ऐसी-ऐसी बातें जानने-समझने की शक्ति प्रदान करता है जिसे हम आँख वाले कभी देख-समझ नहीं सकते।"

"पान्ना एवेलिना क्या अब भी तुम्हारी समझ में नहीं आया कि मुझे सहसा युरको की याद क्यों आयी?" विद्यार्थी ने प्रश्न किया। गाड़ी मठ की ओर धूलभरी सड़क पर धीरे-धीरे बढ़ रही थी। "हमें यानी मुझे और मेरे भाई को बराबर इस बात पर आश्चर्य होता रहा कि अन्धा गवैया कारी और बिजली की तरह आक्रमण करने वाली उसकी सेना के साथ किस प्रकार बराबर घोड़े पर चलता रहा होगा। यह हो सकता है कि उस समय कारी सेनानायक न रहा हो, केवल एक टुकड़ी का ही नेता रहा हो, लेकिन हम यह जानते हैं कि वह हमेशा घुड़सवार कज़्ज़ाकों का ही नेता रहा था न कि पैदली टुकड़ियों का। और बन्दूरिये—वे तो प्राय: बूढ़े हुआ करते थे जो भीख माँगने के लिए गाँव गाँव घूमते थे। आज जब मैंने तुम्हारे प्योत्र को घोड़े की सवारी करते देखा तो मेरी कल्पना के आगे घोड़े पर सवार उस अन्धे लड़के का चित्र घूम गया जिसके कन्धे पर बन्दूक़ की जगह उसका बन्दूरा लटकता था।"

युवक एक क्षण के लिए रुका और विचारमग्न उसने फिर कहना शुरू किया—

"श्रौर शायद यह तथ्य है कि वह युद्ध में भी लड़ा था। कुछ भी हो वह मोर्चों में भाग लेता था श्रौर ख़तरे उठाया करता था। हमारे इस उक्रइन प्रदेश में वह भी क्या ज़माना था!"

"कितना ख़तरनाक!" श्राह भरते हुए श्रान्ना मिखाइलोव्ना बोली।

"कितना श्रद्भुत!" युवक ने छूटते ही जवाब दिया।

"तब जैसी बातें श्रब कहाँ," प्योत्र बीच ही में बोल उठा श्रौर गाड़ी के पास श्रा गया। भौंहें ऊपर किये श्रौर श्रन्य घोड़ों की चापें सुनते हुए वह ख़ुद भी घोड़े पर, गाड़ी के साथ साथ चलने लगा। उसका चेहरा कुछ श्रधिक सफ़ेद पड़ चुका था श्रौर लगता था जैसे उसपर कोई गहरी भावुकता श्रंकित हो गयी हो।

"श्राजकल वे सब बातें लोप हो गयीं," उसने दुहराया।

"जो बातें लोप होनी थीं वे लोप हो गयीं," मक्सिम बीच में बोल उठा। उसकी श्रावाज़ में उदासीनता थी, "वे श्रपने ज़माने के हिसाब से रहते थे श्रौर तुम्हें श्रपने ज़माने के श्रनुसार रहना है।"

"आपके लिए तो ऐसा कहना ठीक है," विद्यार्थी बोल उठा, "आपने जीवन से कुछ लिया है, कुछ प्राप्त किया है।"

"हाँ, और जीवन ने भी मुझसे कुछ लिया है, कुछ प्राप्त किया है," पुराने गरीबाल्डियन ने उत्तर दिया और अपनी बैसाखी की ओर देखते हुए एक फीकी-सी हँसी बिखेर दी।

कुछ देर तक सन्नाटा छाया रहा। "जब मैं जवान था तो मैं भी पुराने कज़्ज़ाक दिनों के सपने देखता था," मक्सिम कहता जा रहा था, "उन मधुर, मादक दिनों के सपने। मैं सचमुच सादिक* का साथ देने तुर्की चला गया था।"

"हाँ तो उसके बाद क्या हुआ?" युवकों ने उत्सुकतापूर्वक उससे पूछा।

"लेकिन जब मैंने तुम्हारे उन 'स्वतंत्र कज़्ज़ाकों' को तुर्की तानाशाही की नौकरी करते हुए देखा तो मेरे

*सादिक-पाशा चैकोव्स्की नामक एक उक्रइनी स्वप्नदृष्टा था जो कज़्ज़ाकों को तुर्की में एक राजनैतिक सेना में संगठित करने के बारे में सोचा करता था।

सारे सपने हवा हो गये। कितना छल-कपट! कितना ऐतिहासिक ढोंग। तब मुझे इस बात का ज्ञान हुआ कि इतिहास ने पुरानी परम्पराओं को ध्वस्त कर दिया था और तभी मैंने समझा था कि महानता उद्देश्यों की होती है न कि स्वरूप की, भले ही बाहर से वह कितना ही सुन्दर क्यों न दिखाई पड़े। और यह उस समय की बात है जब मैं इटली गया था। वहां के लोग एक उद्देश्य के लिए लड़ रहे थे जिसके लिए, उनकी भाषा न जानते हुए भी, मैं अपना जीवन उत्सर्ग करने को तैयार था।"

मक्सिम गम्भीर हो गया। उसकी बातों में और भी अधिक गहराई आ गयी। उसने वृद्ध स्तवरुचेन्को तथा उसके पुत्रों की ज़ोरदार बहसों में प्रायः कभी कोई भाग न लिया था। हाँ, कभी कभी युवकों के उत्साह पर प्रसन्नता प्रकट करने अथवा उनके पक्ष के समर्थन के लिए, उनके द्वारा अनुरोध किये जाने पर, वह मुस्करा ज़रूर देता था—लेकिन आज जब उनकी कल्पना के सामने उस पुरानी कथा ने एक स्वरूप ग्रहण किया था तो वह क्षुब्ध हो उठा था और उसे ऐसा लगा था जैसे अतीत की इस पुरानी गाथा का आज कोई वास्तविक महत्व

16—920

है–प्योत्र के लिए और प्योत्र के माध्यम से उन सबके लिए।

इस बार युवकों ने तर्क करने का कोई प्रयत्न नहीं किया। शायद इसका कारण यह था कि अभी कुछ ही क्षण पूर्व ओस्ताप के बाग़ में, पुराने वीरों के बलिदानों की खुल खुल कर घोषणा करने वाले क़ब्र के पत्थर के पास उन्हें कुछ भावुक अनुभूति हुई थी, अथवा शायद यह कि वे इस पुराने कर्मठ की गम्भीर वाणी से बहुत प्रभावित हुए थे।

"तो, अब हमारे लिए रह क्या जाता है?" मक्सिम के शब्दों के बाद छा जाने वाली नीरवता को भंग करते हुए विद्यार्थी ने पूछा।

"संघर्ष, वही शाश्वत संघर्ष," मक्सिम ने उत्तर दिया।

"किस क्षेत्र में? किस रूप में?"

"इसका पता लगाना तुम्हारा काम है।"

अब मक्सिम के शब्दों में उपहास की व्यंजना न थी और ऐसा प्रतीत होता था कि वह इन समस्याओं पर गम्भीरतापूर्वक विचार-विनिमय करने के लिए उत्सुक है। लेकिन इस समय गम्भीर बातचीत के लिए मौक़ा न

था। गाड़ी मठ के फाटक तक पहुँच चुकी थी। विद्यार्थी ने प्योत्र का घोड़ा रोक देने के लिए अपना हाथ फैला दिया। अन्धे युवक के चेहरे पर वह भावुकता दिखाई दे रही थी जिसने उसके अन्तस् तक को झकझोर दिया था।

३

मठ के दर्शक प्रायः पुराना गिरजा देखने जाते और फिर घंटे वाली उस मीनार पर चढ़ जाते जहाँ से निकटस्थ ग्रामक्षेत्रों का सुन्दर दृश्य दिखाई पड़ता था। जिन दिनों आसमान साफ़ रहता उन दिनों कोई भी, सामने की ओर दूर तक देखते हुए, वहाँ गुबर्निया केन्द्र होने का अनुमान लगा सकता था और क्षितिज के पास ही द्नीपर की टेढ़ी-मेढ़ी धाराएं देख सकता था।

सूर्यास्त होने को था। ठीक इसी समय मक्सिम को मठ की एक छोटी सी कोठरी के पास आराम करने के लिए छोड़ कर बाक़ी लोग घंटे वाली मीनार की ओर चल पड़े। मेहराबदार मुख्यद्वार के पास उन्हें एक अपरिचित युवक मिला। यह एक कृशकाय मठवासी था जिसके सिर पर एक ऊंचा-सा टोप रखा था। शरीर पर एक लम्बा-

सा कोट पहने यह मठवासी द्वार की ओर पीठ किये खड़ा था और उसका हाथ द्वार पर लगे हुए एक ताले पर था। युवक के सामने कुछ बच्चे डरी हुई गौरैयों की भाँति सहमे खड़े थे। किन्तु थे वे उसकी पहुँच के बाहर। ऐसा लगता था कि इस व्यक्ति और इन बच्चों में कोई झपट हो गयी है। युवक के मुंह पर रोष के लक्षण और ताले पर रखा हुआ उसका हाथ देख कर शायद यह कहा जा सकता था कि वह उन शैतानों को भगाने का प्रयत्न कर रहा था जो इस घात में थे कि कब वे भले लोग ऊपर चढ़ें और कब वे उन्हें धकियाते हुए खुद अन्दर पहुँच जायं। क्रोध के कारण उसका चेहरा तमतमा रहा था।

इस युवक की आँखों में कुछ विचित्रता थी। वे हिलती-डुलती नहीं दिखाई दे रही थीं। उसकी दृष्टि की जड़ता और चेहरे की विचित्र मुद्रा की ओर सबसे पहले आन्ना मिखाइलोव्ना का ही ध्यान आकृष्ट हुआ था। घबड़ा कर उसने एवेलिना का हाथ पकड़ लिया।

लड़की चौंक पड़ी।

"वह अन्धा है!" एवेलिना ने धीरे से कहा।

"हुश!" माँ ने उत्तर दिया, "और—तुम भी ध्यान दे रही हो क्या?"

"हाँ ..."

यह आसानी से समझा जा सकता था कि नवयुवक का चेहरा प्योत्र से मिलता-जुलता था। बड़ी अद्‌भुत बात थी—घबड़ाहट के कारण मुंह पर झलक पड़ने वाली वही सफ़ेदी, वैसी ही साफ़ एवं जड़ पुतलियाँ, भौंहों की वैसी ही व्यग्र चंचलता, जो प्रत्येक ध्वनि सुन कर किसी डरे हुए कीड़े की नाक के बालों की भाँति इधर-उधर नाचने लगती थीं। हाँ, उसकी आकृति प्योत्र की अपेक्षा अधिक रुक्ष थी। मगर इससे तो दोनों की एकरूपता का ही भान होता था। और जब नवयुवक को देर तक खाँसी आती रही और उसने हाथों से अपना सीना दबाया तो आन्ना मिखाइलोव्ना भयभीत हो कर उसकी ओर देखने लगी। उसकी आँखें खुली की खुली रह गयीं मानो उसने कोई भूत देखा हो।

खाँसी का दौरा ख़त्म हो चुकने के बाद युवक ने दरवाज़ा तो खोल दिया लेकिन रास्ता रोक कर दरवाज़े के सामने खड़ा हो गया।

"यहाँ आसपास बच्चे न आयें," उसने रुखाई से कहना शुरू किया और फिर सहसा आगे बढ़ कर बच्चों पर चिल्लाने लगा, "भग जाओ, शैतानो, भग जाओ!"

एक ही क्षण बाद जब सब के सब एक एक करके, मीनार में प्रवेश कर रहे थे कि पीछे से एक अनुनयपूर्ण आवाज़ सुनाई दी –

"घंटिये को भी कुछ मिल जाय, दाता? हाँ पैर ज़रा संभाल कर रखें। अन्दर अंधेरा है..."

सब के सब ज़ीने के नीचे आकर इकट्ठे हो गये। अभी कुछ ही क्षण पहले आन्ना मिखाइलोव्ना को यह सोच कर कि चढ़ाई कितनी सीधी और कठिन है कुछ घबड़ाहट हो रही थी लेकिन अब वह मूक उनके पीछे चलती गयी।

अन्धे घंटिये ने दरवाज़ा बन्द करके उसपर ताला लगा दिया। मीनार के भीतर अंधेरा हो गया, परन्तु कुछ ही क्षणों के पश्चात् आन्ना मिखाइलोव्ना को दीवाल की एक दरार में से आती हुई रोशनी की एक रेखा दिखाई पड़ी जो सामने की दीवाल के खुरदरे, धूल भरे पत्थरों पर पड़ कर वातावरण में कुछ प्रकाश बिखेर रही थी।

युवक मंडली टेढ़े-मेढ़े ज़ीने से होती हुई ऊपर चढ़ रही थी, लेकिन आन्ना मिखाइलोव्ना, जो बाक़ी लोगों

को रास्ता देने के निमित्त एक कोने में दुबक गयी थी, नीचे खड़ी खड़ी अभी भी सकुचा रही थी।

सहसा बच्चों की कुछ आवाज़ें बाहर से सुनाई पड़ने लगीं –

"हमको भी चले जाने दो न। जाने दो न, हमारे अच्छे चचा!"

लेकिन घंटिया दरवाज़े पर डटा रहा और द्वार पर चढ़ी हुई लोहे की चद्दर पर मुट्ठी पटपटाने लगा।

"भग जाओ, शैतानो!" गुस्से में वह चिल्ला रहा था, "भगवान करे तुमपर बिजली गिरे, बिजली।"

"अन्धा शैतान!" कई बच्चे एक साथ ज़ोर से बोल पड़े, और तेज़ी से भाग गये। उनके पैरों की पटर-पटर बराबर सुनाई पड़ती रही।

घंटिया एक क्षण तक सुनता रहा। फिर उसने एक गहरी साँस ली।

"सत्यानाश जाय इन मरों का!" वह बड़बड़ाया, "क्या यह सब कभी खत्म न होगा? तुम सब को शैतान उठा ले जाय।"

और वह फिर बड़बड़ा उठा, "हे भगवान, हे भगवान, तुमने मुझे क्यों भुला दिया?" उसकी इस

आवाज़ में असह्य वेदनाओं को सहते जाने के कारण जन्म लेने वाली निराशा की अनुभूति थी।

फिर जब वह ज़ीने की ओर मुड़ा तो आन्ना मिखाइलोव्ना से टकरा गया। वह वहीं नीचे अभी भी जड़वत् खड़ी हुई थी।

"कौन? आप काहे का इन्तज़ार कर रही हैं?" वह बोला। उसकी आवाज़ तेज़ थी। लेकिन फिर जल्दी ही उसने बड़ी नम्रतापूर्वक कहना शुरू किया—

"ठीक है, ठीक है। डरिये मत। मेरी बांह पकड़ लीजिए, बस।"

जब वे सीढ़ियाँ चढ़ रहे थे तो पुनः उसने पहले जैसी आवाज़ में कहना शुरू किया—

"घंटिये को भी कुछ मिल जाय, दाता!"

आन्ना मिखाइलोव्ना ने अंधेरे में अपना बटुआ टटोला और उसे एक नोट थमा दिया। युवक ने नोट ले लिया। अब वे दीवाल की दराज़ की सीध तक पहुँच गये थे। उससे आते हुए हल्के प्रकाश में आन्ना मिखाइलोव्ना ने देखा कि युवक ने नोट को आपने गाल पर दबाया और उसे अंगुलियों से टटोलने लगा। उसका श्वेत मुख—जो ठीक उसके पुत्र की भाँति था—उस हल्के-हल्के प्रकाश में

धीरे से घूमा और उसके चेहरे पर सरल एवं कंजूसों जैसी प्रसन्नता दौड़ गयी।

"ओह!" वह चिल्लाया। "धन्यवाद, अनेक धन्यवाद। पचीस रूबल! मैं तो समझा था आप मुझे बेवक़ूफ़ बना रही हैं, एक अन्धे का मज़ाक़ उड़ा रही हैं। कुछ लोग उड़ाते हैं।"

आन्ना मिखाइलोव्ना का चेहरा बहते हुए आँसुओं से भीग चुका था। उसने शीघ्र ही आँसू पोंछे और जल्दी-जल्दी चढ़ कर अपने साथियों के पास पहुँच जाने का प्रयत्न करने लगी। यद्यपि उनके शोरगुल तथा पैरों की चापें दूर से आ रही थीं, फिर भी वे किसी पत्थर की दीवाल में से झरते हुए पानी की छलछल की भाँति, प्रतिध्वनित हो हो कर, नीचे तक साफ़ सुन पड़ती थीं।

युवक मंडली काफ़ी ऊंचे पर बने एक मोड़ पर ठहर गयी। यहाँ एक छोटी-सी खिड़की में से कुछ हवा और कुछ प्रकाश आ रहा था, जो नीचे के प्रकाश से अधिक स्वच्छ, अधिक प्रखर था। यहाँ की दीवाल चिकनी थी और उसपर न जाने कितने अक्षर खोदे जा चुके थे—अधिकांशतया ये उन लोगों के हस्ताक्षर थे जो पहले कभी मीनार देखने आये थे।

इनमें से बहुत से नामों से युवक स्तवरुचेन्को का अच्छा-खासा परिचय था। उन्हें जब कभी ऐसा कोई परिचित नाम दिखाई दे जाता तो वे हँस पड़ते और फिर छींटे-कशी शुरू हो जाती।

"ओह, लेकिन यहाँ एक दूसरे क़िस्म की चीज़ भी है," विद्यार्थी कहने और खुदे हुए शब्दों को धीरे-धीरे पढ़ने लगा, "'चलना तो बहुत लोग शुरू करते हैं लेकिन लक्ष्य तक पहुंचते कम हैं।'" वह हँसा और उसने कहना आरम्भ किया, "मैं समझता हूं कि यह इस चढ़ाई के बारे में कहा गया है।"

"आप जैसा चाहें इसका अर्थ लगायें," घंटिये ने एक ओर घूमते हुए रुखाई से कहा, "यहीं पर एक दूसरा पद भी है—कुछ थोड़ा नीचे। अगर आप इसे भी पढ़ें तो कोई हर्ज न होगा।"

"पद? कहाँ? यहाँ तो कोई भी पद नहीं है।"

"ओह तुम कहते हो नहीं है। लेकिन मैं तुम्हें दिखाऊंगा। आप ऐसी बहुत-सी चीज़ें नहीं देख पाते जो देखी जा सकती हैं।"

वह एक दो सीढ़ी नीचे आ गया और जहाँ प्रकाश न पहुँच सका था वहाँ अपना हाथ दीवाल पर दौड़ाते दौड़ाते सहसा रुक गया।

"यह रहा," उसने कहा, "यह एक सुन्दर पद है। आप इसे बिना लालटेन की सहायता के न पढ़ सकेंगे।"

प्योत्र उस ओर घूमा। एक ही क्षण में उसे वे सारी पंक्तियां मिल गयीं जो शायद सौ साल या उससे भी अधिक पहले दीवाल में खोदी गयी थीं किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो अब जीवित नहीं है।

भूलो मत मरण का क्षण—
भूलो मत विधाता के
निर्णय का अंतिम दिन—
भूलो नहीं, जीवन का अंत सदा होता है—
भूलो मत कि प्राणी भोगते हैं
कठिन नर्क भी!

"खूब कहा!" विद्यार्थी ने टीका की परन्तु उसका मज़ाक़ जम न सका।

"अच्छा नहीं लगा! पसन्द नहीं आया?" अनमनेपन से घंटिया बोला, "हाँ, अभी तुम जवान हो, बेशक जवान हो—लेकिन कौन कह सकता है? मृत्यु की घड़ी तो रात के चोर की तरह आती है।" और फिर बदली हुई आवाज़ में कहने लगा, "सुन्दर पद है। 'भूलो

मत मरण का क्षण, भूलो मत विधाता के निर्णय का अंतिम दिन ...'" और फिर वैसे ही आगे कहने लगा, "हाँ, और उसके बाद क्या होगा – यही तो विचारने की बात है।"

लोग सीढ़ियों पर चढ़े और शीघ्र ही निचली मीनार के चबूतरे पर पहुँच गये। यह स्थान काफ़ी उंचाई पर था। एक टूटी हुई दीवाल में से होती हुई सीढ़ियों से हो कर फिर वे एक दूसरे चबूतरे पर आ गये जो पहले से अधिक उंचाई पर था। यहाँ से सामने का एक सुन्दर दृश्य दीख पड़ता था। इस समय सूर्य पश्चिम में डूब रहा था और लम्बी-लम्बी परछाइयाँ नीची भूमि पर लोट रही थीं। पूर्व का आकाश बादलों से ढका होने के कारण गहरे रंग का हो रहा था। काफ़ी दूर पर वातावरण शाम के झुटपुटे में, यत्र-तत्र कुछ स्थानों को छोड़ कर, धूमिल और अस्पष्ट हो चुका था। कहीं कहीं किसी अंधेरे स्थान से प्रकाश में आने पर किसी मिट्टी के घर की सफ़ेद दीवाल या खिड़की के शीशों पर पड़ती हुई अस्ताचलगामी सूर्य की लालिमा या किसी दूरस्थ मीनार पर ठहरी हुई उसकी धूप भी दिख जाती थी।

उस छोटी-सी टोली में नीरवता छायी हुई थी। इस समय इतनी उंचाई पर चलने वाली ताज़ी तथा स्वच्छ

वायु उन्हें मस्त बना रही थी। हवा कभी तो घंटों की रस्सियों से टकरा कर उन्हें झकोर डालती और कभी घंटों को हिला-डुला कर उनमें टन्न जैसी कोई आवाज़ पैदा कर देती जो कानों में पड़ कर या तो दूर से आती हुई संगीत-ध्वनि के समान प्रतीत होती या ऐसी लगती मानो उनके ताम्र हृदय गहरी आहें भर रहे हों। समस्त ग्रामक्षेत्र में मौन एवं शान्ति का वातावरण व्याप्त था।

इस समय मीनार के चबूतरे पर जो मौन छाया हुआ था उसका एक कारण और था। किसी समान आन्तरिक प्रेरणावश दोनों अन्धे युवक कोनों पर बने हुए खंभों तक पहुँच गये थे और उनपर झुके खड़े थे। उनके चेहरों का रुख हवा की तरफ़ था। दोनों ही को मीनार की उंचाई की समान अनुभूति हो रही थी। दोनों ही असहाय थे।

इस समय उन दोनों की आकृति-प्रकृति की समानता देख कर सभी स्तम्भित हो रहे थे। घंटिया उम्र में कुछ बड़ा लग रहा था। उसका लम्बा-चौड़ा कोट उसके दुबले-पतले शरीर पर झूम रहा था। उसका नाक-नक्शा प्योत्र की तुलना में रुक्ष था। सूक्ष्मता से देखने पर कुछ और फ़र्क़ भी मिल सकते थे—घंटिये के

बाल भूरे थे, नाक कुबड़ही थी और ओंठ प्योत्र की अपेक्षा कुछ पतले। उसकी दाढ़ी छोटी किन्तु घुंघराली थी और उसके ओंठों के ऊपर मूंछें मसिया रही थीं। लेकिन दोनों के हाव-भाव, उनके ओंठों की दाब और उनकी भौंहों की निरंतर चंचलता में वह साम्य था जिससे कुबड़हे भाई भी एक जैसे लगते हैं।

प्योत्र की आकृति-प्रकृति अधिक शान्त थी। उसमें जो अभ्यासजन्य उदासीनता दिखाई पड़ रही थी वह घंटिये में कटुता को पहुँच गयी थी जो कभी कभी द्वेष का रूप भी ले लेती थी। किन्तु इस समय घंटिये की आकृति में मृदुता झलक रही थी मानो वायु की कोमलता ने उसके मस्तक की झुर्रियाँ कम कर दी हों और उसकी आत्मा में वह शांति बिखेर दी हो जो नीचे के मनोरम वातावरण से उत्पन्न हो कर उस तक पहुँची थी—यद्यपि नीचे का दृश्य उसकी अंधी आँखों से छिपा हुआ था। उसकी भौंहों की चंचलता धीरे-धीरे कम होती जा रही थी।

सहसा उसकी और प्योत्र दोनों की भौंहें चंचल हो उठीं मानो दोनों ने ही नीचे से आती हुई कोई ऐसी ध्वनि सुनी हो जिसे दूसरे लोग सुनने में असमर्थ थे।

"गिरजे के घंटे," प्योत्र बोला।

"यह सेंट येगोरी का गिरजा है जो यहां से पन्द्रह मील दूर है," घंटिये ने उत्तर दिया, "वे सायंकालीन प्रार्थना के लिए हमारे घंटों से हमेशा आधे घंटे पहले बजते हैं। क्या आप उन्हें सुन रहे हैं? मैं भी सुन रहा हूं। बहुत लोग नहीं सुन पाते..."

और जैसे स्वप्न में हो, वह कहता गया—

"कितना अच्छा लगता है यहाँ, ख़ासकर छुट्टी के दिन। क्या आप लोगों ने कभी मुझे घंटा बजाते सुना है?"

प्रश्न में अहंमन्यता का भाव था।

"तो किसी दिन यहाँ आकर सुनें। फ़ादर पामफ़िली ने—क्या आप फ़ादर पामफ़िली को जानते हैं? नहीं जानते? उन्होंने मेरे लिए यहाँ दो घंटों का इन्तज़ाम कर दिया है।"

उसने खंभों का सहारा छोड़ दिया और उन दो छोटे घंटों का मृदु स्पर्श किया जिन्हें काल के हाथ अभी अधिक मैले नहीं कर सके थे।

"अच्छे घंटे हैं। ख़ास तौर से ईस्टर के दिनों में जिस ढंग से उनमें ध्वनि होती है उसे सुन कर ऐसा लगता है जैसे वे संगीत की सृष्टि कर रहे हों।"

उसने बढ़ कर घंटों की रस्सियाँ पकड़ लीं और शीघ्र ही उनसे सुरीले स्वर निकल निकल कर हवा में फैलने लगे। मगर आवाज़ इतनी धीमी थी और घंटों पर पड़ने वाली चोट इतनी हल्की कि वह मीनार के चबूतरे से आगे जा ही नहीं पा रही थी।

"और बड़े की आवाज़ बू-म, बू-म, बू-म..."

उसके चेहरे पर बच्चों जैसी प्रसन्नता बिखर गयी, लेकिन उसकी इस प्रसन्नता में दयनीयता थी।

"फ़ादर पामफ़िली – हाँ वे ही मेरे लिए ये घंटे लाये थे," सहसा निश्वास लेते हुए वह कहता गया, "लेकिन वे मुझे गर्म कोट नहीं दिलाते। बड़े कंजूस हैं वे। यहाँ इस ऊंचाई पर इतना जाड़ा है कि मैं मर जाऊंगा। शरद ऋतु में तो बड़ी ही तकलीफ़ होती है, ओफ़।"

एक क्षण के लिए वह रुका और उसने फिर कहना शुरू किया।

"वह लंगड़ा नीचे पुकार रहा है। अब आप सब को उतर जाना चाहिए।"

एवेलिना अब तक उसे बड़े ध्यान से देखती जा रही थी मानो उसके सामने प्रकृति का कोई अद्भुत चमत्कार हो। सबसे पहले उसी ने प्रस्ताव किया –

"हाँ, हमें उतरना चाहिए।"

सब लोग सीढ़ियों की ओर बढ़े। मगर घंटिया अपनी जगह से नहीं हिला। और प्योत्र भी, जो सब लोगों के साथ नीचे उतरने के लिए बढ़ चुका था, सहसा रुक गया।

"मेरा इन्तज़ार मत करो। मैं थोड़ी देर बाद आऊंगा," उसने माँ को आज्ञा-सी देते हुए कहा।

शीघ्र ही बाक़ी लोग नीचे उतर गये और सीढ़ियों पर से पैरों की चापें आनी बन्द हो गयीं। केवल एवेलिना कुछ सीढ़ियाँ नीचे वहीं खड़ी रही। वह दीवाल से सटी खड़ी थी। फलतः दूसरे लोग तो नीचे पहुँच गये और वह साँस रोके वहीं जमी रही।

अब अन्धे युवक अपने को अकेले समझ रहे थे। एक क्षण तक दोनों गतिहीन खड़े रहे—शान्त, मौन, कुछ सुनती हुई सी मुद्रा में।

"कौन है?" घंटिये ने पूछा।

"मैं..." प्योत्र ने उत्तर दिया।

"तुम भी अन्धे हो?"

"हाँ। और तुम—क्या तुम्हें भी अन्धे हुए ज़माना हो गया?"

"मैं तो अन्धा पैदा ही हुआ था। रोमान सात साल की उम्र में अन्धा हुआ था। वह घंटे बजाने में मेरी मदद करता है। इधर देखो—क्या तुम बता सकते हो कि कब रात होती है कब दिन?"

"बता सकता हूं।"

"और मैं भी बता सकता हूं। मैं आते हुए प्रकाश का अनुभव कर सकता हूं। रोमान नहीं कर पाता। कुछ भी हो, वह मुझसे अधिक भाग्यशाली है।"

"क्यों?" प्योत्र ने उत्सुकतापूर्वक प्रश्न किया।

"क्यों? जानते नहीं क्यों? उसने दिन का प्रकाश देखा है। उसने अपनी माँ को देखा है। समझे? वह जब रात में सोता है तो भी माँ को देखता है। हाँ, इस समय वह बूढ़ी हो गयी है। लेकिन वह अभी भी उसे जवान देखता है। क्या तुम कभी अपनी मां को नींद में देखते हो?"

"नहीं," प्योत्र ने उत्तर दिया।

"ठीक है तुम नहीं देख सकते। ऐसा तब होता है जब कोई बाद में अन्धा होता है। लेकिन यदि तुम अन्धे पैदा ही हुए हो..."

प्योत्र के मुंह पर गम्भीरता दौड़ गयी मानो उसपर

किसी तूफ़ानी बादल ने अधिकार जमा लिया हो। घंटिये की भौंहें उसकी स्थिर, निश्चल आँखों पर चढ़ी रहीं और अन्धेपन की उस विवशता की व्यंजना करती रहीं जिससे एवेलिना भली भाँति अवगत थी।

"ख़ैर कोशिश कर देखो, कभी कभी मनुष्य पाप करता है और फिर शिकायत करता है—हे भगवान, हे सृष्टिकर्ता, हे देवी, हे भगवती! मुझे भी प्रकाश दिखाओ, ख़ुशियों का अनुभव करने दो, एक बार सिर्फ़ एक बार, भले ही नींद में सही, स्वप्न में सही!"

घंटिये के चेहरे में कम्पन हुआ और उसने अपनी पहली जैसी कटु आवाज़ में कहना आरम्भ किया—

"लेकिन नहीं वे इतना भी नहीं करेंगे। कभी कभी स्वप्न आते हैं ज़रूर आते हैं, किन्तु इतने धूमिल कि जब तुम जगते हो तो तुम्हें उनकी याद तक नहीं रह जाती।"

घंटिया साहसा रुक गया, सुनता रहा। उसका चेहरा श्वेत पड़ गया और उसकी आकृति से व्यग्रता के लक्षण प्रकट होने लगे।

"वे शैतान घुस आये," उसने क्रोध में आकर कहा।

और सचमुच बच्चों की चिल्लपों और उनके पैरों की चापें बढ़ती हुई बाढ़ की गरज के समान संकरी सीढ़ियों

पर से आती सुनाई पड़ रही थीं। फिर एक क्षण के लिए मौन छा गया। शायद बच्चे नीचे के चबूतरे पर पहुँच गये थे जहाँ उनका शोर बाहर खुले मैदान में सुनाई दे रहा था। लेकिन तुरन्त ही ऊपर के चबूतरे पर भी शोर मचने लगा और हँसते-खेलते बच्चों का एक झुंड दौड़ते दौड़ते, और एवेलिना के पास से गुज़रते हुए, घंटे वाले चबूतरे तक पहुँच गया। वे सबसे ऊपर की सीढ़ी पर एक क्षण के लिए रुके और फिर एक एक करके उस दरवाज़े से हो कर घुसने लगे जहाँ अन्धा घंटिया खड़ा था। इस समय घंटिये का मुख द्वेष के कारण विकृत हो रहा था और वह घुसते हुए बच्चों पर अन्धाधुन्ध मुक्के बरसाये जा रहा था।

सीढ़ी के अन्धकार में से एक नयी आकृति और निकली। प्रत्यक्षतः यह नवागन्तुक रोमान था। उसका चेहरा चौड़ा था जिसपर चेचक के दाग़ दूर से दिखाई पड़ रहे थे। चेहरे पर उसकी सुप्रकृति एवं मधुर स्वभाव झलक रहा था। उसकी जड़ आँखें पलकों से ढकी थीं। उसके ओंठों पर मधुर मुस्कान थी। वह भी अभी तक दीवाल से चिपकी खड़ी हुई एवेलिना के पास से गुजरता हुआ ऊपर चढ़ आया। दरवाज़े पर येगोर

के बरसते हुए मुक्कों ने उसका भी स्वागत किया और एक आकर उसकी गर्दन पर भी पड़ गया।

"येगोर!" एक गहरी मगर खुशदिल आवाज़ में वह कह उठा, "भाई फिर क्रोध कर रहे हो?"

वे एक दूसरे के आमने-सामने खड़े थे दोनों को एक दूसरे की मौजूदगी का अनुभव हो रहा था।

"तुमने इन शैतानों को क्यों घुसने दिया?" येगोर ने उत्कइनी में पूछा। उसकी आवाज़ में क्रोध और तेज़ी अभी तक बनी हुई थी।

"इन्हें खेलने भी दो," रोमान ने हँसते हुए उत्तर दिया, "भगवान की छोटी-छोटी चिड़ियाँ। इन्हें क्यों खदेड़ रहे हो? हुंह, छोटे-छोटे शैतान, कहाँ हो तुम?"

बच्चे चबूतरे के कोनों में इकट्ठा हो गये और शान्त बैठे रहे। लेकिन उनकी आँखों से शैतानी अब भी फूटी पड़ रही थी यद्यपि उनमें थोड़ा डर समाया हुआ था।

एवेलिना नीचे उतर रही थी कि उसने येगोर और प्योत्र की चापें सुनीं। दूसरे ही क्षण ऊपर के प्लेटफ़ार्म से बच्चों का कोलाहल और हँसी सुनाई पड़ने लगी क्योंकि इस समय बच्चे खुशी खुशी रोमान की कमर में बांहें डालने के लिए दौड़े पड़ रहे थे।

ग्रौर जब गाड़ी मठ से निकल कर ग्रागे बढ़ी तो ऊपर से घंटों की ग्रावाज़ सुनाई पड़ी। रोमान सायंकालीन प्रार्थना के लिए घंटे बजा रहा था।

सूर्यास्त हो चुका था ग्रौर गाड़ी ग्रन्धकार चीरती हुई बढ़ती चली जा रही थी। ऐसा लग रहा था कि गिरजे के घंटों की नीरस ग्रावाज़ सायंकाल की ग्रन्धकारपूर्ण परछाइयों को भेदती हुई गाड़ी के पीछे-पीछे भागती चली ग्रा रही है।

घर लौटते समय सभी मौन थे। सारी शाम प्योत्र दूसरों से ग्रलग बाग़ के एक सुदूर कोने में बैठा रहा। स्वयं एवेलिना की चिन्ताकुल पुकारों का भी उसने कोई उत्तर न दिया। जब सब सोने चले गये तो वह चुपके से उठा ग्रौर टटोलता टटोलता ग्रपने कमरे में पहुँच गया ...

४

स्तवरुकोवो में मेहमान बाक़ी जितने दिन भी ठहरे रहे उनमें कई बार ऐसे मौक़े भी ग्राये जब प्योत्र पहले ही की तरह उत्साहित ग्रौर ग्रपने ही ढंग से प्रसन्नचित्त दिखाई पड़ा था। उसकी उन वाद्यों में रुचि बढ़ रही थी जिन्हें बड़े स्तवरुचेन्को ने इकट्ठा किया था। बहुत से तो उसके लिए बिल्कुल नये थे ग्रौर उसे उन सबका परीक्षण

करना था। हर वाद्य की एक अपनी ध्वनि थी। ये ध्वनियाँ अलग अलग उसकी प्रत्येक सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूति की अभिव्यक्ति कर सकती थीं। लेकिन कोई ऐसी बात ज़रूर थी जो उसे परेशान कर रही थी और उसकी प्रसन्नता के थोड़े से क्षण बढ़ते हुए अन्धकार की पृष्ठभूमि में कभी कभी चमक जाने वाली बिजली के समान लग रहे थे।

किसी भी संगी-साथी ने कभी घंटे वाली मीनार का कोई ज़िक्र नहीं किया। उस सारी यात्रा को लोग भूल-से गये। लेकिन प्योत्र पर उसका गहरा प्रभाव पड़ा था ऐसा प्रत्यक्ष दिखाई पड़ रहा था। जब कभी वह अकेला होता—या यदि लोगों के बीच होता तो शान्ति के उन क्षणों में, जब उसके मस्तिष्क को व्यस्त रखने के लिए कोई दूसरी बात न रहती, वह स्वयं अपने ही विचारों में डूब जाता और उसके मुख पर कटुता झलक उठती। निश्चय ही इस प्रकार की अभिव्यक्ति पहले भी कई बार उसके चेहरे पर देखने को मिली थी। परन्तु इस बार वह अधिक कटु थी, जिसे देख कर बरबस अन्धे घंटिये का ध्यान आ जाता था।

उसकी एकाग्रता के समय पियानो में से ऐसी ऐसी सुर-ध्वनियाँ निकलतीं जिनमें ऊंची मीनार पर स्थित

घंटों की टुन-टुन और उसके ताम्र हृदय से निकलने वाली गहरी आहें साकार हो उठतीं। और जब पियानो पूरी गति से बजता तो श्रोताओं की कल्पना के समक्ष ऐसे ऐसे चित्र नाचने लगते जिनका वर्णन करना किसी के बूते की बात न होती – टेढ़ी-मेढ़ी सीढ़ियों को घेरे हुए गहन अन्धकार में से निकलती हुई घंटिये की कृशकाया, उसके गालों की अशक्त पड़ती हुई त्वचा, उसका द्वेष, भगवान से उसकी कटुतापूर्ण शिकायतें और फिर घंटे के चबूतरे पर खड़े हुए दो अन्धे युवक जो क़द में, हुलिये में, और प्रत्येक गति या ध्वनि से प्रभावित हो कर भौंहें खींचने-तानने में एक-जैसे प्रतीत हो रहे थे, बिल्कुल एक-जैसे। इन समस्त वर्षों में प्योत्र के मित्रों ने उसमें जो उसकी अपनी छाप, उसका अपना व्यक्तित्व देखा था, वही इस समय तम की रहस्यपूर्ण शक्ति के शिकार हुए सभी व्यक्तियों को समान रूप से मिले अन्धकार के अद्भुत दान के समान प्रतीत हो रहा था।

"देखो आन्ना," घर लौटने के कुछ दिनों बाद मक्सिम ने अपनी बहन से कहा, "इस लड़के में दिखाई पड़ने वाला यह परिवर्तन मठ-यात्रा के बाद से ही

आरम्भ हुआ है। क्या वहाँ कोई असाधारण घटना घटी थी? तुम्हें कुछ मालूम है?"

"आह, यह सब उसी अन्धे के कारण है जिसे हम लोगों ने देखा था," निश्वास छोड़ते हुए आन्ना मिखाइलोव्ना ने उत्तर दिया।

वह कुछ समय पहले ही मठ को खाल वाले दो गर्म कोट और कुछ रुपया भेज चुकी थी और उसने एक पत्र में फ़ादर पामफ़िली से प्रार्थना की थी कि वे दोनों घंटियों को यथासम्भव अधिक से अधिक आराम पहुँचाने की व्यवस्था कर दें। इसमें सन्देह नहीं कि हृदय से सदय होते हुए भी सर्वप्रथम वह रोमान को भूल गयी थी और इसी लिए एवेलिना को उसे यह याद दिलानी पड़ी थी कि वहाँ दो अन्धों की व्यवस्था करने की ज़रूरत है न कि एक की। "हाँ, हाँ ठीक है," उसने एवेलिना को उत्तर दिया था परन्तु वास्तव में उसका सारा ध्यान उस एक पर ही केन्द्रित—येगोर पर। केवल उसी के लिए उसके हृदय में दया का उद्रेक हुआ था। भेंट भेजते समय उसमें अप्रत्यक्ष रूप से इस विचार ने भी जन्म लिया था कि इससे उस अज्ञात किन्तु विभीषक शक्ति का शमन होगा जो उसके पुत्र के

जीवन पर छा जाने के लिए बढ़ती चली आ रही थी।

"कौनसा अन्धा?" मक्सिम पूछने लगा। वह चकित था।

"क्यों... वही जो मीनार में था..."

मक्सिम की बैसाखी ज़मीन पर पटाक से बोली।

"मेरे इन पैरों का सत्यानास जाय! आन्ना तुम शायद भूल गयीं कि मैं मीनार की सीढ़ियों पर नहीं चढ़ सकता। काश औरत में बुद्धि होती! एवेलिना अगर तुम भी मुझे सारी बात नहीं बता सकतीं तो कम से कम यह तो बताओ कि मीनार पर क्या क्या बातें हुई थीं।"

"हमें जो घंटिया ऊपर ले गया था वह अन्धा था..." एवेलिना ने कहना शुरू किया। उसकी आवाज़ धीमी थी। इन कुछ दिनों में वह खुद सफ़ेद पड़ गयी थी। "वह, तो..." उसकी ज़बान लड़खड़ायी और वह रुक गयी। आन्ना मिखाइलोव्ना ने दोनों हाथों से अपना मुंह ढंक लिया। वह उन आँसुओं को छिपाने का प्रयत्न कर रही थी जो उसके गालों पर लुढ़कते चले आ रहे थे।

"और वह बहुत कुछ हमारे प्योत्र से मिलता-जुलता था," एवेलिना कहती रही।

"लेकिन किसी ने मुझे इसके बारे में एक लफ़्ज़ भी न बताया! परन्तु क्या वहाँ और कुछ न था?" और जब मक्सिम ने घूम कर अपनी बहन की तरफ़ देखा तो उसकी आवाज़ धीमी पड़ गयी, "सचमुच यह कोई दुख की बात नहीं।"

"आह यही तो वह बात है जो मेरी सहनशक्ति के बाहर है," आन्ना मिखाइलोव्ना ने धीरे से कहा। उसकी आवाज़ मुश्किल से ही सुनाई पड़ रही थी।

"क्या सहनशक्ति के बाहर है? यही कि कोई अन्धा तुम्हारे बेटे से मिलता-जुलता है?"

इसी समय एवेलिना की निगाहें ऊपर उठीं और मक्सिम ने उनमें जिस भाव की झलक देखी उसे देख कर वह चुप रह गया। आन्ना मिखाइलोव्ना तुरन्त कमरे के बाहर चली गयी, परन्तु एवेलिना हमेशा की भाँति अपनी कढ़ाई में लगी रही। एक क्षण के लिए कमरे में मौन छाया रहा।

"क्या इस कहानी में कुछ और बात भी जुड़ी है? कोई विशेष बात, कोई ख़ास घटना?" आख़िर मक्सिम ने प्रश्न किया।

"हाँ, प्योत्र दूसरों के साथ मीनार के बाहर नहीं निकला था। उसने चाची आन्ना से कहा था"–एवेलिना आन्ना मिखाइलोव्ना को इसी प्रकार सम्बोधित करती थी–"कि वे दूसरों के साथ नीचे चली जायं मगर वह स्वयं उनके पीछे नहीं उतरा था। वह पीछे चबूतरे पर ही खड़ा रहा, उसी अन्धे घंटिये के साथ। और मैं भी... मैं भी वहीं पास ही खड़ी रही।"

"चोरी चोरी उनकी बातें सुनने के लिए?"

प्रश्न यन्त्रवत् पूछा गया था और इस बात का परिचायक था कि मक्सिम शिक्षणविज्ञान का कितना बड़ा पारखी था।

"मैं, मैं नहीं जा सकी," उसने धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया, "वे एक दूसरे से बातें करने लगे वैसे ही..."

"जैसे अभागे अभागों से करते हैं?"

"हाँ जैसे अन्धा अन्धे से करता है और तब येगोर ने प्योत्र से पूछा था कि क्या उसने कभी अपनी माँ को नींद में देखा है। प्योत्र का उत्तर नकारात्मक था। और येगोर–उसने भी माँ को कभी नींद में नहीं

देखा था। लेकिन वहाँ एक दूसरा अंधा घंटिया भी था–रोमान –जो अपनी माँ को बराबर देखता है। अब वह एक बूढ़ी औरत है लेकिन फिर भी वह उसे जवान ही देखता है..."

"हाँ, तो यह बात है? और कुछ?"

एक क्षण की सकुचाहट के बाद एवेलिना ने निगाह उठा कर मक्सिम की ओर देखा। आँखों की नीली गहराइयों में संघर्ष और पीड़ा का प्रतिबिम्ब झलक रहा था।

"वह दूसरा जो है, रोमान, वह हृदय का उदार है और ऐसा लगता है कि बड़ा शान्त रहता है। उसके चेहरे पर शोक की छाप ज़रूर है मगर द्वेष की बू नहीं। लेकिन येगोर..." वह रुकी और फिर जल्दी से कह गयी, "वह बुरी तरह से पीड़ित है।"

"मेरी बच्ची, साफ़ साफ़ कहो तुम्हारा मतलब क्या है," मक्सिम बड़ी बेसब्री के साथ बीच ही में बोल उठा, "यानी उस येगोर में तीखापन है–तीक्ष्णता, कटुता? यही बात है न?"

"हाँ। उसने उन बच्चों को गालियाँ देनी शुरू कीं जो ऊपर तक चढ़ आये थे। यही नहीं उसने मुक्के

बाज़ी भी शुरू कर दी। किन्तु, रोमान – ऐसा लगता था कि बच्चे उसे प्यार करते हैं।"

"तीक्ष्ण, कटु और प्योत्र से मिलता-जुलता," मक्सिम ने कुछ सोच-विचार करने के बाद कहा, "यह बात है, यह बात है।"

एवेलिना को फिर कुछ संकोच हुआ लेकिन वह धीरे-धीरे कहती गयी और ऐसा लगा मानो उसके हृदय पर कोई बोझ रखा हो।

"आकृति में वे दोनों एक-जैसे न थे। उनके बारे में यही कहा जा सकता है कि उनके चेहरे पर पड़ी हुई छापें एक-जैसी थीं। मुझे ऐसा लगता है कि जब तक यह भेंट नहीं हुई थी तब तक प्योत्र बाह्यतः रोमान की तरह था लेकिन इस समय उसमें अधिकाधिक येगोर की अभिव्यक्ति होती जा रही है। और अब, आप देखें, मुझे तो यह डर है... मेरा मतलब है कि मैं सोच रही हूं..."

"तुम्हें क्या डर है, मेरी बच्ची? मेरी लाड़ली? यहाँ मेरे पास आओ।"

मक्सिम ने उससे इतनी मृदुता से बातचीत की (यद्यपि उसके लिए यह असाधारण बात थी) कि एवेलिना की आँखें छलछला आयीं। उसने उसके

रेशम जैसे मुलायम बालों को थपथपाना आरम्भ किया।

"मेरी बच्ची, तुम क्या सोच रही हो? जो कुछ तुम सोच रही हो मुझे भी बताओ। क्योंकि तुम सोच सकती हो यह मैं देख रहा हूं।"

"मैं सोच रही हूं... मैं सोच रही हूं कि वह ऐसा अनुभव कर रहा है कि... जो भी अन्धा पैदा होता है वह निश्चय ही दुष्प्रकृति होता है... और मुझे तो यह भय है कि उसने अपने को इस बात के लिए तैयार कर लिया है कि... वह भी वैसा ही होगा, ठीक वैसा ही।"

"यह बात है," मक्सिम का हाथ घुटने पर गिर पड़ा, "मेरी लाड़ली, मेरा पाइप तो उठा दे, वह रखा है, उस खिड़की पर।"

शीघ्र ही नीले धुएं ने उसके मुंह को चारों ओर से ढक लिया और उसकी बड़बड़ाती हुई आवाज़ धुएं में से आती हुई सुनाई देने लगी।

"यह बात है, यह बात है। नहीं यह बात ठीक नहीं... मैं ग़लती पर था; मेरी बहन ठीक कहती थी। लोगों ने सारी ज़िन्दगी जिन चीज़ों का अनुभव

नहीं किया वे उन चीज़ों को पाना चाहते हैं और न मिलने पर दुख उठाते हैं। और अब उस प्रेरक शक्ति को सचेतन बुद्धि का योग मिला है, अब दोनों ही एक दिशा में काम करेंगी। कैसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना है। यद्यपि, जैसा कहा गया है, सत्य का किसी न किसी प्रकार उद्‌घाटन अवश्य होगा चाहे भी जिस रूप में हो।"

उठते हुए धुएं के कारण उसका चेहरा छिप-सा गया। किन्तु उसके मस्तिष्क में नये-नये विचार और निर्णय जन्म ले रहे थे।

५

जाड़ा आ गया और गाँव, सड़कें तथा मैदान सब कुछ बर्फ़ से ढक गये। ताल्लुक़े भर में सफ़ेदी ही सफ़ेदी दिखाई पड़ रही थी--बर्फ़ की सफ़ेदी। वृक्षों पर पड़ी हुई बर्फ़ ऐसी लगती मानो हरी-हरी पत्तियों के स्थान पर उनपर सफ़ेद सफ़ेद फूल लटके हुए हों। बैठक की अंगीठी में बराबर आग सुलगा करती और जो भी बाहर से घर में क़दम रखता अपने साथ ताज़गी एवं नयी गिरी हुई बर्फ़ की सुरभि ज़रूर बटोर लाता।

अन्य वर्षों में प्योत्र ने भी जाड़े की मादकता का अनुभव किया था। उन दिनों प्रातःकाल के समय प्रायः उसके मानस में उत्साह और शक्ति का कोष बिखर पड़ता। और उसका ध्यान उस दिन जाड़े की ऋतु की समस्त परिचित निशानियों की ओर आकृष्ट होने लगता—सर्दी में बाहर से आये हुए लोगों का रसोईघर में अपने पैरों को पटपटाना; सर्द हवा की छोटी-छोटी लहरों का घर भर में इतराना; अहाते में पैरों की कटर-कटर और बाहर से आने वाली प्रत्येक ध्वनि में सरदी के मौसम की अनुभूति। और तब, जब वह इयोहिम के साथ बर्फ़-गाड़ी पर खुले मैदानों में आता तो ताज़ी बर्फ़ पर बर्फ़-गाड़ियों की दौड़-धूप सुन कर उसका जी बाग़ बाग़ हो जाता और जब वह नदी के उस पार जंगलों से आती और खेतों तथा सड़कों पर प्रतिध्वनित होती हुई चटाख-चटाख की आवाज़ें सुनता तो उसके हृदय की एक एक कली खिल उठती।

किन्तु अब जाड़े का पहला दिन अपने साथ वह पहली जैसी मादकता लेकर न आया। अब तो वह केवल उदासीनता का सन्देशवाहक था।

प्योत्र ने उस दिन ऊंचे बूट पहने और पनचक्की की तरफ़ चल दिया। उसके पैर बर्फ़ में धंसे जा रहे थे।

बाग़ में शान्ति का वातावरण छाया हुआ था। जमी हुई मिट्टी एक मुलायम कालीन जैसी प्रतीत होती और पैर पड़ने पर भी उससे कोई ध्वनि न सुनाई देती। किन्तु आज हवा में जितनी ध्वनि-ग्राह्यता थी उतनी वर्ष के अन्य किसी भी काल में देखने को न मिली थी – कौवे की काँव-काँव, कुल्हाड़ी की पट्ट-पट्ट या किसी टहनी की सरसराहट साफ़ और दूर दूर तक सुनाई दे जाती। कभी कभी प्योत्र के कानों में एक विचित्र झनझनाती-सी आवाज़ पड़ने लगती, जो शीघ्र ही एक पतले और ऊंचे सुर का रूप ले लेती और फिर दूर बहुत दूर जा कर समाप्त हो जाती। यह आवाज़ गाँव के उस पोखरे से आती जो पिछली रात जम गया था, और जहाँ किसानों के लड़के पत्थर फेंका करते थे।

ताल्लुक़े का तालाब भी जम चुका था। किन्तु जिस नदी के किनारे पनचक्की थी वह अब भी अपने हिमावृत तटों के बीच से हो कर बहती और कृत्रिम जलमार्ग में अपनी कलकल छलछल बिखेरती हुई आगे बढ़

रही थी यद्यपि अब उसका प्रवाह हल्का और जल का रंग गाढ़ा पड़ गया था।

प्योत्र बांध तक गया और वहाँ खड़ा खड़ा कुछ सुनता रहा। जल की ध्वनि बदल चुकी थी। उसमें भारीपन आ गया था। और सुरीलापन? वह जाता रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि उस ध्वनि में वह शीतलता प्रतिबिम्बित हो रही है जो, मृत्यु के हाथ की तरह, समस्त ग्राम वातावरण पर छायी हुई थी।

और प्योत्र का हृदय भी निराशा से भर गया। ग्रीष्म ऋतु की उस मधुर शाम को आशंका, असंतोष और कौतूहल की जो अस्पष्ट एवं गम्भीर अनुभूति उसके हृदय की गहराइयों में समा चुकी थी वह इस समय तक इतनी बढ़ गयी थी कि उसकी उस समस्त आत्मा पर छा गयी जहाँ कभी हर्षोल्लास का एकाधिकार था।

एवेलिना वहाँ नहीं थी। शरद ऋतु में वह वहाँ से जा चुकी थी। उसके माता पिता ने अपनी "हितैषिणी", वृद्धा काउन्टेस पतोत्स्काया, के यहाँ जा कर उससे मिलने-जुलने की योजना बनायी थी और काउन्टेस ने उनसे अनुरोध किया था कि आते समय वे अपनी पुत्री को ज़रूर लायें। यद्यपि एवेलिना जाने

की इच्छुक न थी फिर भी उसे अपने पिता के आग्रह के कारण जाना पड़ा था और ख़ासकर इसलिए कि पिता की ज़िद में ख़ुद मक्सिम ने भी हाँ में हाँ मिला दी थी।

इस समय पनचक्की के पास खड़े खड़े प्योत्र ने भावुकताओं की उस पूर्णता, उस तद्रूपता को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जिसकी अनुभूति उसे एक बार पहले भी यहीं, ठीक इसी स्थान पर, हो चुकी थी। "क्या मुझे उसकी अनुपस्थिति खल रही है?" उसने अपने आप से प्रश्न किया – हाँ, उसे उसका न होना खल ज़रूर रहा था, फिर भी अब उसे कुछ ऐसा प्रतीत होता कि वह स्वयं उसकी उपस्थिति से भी प्रसन्न न हो सका था बल्कि एक नयी मर्मभेदी पीड़ा की कसक से कराह उठा था। उसे उस पीड़ा, उस कसक की तीक्ष्णता इस समय, अर्थात् उसकी अनुपस्थिति में, कम लग रही थी।

इतने ही थोड़े समय में उसकी कल्पना के समक्ष उस शाम की सारी घटना साकार हो उठी – उसकी बातें, उसके रेशम जैसे मुलायम बालों का कोमल स्पर्श, अपने सीने से आलिंगित उसके हृदय की धकधक... और इन समस्त सूक्ष्म विवरणों के आधार पर उसने अपने हृदय में उसका एक इतना मनोरम स्वरूप चित्रित कर

लिया था कि वह आनन्द-विभोर हो उठा था। लेकिन अब उसकी चक्षुहीन कल्पना पर छाये रहने वाले प्रेतों की भाँति किसी निराकार एवं सुदृढ़ प्रेरणा ने उसके उस स्वरूप को, उस चित्र को तोड़-फोड़ डाला था, चूर-चूर कर दिया था। वह अपनी उन स्मृतियों का पूर्णता एवं तद्रूपता के साथ सामंजस्य स्थापित न कर पाता जो कभी उसके हृदय पर छा गयी थीं। उसकी अनुभूतियों के पीछे कहीं कोई ऐसा कठोर कण अवश्य था जिसमें परायेपन की कर्कशता थी, चुभन थी और अब वह कण बढ़ते बढ़ते इतना विशाल हो चुका था कि उसने अन्य समस्त अनुभूतियों को ढक लिया वैसे ही जैसे कोई भूधराकार तूफ़ानी बादल क्षितिज को ढकता है।

अब उसकी बोली की प्रतिध्वनि उसके कानों में नहीं गूंज रही थी और न उस लुभावनी संध्या की स्मृति ही उसके मस्तिष्क में शेष रह गयी थी, वरन उसके स्थान पर एक शून्य प्रदेश की सृष्टि हो चुकी थी। उसके अन्तस् में ऐसी कोई बात अवश्य थी जो उसके मानस की गहराइयों में उथल-पुथल मचा रही थी, उस शून्य प्रदेश पर अपना और अधिकार जमाने के लिए व्यग्र थी।

वह एवेलिना को देखना चाहता था!

निस्संदेह उसके हृदय में उस कसक, उस पीड़ा का अंश था जो सदा ही उसके हृदय को आन्दोलित किया करती थी, परन्तु उसमें अस्पष्टता और अर्द्धानुभूत बेचैनी की ही झलक थी, हल्की हल्की दन्त पीड़ा के समान।

अंधे घंटिये से भेंट होने के बाद से यह कसक बढ़ कर इतनी तीव्र हो गयी थी कि उसका सारा हृदय छलनी हुआ जा रहा था।

वह उसे प्यार करता था और उसे देखना चाहता था!

हिमावृत, शान्त, नीरव ताल्लुक़े में दिन पर दिन बीतने के बावजूद उसकी मानसिक स्थिति ऐसी ही बनी रही।

ऐसे भी क्षण आते थे जब उसकी कल्पना के समक्ष प्रसन्नता की अनुभूतियाँ साकार हो उठतीं और उसके चेहरे पर आनन्दोल्लास की रेखाएं एक बार फिर छिटक जातीं। किन्तु ये क्षण भी दीर्घजीवी न होते। कभी कभी तो उसपर एक ऐसी व्यग्रता छा जाती कि उसे यह आशंका होने लगती कि वे क्षण फिर न आयेंगे, कभी न आयेंगे। परिणामतः उसकी मानसिक स्थिति में भी

उतार-चढ़ाव दिखाई पड़ने लगे—कभी उसकी निराशा गहरा उठती, कभी उसकी व्यग्रता बढ़ जाती। अब पियानो घर की एक बैठक में पड़ा पड़ा रोया करता और उसमें से टीस, वेदना और पीड़ा की अभिव्यक्ति करने वाली करुण धुन घर भर में भर जाती। और जब आन्ना मिखाइलोव्ना के कान में ये सुर पड़ते तो उसकी आत्मा तक में कंपकंपी होने लगती, और उसके आँसू छलछला आते।

समय आया और उसकी अनेक आशंकाओं में से एक के पैर जमते दिखाई पड़े। बचपन में प्योत्र के मस्तिष्क को उद्वेलित करने वाले स्वप्न अब एक बार फिर उसके मानस में उठने लगे।

एक दिन प्रातःकाल जब वह सोया ही था कि आन्ना मिखाइलोव्ना ने उसके कमरे में प्रवेश किया। उसे उसके चेहरे पर एक विचित्र बेचैनी दिखाई पड़ी। उसकी आँखें अधखुली थीं, चेहरा सफ़ेद पड़ चुका था और मुखमंडल पर चिन्ताएं झलक रही थीं।

एक क्षण के लिए वह दरवाज़े पर आकर रुकी और उसकी चिन्ता के कारणों का अनुमान लगाने का प्रयत्न करने लगी। परन्तु उसे तो केवल यही अनुभव

हुआ कि उसकी व्यग्रता बढ़ती जा रही है और उसके मुंह पर बेचैनी स्पष्ट होती जा रही है।

और सहसा उसे लगा कि पलंग पर कोई चीज़ हिल सी रही है, उसमें गति है। अथवा यह उसकी कल्पना-मात्र ही तो न थी? यह प्रकाश था, जाड़े की हल्की हल्की धूप का हल्का हल्का प्रकाश जो खिड़की से उतर कर सामने की दीवाल पर पड़ रहा था। प्रकाश प्योत्र के सिर के ठीक ऊपर था। उसने फिर देखा—प्रकाश में झिलमिलाहट हुई और दीवाल पर पड़ने वाला प्रकाशवृत्त खिसक कर और नीचे आ गया। और थोड़ी देर में और नीचे, फिर और नीचे। धीरे-धीरे यह प्रकाश प्योत्र की अधखुली आँखों की ओर बढ़ा और जब वह उनतक पहुंच गया तो प्योत्र का तनाव अधिक और अधिक स्पष्ट हो गया।

आन्ना मिखाइलोव्ना दीवार के सहारे गतिहीन खड़ी रही। उसकी आँखें बराबर उस चलते हुए प्रकाश पर जमी रहीं। जैसे वह स्वप्न देख रही हो—प्रकाश का यह पुंज, झिलमिलाता हुआ, उसकी अरक्षित आँखों की ओर बढ़ रहा था, निकट और निकट। प्योत्र का मुख बराबर सफ़ेद पड़ता जा रहा था और

उससे ऐसे प्रयासों की झलक मिल रही थी जिनमें पीड़ा थी, कसक थी, वेदना थी। अब वह पीला प्रकाश उसके केशों का स्पर्श करने लगा, और अब उसके मस्तक का। माँ की प्रेरणा से उठी और वह अपने लाड़ले की रक्षा को झुकी, किन्तु ऐसा लगता था मानो उसके पैर जम गये हैं और वह हिलने-डुलने में असमर्थ है। अब प्योत्र की आँखें थोड़ी और खुलीं और प्रकाश उसकी अन्धी पुतलियों को दुलराने लगा। उसका सिर तकिये से ऊपर उठा मानो प्रकाश का स्वागत कर रहा हो। उसके ओंठों पर कुछ तनाव उभरा शायद मधुर मुस्कान के रूप में, शायद विलाप के रूप में। और फिर उसके चेहरे पर जड़ता की अभिव्यक्ति होने लगी।

परन्तु अब आन्ना मिखाइलोव्ना अपनी उस जड़ता से मुक्त हो चुकी थी जिसने उसके अंग अंग पर अपना अधिकार जमा रखा था। अब वह पलंग के पास आयी और उसने अपना हाथ प्योत्र के मस्तक पर रख दिया। वह चौंका और जाग पड़ा।

"माँ, तुम हो?" उसने पूछा।

"हाँ!"

वह उठ बैठा। एक क्षण के लिए ऐसा लगा कि उसमें केवल आंशिक चेतना ही आ पायी है। लेकिन तुरन्त ही वह अवस्था समाप्त हो गयी और वह बोल उठा –

"मैं एक स्वप्न देख रहा था, माँ... आजकल अक्सर वैसा ही स्वप्न देखा करता हूं। लेकिन सिर्फ़... मैं उसे बाद में याद नहीं रख सकता।"

६

प्योत्र की मानसिक स्थिति में परिवर्तन आ रहा था। अब, मौन करुणा के स्थान पर उसपर चिड़चिड़ेपन की छाप पड़ने लगी थी। हाँ, उसकी इन्द्रियानुभूति अब पूर्वापेक्षा अधिक प्रखर हो गयी थी और श्रवणानुभूति अधिक तीक्ष्ण। और प्रकाश का स्पर्श तो उसमें विचित्र चेतना पैदा कर देता यह चेतना सन्ध्या-काल में भी पूर्ण जागरूक बनी रहती। उसे सदा इस बात का ज्ञान हो जाया करता कि रात्रि अंधेरी है या ज्योत्स्नापूर्ण; और प्रायः जब परिवार के सारे लोग सो जाते तो वह चुपके से उठता, बाग़ की ओर निकल जाता, और वहाँ घंटों

चहलक़दमी किया करता। यहाँ निःशब्द, निःस्वर उदासीनता में डूबा हुआ वह स्वप्निल चन्द्रिका से प्रेरणा प्राप्त करता। ऐसे क्षणों में वह अपना पीत मुख ऊपर आसमान की ओर उठा देता और चन्द्रमा की शीतल किरणें उसकी आँखों में चमक उठतीं। किन्तु जब चाँद अस्ताचल की ओर जाता और पृथ्वी की ओर की इस यात्रा में उसका आकार उत्तरोत्तर बढ़ने लगता, और वह लालिमावृत हिम-क्षितिज के उस पार डूबने डूबने को होता तो उसके चेहरे पर अधिक कोमल, अधिक शान्तिपूर्ण आभा जगमगाने लगती और वह घर की ओर लौटता तथा चुपके से अपने कमरे में घुस जाता।

उन लम्बी लम्बी रातों में उसके मस्तिष्क में कौन कौन से विचार उठा करते थे यह कह सकना मुश्किल था। जिन जिन लोगों को बुद्धि और ज्ञान के आनन्द और उसकी झंझाओं का अनुभव हुआ है उनके जीवन में कभी कभी ऐसे क्षण भी आते हैं जब उनके अन्तस् में आध्यात्मिक द्वन्द्वों का प्रादुर्भाव होता है—किसी में इन द्वन्द्वों की अवधि अधिक होती है, किसी में कम। और वे क्रिया-कलापों में लगे हुए अपने चारों ओर

देखते हैं, यह समझने का प्रयत्न करते हैं कि प्रकृति में उनका अपना स्थान क्या है, उनका स्वयं अपना क्या महत्व है और बाह्य संसार से उनका क्या और कैसा संबंध है। काल सदा ही कराल रहा है और जिसमें इतनी शक्ति, इतना अदम्य उत्साह है कि वह अविचलित रहते हुए भी अपने निश्चित मार्ग पर चल सके वह भाग्य-शाली है। प्योत्र के लिए एक कठिनाई और भी थी—यदि उसके सामने यह प्रश्न होता कि "हमारे जीवित रहने का उद्देश्य क्या है?" तो वह उसमें यह और बढ़ा देता कि जब "अन्धा ही हूं तो फिर मेरे जीवित रहने का उद्देश्य ही क्या?" और फिर इस विचार के साथ साथ एक बात और थी—वह सदा एक ऐसी आवश्यकता के भौतिक दबाव का अनुभव कर रहा था जिसकी पूर्ति होना सम्भव न था। और इस सबका प्रभाव उसके चरित्र पर पड़ता था।

यास्कुल्स्की परिवार बड़े दिन से कुछ पहले ही वापस आ गया। एवेलिना दौड़ती हुई ताल्लुक़े में गयी और धड़धड़ाती हुई बैठक में पहुँच गयी। उसमें इतना उत्साह, इतनी उत्तेजना थी कि वह आन्ना मिखाइलोव्ना, प्योत्र और मक्सिम को हृदय से लगा

लेने के लिए आकुल हो उठी। उसके बालों में बर्फ़ के कण अब भी जगमगा रहे थे। उसके प्रवेश के साथ ही साथ कमरे में भी ताज़गी आ गयी थी। उसके आने का अनुभव करके पहले तो प्योत्र का चेहरा कुछ चमका, कुछ दमका मगर फिर एक ही क्षण बाद उसमें उदासीनता झलकने लगी और, वह गम्भीर हो उठा।

"मेरा ख्याल है तुम समझती हो कि मैं तुमसे प्रेम करता हूं?" प्योत्र ने कहा। अब वह तथा एवेलिना अकेले रह गये थे।

"मैं समझती ही नहीं मुझे इसका विश्वास भी है," एवेलिना ने उत्तर दिया था।

"लेकिन मुझे इन सब बातों पर कोई विश्वास नहीं," प्योत्र ने गम्भीरता से कहा, "नहीं, बिल्कुल नहीं। मैं सोचा करता था कि मैं दुनिया में सबसे अधिक तुमसे प्रेम करता हूं। लेकिन इस समय मुझे यह यक़ीन नहीं रह गया कि मैं सचमुच तुम्हें प्यार करता हूं। अच्छा हो तुम मुझे जल्दी भूल जाओ और उन ध्वनियों का अनुसरण करो जो तुम्हें ज़िन्दगी की ओर बुला रही हैं।"

"क्यों मुझपर अत्याचार कर रहे हो? आखिर क्यों?" एवेलिना का हृदय टूट रहा था। इच्छा न रहते हुए भी वह इतनी कटु बात कह गयी।

"अत्याचार, तुमपर अत्याचार?" उसके चेहरे पर एक बार फिर दुराग्रह और स्वार्थपरता झलक उठी, "हाँ, मैं अत्याचार कर रहा हूं और इसी प्रकार ज़िन्दगी भर करता रहूंगा। तुमपर अत्याचार न करूं ऐसा मैं नहीं कर सकता। पहले मैं नहीं जानता था किन्तु अब जान गया हूं, और यह मेरा दोष नहीं है। नियति के जिन हाथों ने एक ही झटके में मुझसे मेरी आँखें छीन ली थीं जब मैं पैदा तक न हुआ था आज उन्हीं हाथों ने मेरे हृदय में यह पाशविकता भी भर दी है... हम सभी वैसे ही हैं—जन्म के अन्धे। अच्छा हो तुम मुझे भूल जाओ, मुझे अपने रास्ते से अलग कर दो। हाँ, तुम सब मुझसे दूर हो जाओ क्योंकि तुम्हारे प्रेम के बदले मैं तुम्हें सिर्फ़ दुख दूंगा, तुमपर अत्याचार करूंगा। मैं देखना चाहता हूं। क्या तुम समझ नहीं सकतीं? मैं देखना चाहता हूं, ज़रूर देखना चाहता हूं। यदि मैं सिर्फ़ माँ को, पिता को और तुम्हें और मक्सिम को देख सकूं—यदि मैं तुम्हें एक बार भी

देख सकूं तो मुझे सन्तोष हो जायगा। मैं याद रखूंगा। मैं इस स्मृति को आने वाले वर्षों में गहन अन्धकार के बीच भी सुरक्षित रखूंगा।"

बार बार यही विचार उसके मस्तिष्क में घूमते रहे। जब वह अकेला होता तो कोई न कोई वस्तु उठा लेता और बड़े ध्यान से उसे टटोलता, समझने का प्रयत्न करता और फिर उठा कर एक ओर रख देता और तब सोचता कि उस वस्तु में उसने क्या नयी बात देखी थी, उसमें क्या ख़ास गुण था। वह उन विभेदों पर भी अपना ध्यान केन्द्रित कर देता जो स्पर्श-शक्ति के माध्यम से भिन्न भिन्न रंगों की चमकदार सतहों के बीच उसे समझ में आते थे। और इन समस्त वस्तुओं का ज्ञान उसे विभेदों और तुलनाओं के रूप में ही होता, उनकी भौतिक वास्तविक आकृति के रूप में नहीं। अब उसे धुपहले दिन और अंधेरी रात में इसलिए अन्तर लगता कि दिन का प्रकाश किसी अद्भुत, आश्चर्यजनक, अज्ञात मार्ग से उसके मस्तिष्क में प्रवेश करता और उसकी पीड़ाओं को घनीभूत कर देता।

७

एक दिन बैठक में मक्सिम ने प्योत्र और एवेलिना को बैठे देखा। एवेलिना चिन्तित और परेशान थी, और प्योत्र उदास। ऐसा लग रहा था कि प्योत्र अपने को और दूसरों को पीड़ा पहुँचाने वाले कष्ट-स्रोतों की खोज करने में व्यस्त है।

"वह बराबर पूछा करता है," एवेलिना ने मक्सिम से कहा, "कि जब लोग घंटों के बारे में 'लाल घनघनाहट' की बातें करते हैं* तो उसका क्या मतलब होता है। और मैं यह बात उसे ठीक ठीक नहीं समझा पाती।"

"क्यों, परेशानी क्या है?" मक्सिम ने प्योत्र से एक संक्षिप्त सा प्रश्न किया।

प्योत्र ने कंधे हिला दिये।

"कोई ख़ास नहीं। सिर्फ़ यही–यदि ध्वनियों का रंग हो और मैं उसे न देख सकूं तो इसका अर्थ यह

*लाल घनघनाहट–एक रूसी वाक्यांश है जो किसी छुट्टी के दिन गिरजे में घंटे बजने के अर्थ में प्रयोग में लाया जाता है।–अनु०

है कि मैं ध्वनि का पूरा पूरा अनुभव नहीं कर सकता।"

"तुम बच्चों जैसी बेवक़ूफ़ी की बातें कर रहे हो," मक्सिम ने कुछ तीखा-सा जवाब दिया, "तुम्हें अच्छी तरह मालूम है कि यह बात ठीक नहीं। तुम्हारा ध्वनि-ज्ञान हम लोगों से कहीं अधिक बढ़ा-चढ़ा है।"

"लेकिन जब लोग वैसा कहते हैं तो उनका मतलब क्या होता है। उसका कुछ न कुछ अर्थ तो होता ही होगा।"

मक्सिम सोचने लगा।

"यह सिर्फ़ एक तुलना है," उसने उत्तर दिया, "अगर ठीक ठीक देखो तो ध्वनि एक गति है और प्रकाश भी गति है। और ऐसा होने पर उनमें कुछ समान विशेषताएं भी होती हैं।"

"कौनसी विशेषताएं?" प्योत्र ने आग्रह किया, "यह 'लाल घनघनाहट' क्या है?"

मक्सिम चुप हो गया। वह उत्तर देने के पहले कुछ सोचना चाहता था।

वह ध्वनि-कम्पन के विज्ञान की बात बता सकता है। मगर उसका विचार था कि इससे प्योत्र को सन्तोष न होगा क्योंकि जिस किसी ने भी ध्वनि का

वर्णन रंगों तथा प्रकाश के विशेषणों की सहायता से किया है उसे शायद इनमें से किसी के भी भौतिक स्वरूप का ज्ञान न था। फिर भी यह स्पष्ट था कि उसे उनमें किसी एकरूपता का आभास मिल रहा था। लेकिन कौनसी एकरूपता?

मक्सिम के दिमाग़ में एक नया विचार जड़ जमाने लगा।

"मैं नहीं कह सकता कि मैं तुम्हारे सामने इसे स्पष्ट भी कर सकूंगा या नहीं," वह बोला, "तुमने उसे कई बार गिरजे की छुट्टियों के दिनों में सुना है और तुम उन्हें उतना ही समझते हो जितना मैं। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना ही है कि इस तरह का प्रयोग हमारी तरफ़ नहीं किया जाता।"

"ठहरो, एक मिनट ठहरो।" जल्दी जल्दी प्योत्र ने पियानो खोला और उसे बजाने लगा। कुछ हल्के हल्के सुरों की पृष्ठभूमि में उसकी अभ्यस्त उंगलियों से ऊंचे ऊंचे सुर निकलने लगे, स्पष्ट एवं गतिवान—एक के बाद एक; और हृदय को प्रसन्न कर देने वाली वही ध्वनियाँ कमरे में गूंजने लगीं जो गिरजे की छुट्टी के दिन घंटों से निकल कर वातावरण में फैलती थीं।

"ठीक है!" मक्सिम ने उत्तर दिया, "बिल्कुल ठीक, ऐसी ही ध्वनियाँ। और इन्हें बजाने में तुम जैसा होशियार कोई दूसरा नहीं हो सकता यद्यपि हमारे पास देखने के लिए आँखें ज़रूर हैं। हाँ और अगर मैं किसी बड़ी सतह वाली लाल चीज़ को देखता हूं तो उसका मुझपर वैसा ही असर पड़ता है जैसा कि इस लाल घनघनाहट का—बेचैनी की अनुभूति, दिमाग़ी उथल-पुथल। ख़ुद लाली में परिवर्तन होते रहते हैं। लाली की गहराई, पृष्ठभूमि में हल्के पड़ते हुए रंग का घनत्व, और सतह पर इधर-उधर दिखाई पड़ जाने वाली कभी गहरी और कभी तेज़ी से अदृश्य होती हुई लालिमा। इन सब का आँखों पर बड़ा प्रभाव पड़ता है—कम से कम मेरी आँखों पर तो पड़ता ही है।"

"कितनी ठीक बात है, बिल्कुल ठीक कहा," एवेलिना उत्तेजित हो कर बीच में बोल पड़ी, "मुझे भी वैसी ही अनुभूति होती है। मैं लाल मेज़पोश को देर तक नहीं देखती रह सकती।"

"और कुछ लोग छुट्टियों के घंटे भी बर्दाश्त नहीं कर सकते। हाँ, मैं समझता हूं कि यह तुलना मैंने ठीक ही की है। हम इस तुलना को और भी अधिक

स्पष्ट कर सकते हैं। घंटियों की एक विशेष प्रकार की ध्वनि को लोग गुलाबी 'ध्वनि' कहते हैं। और इसी नाम का एक रंग भी होता है। यह ध्वनि और रंग लाल रंग के बहुत समीप हैं – गहराई लिए हुए, हल्के, अधिक समतल। त्रोइका बर्फ़-गाड़ियों की नयी नयी घंटियों की टुनटुनाहट हमेशा तीखी, असमान और कर्णकटु होती है, लेकिन जब वे बहुत काल तक प्रयोग में आ चुकती हैं तो उनमें, उनकी ध्वनियों के जानकारों के कथनानुसार, एक नयी धुन पैदा होने लगती है और फिर इसी गुलाबीपन का आभास मिलने लगता है। और यदि तुम छोटी छोटी घंटियों की ध्वनियों के साथ उनका सामंजस्य बिठा सको तो गिरजे के घंटों में भी ऐसा ही प्रभाव दिखाई पड़ सकता है।

प्योत्र घंटियों की टुनटुनाहट जैसी ध्वनियाँ पियानो पर निकालने लगा।

"नहीं," मक्सिम ने कहा, "मैं तो इसे भी लाल ही कहूंगा।"

"ओह अब समझा!"

और ध्वनियों में समानता आ गयी। ऊंचे सुरों में आरम्भ की गयी ये ध्वनियाँ नीचे और नीचे आती गयीं

ग्रौर धीरे धीरे नीची, गहरी ग्रौर मृदु होती गयीं। ग्रब ध्वनियाँ त्रोइका गाड़ी की घंटियों के समान निकल रही थीं, विशेष रूप से जब वे धूलभरी सड़क पर भागती हुई त्रोइका से ग्राती ग्रौर बराबर धीमी पड़ती हुई, यहाँ तक कि ग्राम क्षेत्र की नीरवता से एकाकार हो कर मूक होती हुई, सुनाई देती हैं—शान्त, समान, मधुर।

"यही ध्वनि है!" मक्सिम बोला, "तुमने इस ग्रन्तर को ठीक ठीक समझा है। हाँ, एक बार तुम्हारी माँ ने ध्वनि के माध्यम से रंगों का ज्ञान कराने की कोशिश की थी। उस समय तुम बच्चे थे।"

"मुझे ग्रच्छी तरह याद है। उस समय ग्रापने उस प्रयास को छुड़वा क्यों दिया था? शायद मैं रंगभेद जान ही लेता।"

"नहीं," मक्सिम कहने लगा, "उससे कुछ न होता यद्यपि मुझे ऐसा लगता है कि ध्वनि एवं रंगों की छापों से लोगों के भीतर जो प्रभाव पैदा होते हैं वे प्रायः परस्पर समान होते हैं। उदाहरणार्थ, हम किसी व्यक्ति के विषय में कहते हैं कि वह दुनिया को गुलाबी चश्मे से देखता है लेकिन हमारा मतलब होता है कि वह व्यक्ति

ख़ुशदिल है, आशावादी है। सम्यक् ध्वनि-चयन से भी बहुत कुछ वैसी ही मानसिक स्थिति पैदा हो सकती है। मैं तो यहाँ तक कहूंगा कि ध्वनियाँ तथा रंग आन्तरिक अनुभूतियों के प्रतीक हैं।"

मक्सिम अपना पाइप जलाने के लिए एक क्षण तक चुप रहा और कश लगाते लगाते प्योत्र के चेहरे की ओर देखता रहा। प्योत्र शान्त बैठा बैठा कुछ और सुनने की प्रतीक्षा करता रहा। एक क्षण के लिए मक्सिम को संकोच भी हुआ। क्या वह कहता ही जाये? लेकिन विचार आते-जाते रहे और वह अपनी ही धुन में धीरे धीरे, किन्तु रुक रुक कर, कहता गया। "और तुम्हें मालूम है–मेरे दिमाग़ में विचित्र प्रकार के विचार आते हैं। क्या यह सिर्फ़ इत्तिफ़ाक़ है कि हमारा ख़ून लाल है? जब कभी तुम्हारे दिमाग़ में कोई विचार आता है या सोते समय जब तुम कोई ऐसे सपने देखते हो कि जागने पर कंपकंपी चढ़ जाती है और आँखों से आँसू निकल पड़ते हैं तो तुम्हारे ख़ून का दौरा तेज़ हो जाता है और वह हृदय से द्रुतगति से निकलता हुआ दिमाग़ की ओर दौड़ने लगता है। यह लाल ख़ून है।"

"वह लाल है... हमारा खून..." प्योत्र ने विचारशील मुद्रा में फिर दुहराया, "लाल और गर्म..."

"हाँ, लाल और गर्म। यह लाल रंग और वे ध्वनियाँ जिन्हें हम लाल कह सकते हैं हमें प्रफुल्लित करती हैं, उत्साहित करती हैं। वे हमारे समक्ष कामुक धारणाओं की भी एक प्रतिकृति खड़ी करती हैं जिन्हें लोग उष्णता के पर्याय कहते हैं। और एक दूसरी दिलचस्प बात भी है: कलाकार लाल वर्णों को 'उष्ण' वर्णों का नाम देते हैं।"

मक्सिम ने थोड़े से कश लगाये और धुएं ने चारों ओर से उसे घेर लिया।

उसने कहना शुरू किया: "अगर तुम अपना हाथ ऊपर उठाओ और फिर घुमाते हुए नीचे ले आओ तो तुम देखोगे कि इस प्रकार एक अर्द्ध-वृत्त बन जाता है। हाँ, अब कल्पना करो कि तुम्हारा हाथ लम्बा है, बहुत लम्बा, इतना लम्बा जिसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता। अगर तुम उसे भी वैसे ही झुलाओ तो भी एक अर्द्ध-वृत्त बनेगा जो बहुत बड़ा होगा—अनादि, अनन्त। वहीं, हमारे ऊपर, आसमान की छत है, मेहराब की तरह—दूर, बहुत दूर तक फैली हुई। एक अति विशाल अर्द्ध-वृत्त—

एक जैसा अनन्त नीला... जब ऐसा प्रतीत होता है तो हमारी आत्मा शान्त रहती है उसपर किसी प्रकार का आवरण यानी बादल नहीं रहता। परन्तु जब अनन्त आकाश पर अस्पष्ट, गतिवान, परिवर्तनशील बादल छाये रहते हैं उस समय हमारा आध्यात्मिक मौन भी भंग हो जाता है और हमें कुछ ऐसी व्यग्रता का अनुभव होने लगता है जिसे शब्दों में नहीं व्यक्त किया जा सकता। जब कहीं कोई तूफ़ानी बादल उठता है उस समय क्या तुम उसका अनुभव नहीं करते?"

"हाँ, लगता तो ऐसा ही है कि हमारी आत्मा में कोई चीज़ उथल-पुथल मचा रही है।"

"बिल्कुल ठीक। और इसी लिए हम प्रतीक्षा करते हैं कि बादलों के पीछे से गहन नीलाकाश हमें दिखाई पड़े। तूफ़ान निकल जाता है परन्तु नीलाकाश अपने स्थान पर बराबर बना रहता है। हम उसे अच्छी तरह जानते हैं और इसी लिए हम तूफ़ान को बरदाश्त करते हैं। लेकिन फिर आसमान नीला है और शान्त रहने पर समुद्र भी नीला ही रहता है। तुम्हारी माँ की आँखें नीली हैं और एवेलिना की भी।"

"आसमान की ही भाँति..." प्योत्र अधीर हो उठा।

"हाँ, आसमान की ही भाँति। नीली आँखें आध्यात्मिक स्वच्छता की द्योतक हैं। अब हरा रंग लो। ज़मीन काली होती है, बसन्त के आरम्भ में पेड़ के तने काले और कभी कभी भूरे होते हैं और तब बसन्त का सूर्य अपनी धूप और अपना प्रकाश इस काले काले धरातल पर फैलाता है और उसमें गर्मी पैदा करता है। इस कालेपन को छिपाने के लिए भूमि से हरियाली उत्पन्न होती है और सारी कालिमा हरीतिमा से ढक जाती है—हरी हरी घास, हरी हरी पत्तियाँ। इस हरियाली में प्रकाश भी होना चाहिए और उष्णता भी। परन्तु अत्यधिक प्रकाश और अत्यधिक उष्णता नहीं। यही वजह है कि हरियाली आँखों को भाती है। हरियाली की उष्णता में ओस कणों की शीतलता मिली रहती है, जिसमें मौन सन्तोष और स्वास्थ्य की अनुभूति होती है—हाँ भावोद्रेकों के लिए नहीं जिसे लोग हर्षोल्लास की संज्ञा देते हैं। क्या मैं यह सब बातें तुम्हें ठीक ठीक समझा सका हूं?"

"नहीं... बिल्कुल ठीक तो नहीं। परन्तु फिर भी आप कहते जायं, कृपया कहते जायं।"

"क्या करूं! ख़ैर, फिर कहता ही चलूं। जैसे ही जैसे ग्रीष्म की उष्णता बढ़ती है, हरियाली भी बढ़ती है

ग्रौर वह भी समय ग्राता है जब वह ग्रपने पूरे उठान पर होती है। उस समय पत्तियाँ झुक जाती हैं ग्रौर यदि उष्णता को वर्षा की शीतलता से शान्त न कर दिया जाय तो हरियाली पूरी पूरी समाप्त हो जाती है। परन्तु जब शरद का ग्रागमन होता है तो फल फलते हैं ग्रौर श्रम-श्लथ पत्तियों के बीच ग्रपनी दिन-बदिन बढ़ती हुई लालिमा बिखेरने लगते हैं। फल के जिस ग्रोर सबसे ग्रधिक प्रकाश पड़ता है वह भाग सबसे ग्रधिक लाल हो उठता है। ऐसा लगता है कि उसके भीतर कोई प्राणदा शक्ति ग्रौर विकसित होती हुई वस्तुग्रों की ग्रीष्मकालीन उत्कंठा समा गयी है। यहाँ भी तुम देखते हो कि लाल रंग उत्कंठा का ही द्योतक है। लाल रंग हर्षोल्लास, पाप, रोष, क्रोध तथा प्रतिकार सूचक रंग है। जब जनता के बड़े बड़े समूह विद्रोह के लिए ग्रपनी ग्रावाज़ बुलन्द करते हैं तो वे ग्रपनी उन ग्रनुभूतियों को, जो उन्हें लक्ष्य की ग्रोर बढ़ाती हैं, ग्रपने ध्वज की उस लालिमा के माध्यम से ही व्यक्त करते हैं जो उनके मार्च के समय वायुप्रताड़ित ज्वाला की भाँति उनके साथ साथ ग्रागे बढ़ती है। लेकिन फिर भी मैं ग्रपनी बात स्पष्ट न कर सका।"

"कोई बात नहीं। कहते जायं!"

"शरद के अन्तिम दिन। फल पक जाते हैं और वृक्ष से झड़ कर निस्सहायों की भाँति ज़मीन पर गिर पड़ते हैं। फल की मृत्यु ज़रूर हो जाती है परन्तु उसके अन्तस में स्थित बीज और बीज में नया पौधा फिर भी जीवित रहता है, और उस पौधे में उसके नये पत्ते और फिर दुबारा लगने वाले नये नये फल। बीज ज़मीन पर गिर पड़ता है और उसके ऊपर पड़ती हैं सूर्य की तिरछी किरणें जिनकी उष्णता हल्की होती है और शीतल भी। और फिर ठंढी ठंढी हवाएं बहती हैं और अपने आगे आगे ठंढे ठंढे बादलों को ढकेलती हुई बढ़ती हैं। उस समय न केवल भावोद्रेक अपितु स्वयं जीवन तक मूक हो जाता है, निर्जीव, नीरस ... धीरे धीरे हरियाली के आवरण में से काली काली पृथ्वी की ताक-झांक आरम्भ होती है। आसमान का नीलापन ठंढा पड़ जाता है और एक दिन वह भी आता है कि लाखों करोड़ों हिम कण इस विधवा पृथ्वी को ढकने लगते हैं और शीघ्र ही पृथ्वी चिकनी, सफ़ेद और समतल दिखाई पड़ने लगती है... सफ़ेद—यह बर्फ़ का रंग है, उस ऊंचे से ऊंचे बादल का रंग है जो अप्राप्य उंचाइयों पर तैरता-उतराता है, और गर्व से अपना सिर उठाये एकाकी खड़े हुए ऊंचे ऊंचे उन पर्वत-

शिखरों का रंग है जिनपर वनस्पति नाम की कोई चीज़ नहीं जमती। सफ़ेद शुद्धता, शीतलता, पवित्रता और आत्मा के भावी जीवन का प्रतीक है। और काला ..."

"वह मैं जानता हूं," प्योत्र ने बात काटते हुए कहा, "कोई ध्वनि नहीं, कोई गति नहीं। रात्रि।"

"हाँ, और इसी कारण वह शोक का प्रतीक है, मृत्यु का प्रतीक है।"

प्योत्र विकल हो उठा।

"मृत्यु का प्रतीक!" उसने धीरे से ये शब्द दुहराये, "मृत्यु! यही कहा न आपने? और मेरे लिए ... मेरे लिए तो सारी दुनिया काली है। हमेशा, हर जगह।"

"यह ठीक नहीं," मक्सिम ने कुछ तेज़ी से उत्तर दिया, "तुम्हें ध्वनि, उष्णता और गति का ज्ञान है। तुम उन दोस्तों के बीच रहते हो जो तुम्हें प्यार करते हैं। ऐसे बहुत से होंगे जो उस प्रसाद को पाने के लिए अपनी आँखें दे देना पसन्द करेंगे जिससे तुम इतनी घृणा करते हो। किन्तु, तुम हो कि शोक से आतुर हो रहे हो और अपने स्वार्थ के लिए।"

"और यदि आतुर हूं तो?" प्योत्र में भावोद्रेक की अभिव्यक्ति हुई, "ठीक है मेरा हृदय शोक से ग्रस्त है। तो फिर क्या करूं। यह मेरे बस की बात नहीं! मैं इससे बच नहीं सकता। वह हमेशा मेरे साथ रहेगा।"

"अगर तुम किसी प्रकार अपने दिमाग़ में यह बात बिठा सको कि दुनिया में लोगों को इससे भी सैकड़ों गुना अधिक कष्ट भोगना पड़ता है, यदि तुम समझ सको कि तुम जो इस प्रकार का जीवन व्यतीत कर रहे हो—लोग तुम्हें पलकों पर बिठाते हैं, तुम्हें चाहते हैं, तुमसे प्रेम करते हैं—वह उन कष्टों को देखते हुए स्वर्ग है स्वर्ग ..."

"नहीं, नहीं!" प्योत्र बीच ही में पहले जैसी ऊंची आवाज़ में सरोष बोल उठा, "यह ठीक नहीं। मैं अपने को सबसे दुखी भिखारी से बदलने को तैयार हूं क्योंकि वह मुझसे ज़्यादा ख़ुश है। अन्धों के लिए यह सारी उत्कंठा, सारी चिन्ता—इसमें कोई तुक नहीं, इसके कोई माने नहीं। यह एक बड़ी भूल है... अन्धे—उन्हें तो भीख माँगने के लिए सड़कों पर छोड़ देना चाहिए। हाँ, अगर मैं भिखारी होता तो इतना अभागा न होता। सुबह जागता तो मेरे दिमाग़ में पेट भरने की बात आती और मैं भीख में मिले पैसों को गिनता रहता। कम

से कम मुझे चिन्ताएं तो बनी रहतीं, और इन्हीं चिन्ताओं में मैं अपनी प्रसन्नता की बात भी सोच लेता। और फिर यह चिन्ता तो होती कि रात कहाँ कटेगी, और यदि मेरे पास पैसे न हों तो मुझे भूख और सर्दी काटने दौड़ेगी... और, इन सबमें मैं इतना व्यस्त रहता कि एक क्षण के लिए भी मुझे अवकाश न मिलता और... ख़ैर मुझे इस समय जितना कष्ट है उतना किसी कठिनाई के उपस्थित होने पर भी न होता।"

"न होता?"

मक्सिम की आवाज़ में उदासीनता थी। उसने एवेलिना की ओर सदय दृष्टि से देखा और लड़की की मुद्रा गम्भीर हो गयी।

"नहीं, कभी नहीं। मुझे विश्वास है," प्योत्र ने दृढ़ता से उत्तर दिया। उसकी बोली में कर्कशता थी। "मुझे येगोर से ईर्ष्या होती है। जब मैं सुबह उठता हूं तो मुझे उसकी याद आती है—ख़ासकर जिस दिन तेज़ हवा चलती है, बर्फ़ पड़ती है। मैं कल्पना करने लगता हूं मानो वह मीनार की सीढ़ियों पर चढ़ रहा है..."

"सर्दी में," मक्सिम बीच में ही बोल पड़ा।

"हाँ, सर्दी में। वह काँपता है और खाँसता है। और बार बार फ़ादर पामफ़िली को बुरा भला कहता है क्योंकि वह उसे जाड़े के लिए गर्म कोट नहीं ला देते। और तब वह घंटे की रस्सियाँ पकड़ लेता है और प्रातः-कालीन प्रार्थना के लिए उन्हें बजाना आरम्भ कर देता है। और फिर यह भूल जाता है कि वह अन्धा है क्योंकि कोई भी वहाँ ठंढक ही महसूस करेगा चाहे वह अन्धा हो या आँख वाला। लेकिन मैं... मैं यह नहीं भूल सकता और मैं..."

"और तुम्हारे पास ऐसा कोई है नहीं, जिसे बुरा भला कह सको।"

"हाँ, मेरे पास ऐसा कोई भी नहीं जिसे मैं बुरा भला कह सकूं। मेरे जीवन को भरने के लिए कुछ भी तो नहीं—सिवा इस अन्धेपन के और कुछ भी तो नहीं। और मैं इसके लिए दोष भी किसे दूं, लेकिन मुझसे अधिक खुश तो एक मामूली भिखारी होगा।"

"शायद हो," मक्सिम ने उदासीनता से कहा, "मैं इसके बारे में बहस न करूंगा। कुछ भी हो, यदि तुम्हें जीवन में कठिनाइयाँ भुगतनी पड़तीं तो शायद तुम अधिक अच्छे बन जाते।"

और एवेलिना पर एक दयनीय दृष्टि डालते हुए मक्सिम ने अपनी बैसाखी उठायी और पटपट करता हुआ कमरे से बाहर निकल गया।

प्योत्र की मानसिक अशान्ति इस बातचीत के पश्चात् और भी अधिक गहन हो गयी। अब वह अधिक व्यग्र, अधिक बेचैन हो उठा।

जब मक्सिम द्वारा वर्णित अनुभूतियाँ प्योत्र के मानस से टकरातीं और उसकी अपनी अनुभूतियों से मिल कर एकाकार होतीं तो उसके मुख पर प्रफुल्लता की एक रेख दौड़ जाती। पृथ्वी दूर, अति दूर, क्षेत्रों तक फैली थी–गम्भीर, उदास, शोकाकुल। वह उसकी थाह पाने का प्रयत्न करता परन्तु उसका कोई ओर-छोर न था। पृथ्वी के ऊपर एक निस्सीमता व्याप्त थी... उसकी स्मृति उसकी कल्पना के समक्ष बादलों की गड़गड़ाहट के दृश्य खड़े कर देती और उसी के साथ. उसे विशालता और महानता की अनुभूति होने लगती। और फिर यह गड़गड़ाहट समाप्त हो जाती। लेकिन कोई ऐसी चीज़ अवश्य रह जाती जो उसकी आत्मा में निर्मलता एवं विशालता की भावना भर देती। कभी कभी तो एवेलिना या

अपनी माता की बोली सुन कर प्योत्र की यह भावना और प्रखर और स्पष्ट हो जाती क्योंकि उनकी आँखें "आसमान की तरह थीं"; लेकिन फिर उसकी कल्पना की गहराइयों से उठ उठ कर एक स्वरूप ग्रहण करने वाली छापें सहसा अदृश्य हो जातीं।

ये सारी धूमिल कल्पनाएं उसे कलपाती रहीं। उन्होंने आत्मिक सन्तोष को उसके आगे कभी फटकने नहीं दिया। यद्यपि उसने अपनी इन अनुभूतियों को समझने के लिए कठोर श्रम किया था फिर भी वे सदा उसके लिए अस्पष्ट बनी रहीं और उसे केवल निराशा हाथ लगी। वे उस पीड़ा को कम न कर सकीं जो उसे उसकी व्यथित आत्मा की अभीप्सित वस्तु की तलाश में अथवा उन अनुभूतियों की पुनःप्राप्ति के विफल प्रयासों में होती थी जिनसे जीवन ने उसे वंचित कर रखा था।

८

वसन्त आया।

स्तवरुकोवो से विपरीत दिशा में, ताल्लुक़े से लगभग ६० मील दूर, एक छोटे से नगर में कैथालिक मतानुयायियों द्वारा प्रतिष्ठित ईसा मसीह की एक ऐसी प्रतिमा थी जो

बड़े बड़े आश्चर्यजनक कार्य करती थी। इस संबंध में कुछ ख़ास ख़ास लोगों का कहना था कि इस प्रतिमा में अद्भुत चमत्कारिक शक्ति है। ऐसा मशहूर था कि जो भी प्रतिमोत्सव के दिन पैदल चल कर प्रतिमा की वन्दना करने जाता उसे "बीस दिनों की छूट" मिल जाती अर्थात् इस पृथ्वी पर बीस दिनों के दौरान में किये गये किसी भी पाप या अपराध के लिए उसे अगले जन्म में कोई भी दण्ड न भुगतना पड़ता। यही कारण था कि वसन्त ऋतु के आरम्भ में प्रतिवर्ष एक ख़ास दिन उस छोटे से नगर में ज़िन्दगी की बहार खेला करती। पुराना गिरजा उत्सव के दिन वसन्तकालीन प्रथम पत्र-पुष्पों से भरा-पूरा दिखाई पड़ता और चित्त को प्रसन्न कर देने वाली उसके घंटों की घनघनाहट सारे नगर में प्रतिध्वनित होने लगती। उस दिन चारों ओर से आने वाली भिन्न भिन्न प्रकार की गाड़ियों के पहियों की खड़खड़ाहट सुनाई देती और पैदल चल कर आये हुए यात्रियों की भीड़ की भीड़ नगर के मैदानों, सड़कों और दूरस्थ खेतों में भर जाती। ये यात्री कैथालिक्स ही होते हों ऐसी बात न थी। इस प्रतिमा की ख्याति दूर दूर तक पहुँच चुकी थी और, फलतः, कितने ही पीड़ित

दुखी ईसानुयायी तक उससे खिंचते हुए चले आते थे। इनमें से अधिकांश होते थे शहरों में रहने वाले।

हमेशा की भाँति इस वर्ष भी उत्सव के दिन गिरजे की सड़क पर मनुष्यों के सिर ही सिर दिखाई पड़ रहे थे। प्रायः सभी लोग सुन्दर सुन्दर वेश-भूषा में मनोवांछित प्रसाद-प्राप्ति की आकांक्षा में आये थे। यह जन-समूह पास वाले टीले से एक अजगर की भाँति धीरे धीरे आगे बढ़ता हुआ नज़र आ रहा था। उसके दोनों ओर भीख के लिए हाथ फैलाये हुए भिखारियों की दो लम्बी लम्बी पंक्तियां थीं।

बैसाखी पर सारा बोझ डाले हुए मक्सिम नगर के बाहर जाने वाली सड़क पर धीरे धीरे आगे बढ़ रहा था। इयोहिम के साथ प्योत्र भी उसकी बग़ल में चल रहा था।

अब भीड़ का कोलाहल, यहूदी फेरी वालों की चिल्लपों, पहियों की खड़खड़ाहट और गिरजे की सड़क के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक कान फाड़ देने वाला सारा शोर और होहल्ला प्रायः पीछे छूट चुका था। इस दूरी पर यह सारी आवाज़ें ध्वनि की एक वृत्ताकार तरंग के रूप में कभी उठतीं, कभी गिरतीं, आगे बढ़ रही

थीं। यद्यपि यहाँ भीड़ कम थी फिर भी पैरों की चापें, लोगों की चेंचें और धूल भरी सड़क पर पहियों की खड़खड़ाहट निरन्तर सुनाई पड़ रही थी। एक बार तो गाड़ियों की एक लम्बी क़तार चर्रमर्र करती हुई उनके पास से हो कर गुज़री और निकट की एक गली में घुस गयी।

दिन में ठंढक थी। प्योत्र मक्सिम की पदचापों का अनुसरण करता और बराबर अपने कोट से बदन को ढाकता-छिपाता आगे बढ़ रहा था। यद्यपि उसका ध्यान उस ओर न था फिर भी उसने सड़क पर होने वाला कोलाहल सुना। परन्तु यहाँ भी उसका मस्तिष्क उसी उधेड़बुन में लगा रहा जो इतने अरसे से बराबर उसे व्यग्र कर रही थी, व्यस्त रख रही थी।

और इस स्वार्थपूर्ण व्यस्तता के बीच प्योत्र के कानों में एक नयी आवाज़ पड़ी जिसने उसके अन्तस् को इतनी ज़ोरों से झकझोरा कि उसने एकदम अपना सिर ऊपर उठा दिया और सहसा रुक गया।

अब वे नगर के उस अन्तिम छोर पर पहुँच गये थे जहाँ मकानों की आख़िरी पंक्तियाँ समाप्त हो चुकी थीं और बाड़ों तथा ऊसर भूमि की लम्बी लम्बी क़तारें शुरू हो गयी थीं। अन्ततः सड़क के बाद वे खुले खुले खेतों के बीच

हो कर जाने वाले एक चौड़े से राजमार्ग पर आ गये। सड़क और राजमार्ग के बीच पत्थर का एक खंभा पड़ता था जिसपर ईसा मसीह की एक प्रतिमा थी और एक लालटेन रखी थी। निश्चय ही इस खंभे का निर्माण अतीत काल में किन्हीं पवित्र हाथों द्वारा हुआ होगा। सच बात यह थी कि लालटेन कभी जलायी न गयी थी किन्तु वह वायु के झकोरों के कारण इधर-उधर हिलती-डुलती अवश्य दिखाई पड़ती थी। और इस खंभे के नीचे अंधे भिखारियों की एक भीड़ की भीड़ खड़ी थी। प्रत्येक के हाथ में लकड़ी का एक भिक्षा-पात्र था। उनमें से कभी कभी कोई ऊंची आवाज़ में बोल उठता था:

"भिखारी को भी कुछ देते जाओ, दाता... प्रभु ईसा के नाम पर ..."

इस समय सर्दी पड़ रही थी और भिखारी सुबह से इन्तज़ार कर रहे थे। खेतों से हो कर बहने वाली ठंढी हवा से भिखारियों के लिए कोई भी बचाव न था। वे दूसरों की तरह भीड़ में घूम घूम कर भी अपने शरीर को गर्मी नहीं पहुँचा सकते थे। बारी बारी से उनकी दयनीय आवाज़ें कान में पड़तीं, जिनमें उनकी अंग-विकृति एवं निरीहता का ही रोना होता। कुछ देर आवाज़ लगा लेने के बाद उनका सीना जवाब दे जाता और उनकी आवाज़ें

एक हल्की बड़बड़ाहट के रूप में बदल जातीं जो अन्त में एक आह बन कर हवा में विलीन हो जाती। परन्तु ये हल्की आहें भी मानव के कानों में पड़ कर उसके सारे शरीर को उद्वेलित कर देतीं और उसके समक्ष दुखी पीड़ित मानवता का एक नग्न चित्र खड़ा कर देतीं – वह चित्र जिसे देख कर भी सहसा विश्वास न होता।

प्योत्र रुक गया। उसके चेहरे पर पीड़ा के लक्षण स्पष्ट दिखाई पड़ने लगे मानो भिखारियों का करुण क्रन्दन उसके मार्ग में खड़ा हो कर उसका रास्ता रोक रहा हो।

"तुम डर क्यों गये?" मक्सिम ने उससे पूछा, "जिन्हें तुम सुन रहे हो वे वही भाग्यशाली आत्माएं हैं जिनसे तुम अभी थोड़े ही समय पूर्व ईर्ष्या करते थे। ये हैं अन्धे भिखमंगे, टके टके के लिए हाथ फैला रहे हैं। बेशक उन्हें कुछ सर्दी लग रही है। लेकिन तुम्हारे हिसाब से तो इससे उन्हें खुशी ही होनी चाहिए।"

"यहाँ से निकल चलें!" मक्सिम का हाथ पकड़ते हुए प्योत्र चिल्ला उठा।

"ओह तो तुम चल देना चाहते हो! और क्या दूसरों की पीड़ा के प्रति तुम्हारी यही प्रतिक्रिया है?

नहीं थोड़ी देर के लिए ठहरो। बहुत समय से मैं तुमसे कुछ गम्भीर बातें करना चाहता था। और जो कुछ मुझे कहना है उसके लिए यह बड़ी अच्छी जगह है। तुम्हें बराबर शिकायत रहती है, क्योंकि समय बदल गया है और अन्धे युवकों को उस युवक बन्दूरिये युरको की भाँति युद्धस्थल में रात के वक़्त टुकड़े टुकड़े नहीं किया जाता। तुम्हें क्रोध आता है क्योंकि उस मीनार के येगोर की भाँति तुम्हारे पास बुरा-भला कहने के लिए कोई नहीं। और अपने हृदय में तुम कोसते भी होगे। किन्हें? उन्हें जो तुम्हारे अपने हैं क्योंकि उन्होंने तुम्हें उस परमानन्द से वंचित कर दिया है जो इन भिखमंगों को मिल रहा है। शायद तुम्हारा विचार ठीक ही हो। मैं एक बूढ़ा सिपाही हूं और समझता हूं कि हर मनुष्य को अपने जीवन का मार्ग चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। और तुम भी मनुष्य हो। इसलिए जो कुछ मैं कह रहा हूं उसे ध्यान से सुनो। यदि तुम हमारी ग़ल्तियों को दूर करने का निश्चय करो, यदि तुम अपने भाग्य का मज़ाक़ उड़ाने का संकल्प करो और उन सभी सुविधाओं का परित्याग करना चाहो जो जीवन ने तुम्हें इस संसार में क़दम रखते ही दी थीं और इन अभागों की तरह जीवन बसर करने का प्रयत्न करो

तो मैं, मक्सिम यात्सेन्को, तुम्हें वचन देता हूं कि तुम्हारी क़द्र करूंगा, तुम्हें मदद दूंगा और तुम्हारा समर्थन करूंगा। मेरी बात सुन रहे हो न, प्योत्र? जिस समय मैंने अपने को युद्ध और ज्वाला में झोंका था उस समय तुमसे थोड़ा ही बड़ा था। मेरी माँ ने मेरे लिए आँसू बहाये थे वैसे ही जैसे तुम्हारी माँ तुम्हारे लिए बहायेगी। लेकिन कुछ भी हुआ हो मैं यह तो समझता हूं कि जो कुछ मैंने किया उसे करने का मुझे पूरा अधिकार था वैसे ही जैसे यह अधिकार तुम्हें अब है। ज़िन्दगी भर में सिर्फ़ एक बार नियति मनुष्य को निश्चय करने का मौक़ा देती है। सोच लो और अपना निश्चय कह डालो ..." मक्सिम बात समाप्त करने से पहले ही भिखारियों की ओर घूम कर चिल्लाने लगा—

"फ़्योदोर कन्दीबा! तुम यहाँ हो?"

"मैं यहाँ हूं," एक टूटी सी आवाज़ सुनाई दी।

"क्या आप हैं, मक्सिम मिखाइलोविच?"

"हाँ। जहाँ मैंने तुम्हें आने के लिए कहा था वहाँ आज से एक हफ़्ते में चले आना। समझ गये न?"

"आ जाऊंगा," भिखारी ने उत्तर दिया और उसकी आवाज़ दूसरे अन्धों की आवाज़ों में विलीन हो गयी।

मक्सिम की आँखों में चमक आ रही थी।

"वहाँ तुम्हें एक आदमी मिलेगा," उसने कहना शुरू किया, "जिसे सचमुच अपने भाग्य को कोसने का अधिकार है और अधिकार है खुद अपनों को कोसने का। शायद तुम उससे सीख सकोगे कि अपना बोझ कैसे उठाया जाता है..."

"आओ, चलें यहाँ से," इयोहिम बीच ही में बोल पड़ा और मक्सिम की ओर एक कुपित दृष्टि डालते हुए प्योत्र का हाथ पकड़ उसे घसीटने लगा।

"नहीं," मक्सिम गुस्से से चिल्लाया, "अभी तक ऐसा कोई नहीं पैदा हुआ जिसने अन्धों के पास से हो कर गुज़रते हुए उनकी झोली में ज़्यादा नहीं तो कम से कम एक पैसा न छोड़ा हो। क्या तुम इतना किये बिना ही भाग जाना चाहते हो। तुम्हें धिक्कार है। कहाँ क्या करना चाहिए तुम इतना भी नहीं जानते। जब खुद पेट भरा रहता है तो दूसरों की भूख के लिए ईर्ष्या करना आसान है, बहुत आसान!"

प्योत्र ने अपना सिर पीछे घुमा लिया मानो उसे कोड़े की मार पड़ी हो। अपना बटुआ निकालते हुए वह भिखारियों की टोली की ओर बढ़ा। जब उसकी टटोलती हुई छड़ी सबसे निकट के भिखारी पर जा कर

रुकी तो वह उसपर झुका, उसने लकड़ी का भिक्षा-पात्र छुआ और बड़ी होशियारी से उसमें कुछ पैसे डाल दिये। रास्ता चलने वाले लोग बाक़ी लोगों से भिन्न और अमीर से लगने वाले इस युवक को अन्धे के पात्र में भीख डालते देख कर रुक गये। वे देख रहे थे कि देने वाला भिखारी के हाथों को टटोलता हुआ दे रहा था और भिखारी उस दान को टटोल टटोल कर ग्रहण कर रहा था।

परन्तु मक्सिम तेज़ी से एक ओर हट कर सड़क पर आगे बढ़ गया। उसका चेहरा लाल था और आँखों से चिंगारियाँ निकल रही थीं... इस समय शायद उसे वैसा ही क्रोध आ रहा था जैसा उसे जवानी में आता था। अब वह शिक्षण-शास्त्री नहीं था जो कहने के पहले हर शब्द को तौलता हो, उसपर विचार करता हो। वह जोश में था और अपने क्रोध को रोकने का कोई प्रयत्न न कर रहा था। थोड़ी देर बाद उसने प्योत्र पर एक सरसरी निगाह डाली और उसका ग़ुस्सा कुछ ठंढा हुआ। प्योत्र दूध की भाँति सफ़ेद पड़ चुका था। उसकी भौंहें खिंच कर पास पास आ गयी थीं और

उसके चेहरे से ऐसा लग रहा था मानो उसके हृदय में क्रान्ति मची हुई हो।

सर्द हवा चल रही थी। जब वे उस छोटे से नगर की सड़कों से हो कर बढ़ रहे थे तो धूल भी उन्हें चारों ओर से लपेटे हुए उनसे अठखेलियाँ सी करती प्रतीत हो रही थी। अपने पीछे वे उन अन्धे भिखारियों की बड़बड़ाहट सुनते जा रहे थे जो प्योत्र द्वारा दिये गये पैसों को लेकर झगड़ रहे थे।

६

शायद प्योत्र को ठंढ लग गयी थी या शायद उसके मानस में चलने वाले दीर्घकालीन अन्तर्द्वन्द्वों का अन्त हो रहा था या शायद दोनों ही कारण एक साथ उपस्थित हो गये हों—अगले दिन वह अपने कमरे में बीमार पड़ा था। उसका सारा शरीर ज्वर से जल रहा था। उसका चेहरा विकृत हो रहा था और वह चारपाई पर पड़ा पड़ा करवटें बदल रहा था। कभी कभी वह कुछ सुनती हुई सी मुद्रा में प्रतीत होता और कभी घबड़ा कर उठ बैठता मानो अभी ही कहीं चल देगा। शहर से बूढ़ा डाक्टर उसे देखने आया, उसने

उसकी नाड़ी पर हाथ रखा और वसन्त काल की ठंढी हवाओं के बारे में बातचीत करने लगा। मक्सिम की आँखों से रोष के लक्षण दिखाई पड़ रहे थे और वह अपनी बहन से आँखें चुरा रहा था।

ज्वर बहुत समय तक चलता रहा। जब प्योत्र के अन्तस् में द्वन्द्व उठते तो कई कई दिन तक वह निर्जीव-सा पड़ा दिखाई देता। किन्तु यौवन में एक लोच, एक प्रतिक्रिया-शक्ति है। उसने रोग पर विजय पायी।

एक दिन प्रातःकाल आन्ना मिखाइलोव्ना ने वसन्तकालीन सूर्य की तिरछी किरणें रोगी के बिस्तर पर गिरती हुई देखीं।

"पर्दा गिरा दो," उसने एवेलिना के कानों में कहा, "यह धूप... मुझे इसका कोई विश्वास नहीं..."

किन्तु जब एवेलिना खिड़की तक जाने के लिए तैयार हुई तो सहसा प्योत्र कहने लगा – इतने दिनों बाद उसने ये पहले शब्द कहे थे –

"नहीं, मत गिराओ। ऐसे ही रहने दो..." और दोनों खुशी खुशी उसके ऊपर झुक गयीं।

"तो तुम सुन रहे हो? मुझे पहचानते हो?" माँ ने पूछा।

"हाँ," उसने उत्तर दिया और कुछ ठहर गया। ऐसा लग रहा था मानो वह कुछ याद करने का प्रयत्न कर रहा हो। तभी धीरे से वह बोल उठा, "ओह यही बात है!" और बैठने की कोशिश करने लगा। "वह फ़्योदोर–क्या वह आ गया?"

एवेलिना और आन्ना मिखाइलोव्ना ने एक दूसरे को उत्सुक नेत्रों से देखा। आन्ना मिखाइलोव्ना ने प्योत्र के ओंठों पर अपनी उंगलियाँ रख दीं। "चुप रहो, चुप हो जाओ," वह धीरे से बोली, "बातचीत करना तुम्हारे लिए नुक़्सानदेह है।"

प्योत्र ने माँ का हाथ पकड़ा और उसे मृदुता से चूम लिया। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे और बहते ही गये। ऐसा लगता था मानो उसे शान्ति मिल रही है।

कुछ दिनों तक प्योत्र बहुत विचारशील और शान्त बना रहा। किन्तु जब कभी मक्सिम के पैरों की आहट उसे कमरे में सुनाई दे जाती तो उसके चेहरे पर व्यग्रता के चिह्न दिखने लगते। फलतः स्त्रियों ने मक्सिम से अनुरोध किया था कि वे रोगी के कमरे से दूर रहें।

लेकिन एक दिन स्वयं प्योत्र ने उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की, परन्तु एकान्त में।

पलंग के पास आकर मक्सिम ने प्योत्र का हाथ अपने हाथों में ले लिया और वे उसे बड़ी मृदुता से दबाने लगे।

"प्योत्र, बच्चे," उन्होंने कहना शुरू किया, "ऐसा लगता है कि मुझे तुमसे माफ़ी माँगनी चाहिए।"

प्योत्र ने भी चचा के हाथों को दबाया। "मैं समझता हूं," उसने धीरे धीरे कहना आरम्भ किया, "कि आपने मुझे एक सबक़ सिखाया है और मैं उसके लिए आपका आभारी हूं।"

"सबक़! भाड़ में झोंको उसे!" मक्सिम न बड़ी बेसब्री से कहना शुरू किया, "यह भी बड़ी ख़राब चीज़ है, शिक्षक! हुंह! इतने इतने समय तक। इससे तो मनुष्य का दिमाग़ मिट्टी में मिल जाता है मिट्टी में। नहीं उस दिन मैं सबक़ की बात नहीं सोच रहा था। मुझे सिर्फ़ गुस्सा आ रहा था, अपने ऊपर और तुमपर..."

"तो क्या आप सचमुच चाहते थे कि..."

"क्या कहते हो, मैं क्या चाहता था? और कौन कह सकता है कि जब मनुष्य आपे में नहीं रहता तो वह क्या चाहता है। मैं सिर्फ़ यही चाहता था कि तुम्हें दूसरों के दुख-दर्द का कुछ ज्ञान हो और तुम अपने बारे में सोचना-विचारना कुछ कम कर दो।"

एक क्षण तक दोनों चुप रहे।

"उनकी वे आवाज़ें," अन्त में प्योत्र बोला, "मैं तो उन्हें एक बार भी नहीं भूल पाता। और वह फ़्योदोर जिसके बारे में आपने कहा था—वह कौन था?"

"फ़्योदोर कन्दीबा। मेरा एक पुराना मुलाक़ाती।"

"क्या वह... भी अन्धा ही पैदा हुआ था?"

"इससे भी कहीं ख़राब। उसकी आँखें युद्ध में जला डाली गयी थीं।"

"और अब वह गाता है और भीख माँगता है?"

"हाँ, और उसे अपने ढेरों अनाथ भतीजों का भरण-पोषण करना पड़ता है। और जिससे भी वह मिलता है उसे अपनी ख़ुशमिज़ाज बातों से, अपने हँसी-मज़ाक़ से, ख़ुश कर देता है।"

"सच?" प्योत्र न पूछा और विचार करता सा कहने लगा, "बड़ी विचित्र बात है। और मैं तो चाहूंगा कि..."

"मेरे बच्चे, तुम क्या चाहोगे?"

कुछ ही मिनटों बाद कमरे में किसी के आने की आहट हुई और आन्ना मिखाइलोव्ना ने दरवाज़ा खोला। उसने दोनों के चेहरों पर एक नज़र डाली और उसे यह समझते देर न लगी कि दोनों ही आपसी बातों में रमे हैं और उसकी उपस्थिति ने बातों में बाधा डाली है।

एक बार ज्वर से मुक्ति मिल जाने के बाद प्योत्र का युवा शरीर तेज़ी से स्वस्थ होने लगा। अगले दो हफ़्तों में वह चंगा हो गया और ठाठ से घूमने-फिरने लगा।

उसमें बड़ा परिवर्तन आ गया था। अब उसकी आकृति बदली बदली सी लगती और उसके अन्तस् की कटु अनुभूतियाँ उसके चेहरे पर प्रतिबिम्बित न हो पातीं। परिणामतः वह उदास, मौन और शान्त रहने लगा।

मक्सिम को भय था कि यह परिवर्तन कहीं अस्थायी न हो वैसा जैसा शारीरिक अशक्तता के कारण

कभी कभी स्नायुमंडल के ढीले पड़ जाने की वजह से देखने में आता है।

एक दिन सायंकाल प्योत्र, अपनी बीमारी के बाद से पहली बार, पियानो पर बैठा और सुर-कुंजिकाओं पर उंगलियाँ दौड़ाने लगा। उसके संगीत में बहुत कुछ उसकी मानसिक स्थिति के अनुरूप एक मौन एवं मृदु उदासीनता थी। सहसा उसके इस संगीत में से अन्धे भिखारियों की आवाज़ और उनकी लय और धुन बिखर बिखर कर कमरे में फैलने लगी। संगीत समाप्त हुआ और उसके साथ ही प्योत्र उठ पड़ा। उसका चेहरा विकृत हो रहा था। आँखों में आँसू छलछला आये थे। ऐसा लगता था कि अभी उसमें जीवन के उस सशक्त बेसुरेपन से मोर्चा लेने की शक्ति का विकास नहीं हुआ है जिसने उसमें इस हृदय-विदारक शोक-गान के रूप में घर कर लिया था।

और एक बार फिर शाम के समय मक्सिम और प्योत्र आपस में बातचीत करते दिखाई दिये। दोनों अकेले थे और गम्भीर वार्ता में देर से व्यस्त। और उसके बाद दिन बीते, हफ़्ते बीते और महीने बीते, लेकिन

प्योत्र की मन:स्थिति में कोई परिवर्तन देखने में न आया। अपने दुर्भाग्य की वह कटु अनुभूति, वह स्वार्थपूर्ण चेतना, जिसने उसके हृदय को पिछले कई महीनों से आन्दोलित कर रखा था और उसकी आत्मिक शक्ति को जकड़ दिया था, अब निर्मूल होती सी दिखाई पड़ रही थी। और उसके स्थान पर अन्य अनुभूतियाँ अपनी जड़ें जमा रही थीं। अब फिर उसने अपने ध्येय निश्चित किये और भविष्य की योजनाएं बनानी आरम्भ कीं। उसमें नये जीवन का विकास हो रहा था और उसकी आहत आत्मा में नयी-नयी भावनाएं जन्म ले रही थीं उसी प्रकार जिस प्रकार ठूंठ वृक्ष वसन्त की प्रथम मादक बयार का मृदु संस्पर्श पा कर खिल उठता है, झूम उठता है...

उसी ग्रीष्म ऋतु में यह निश्चय किया गया कि प्योत्र गम्भीर अध्ययन के लिए किएव जायगा। एक विख्यात पियानो वादक को उसका शिक्षक भी नियुक्त किया गया। प्योत्र के साथ सिर्फ़ उसके चचा को ही रहना था। और इस एक बात पर प्योत्र तथा मक्सिम दोनों ने ही पूरा ज़ोर दिया था।

१०

जुलाई के महीने में एक दिन संध्या के समय एक इक्का रात भर विश्राम करने के लिए एक निकटस्थ वन-प्रदेश के किनारे, एक खेत में जा कर रुक गया। प्रभात की पहली किरण फूटने के साथ ही साथ दो अन्धे भिखारी सड़क पर जाते हुए दिखाई दिये। एक के हाथ में एक खोखले बेलन के आकार का बाबा आदम के ज़माने का एक बाजा था। बाजे का हैंडिल घुमाने पर उसके भीतरी तारों में झंकार होने लगती और उसमें से नीरस और उदासीन सुर निकल निकल कर हवा में उड़ने लगते। दूसरा भिखारी कोई प्रातःकालीन भजन गुनगुनाता जा रहा था। उसकी आवाज़ में भिनभिनाहट थी और वृद्धावस्था-सुलभ टूटन, मगर फिर भी वह श्रुति-मधुर थी।

सड़क से आगे, थोड़ी दूर पर धूप में सुखायी हुई मछलियों से लदी-लदाई कुछ गाड़ियाँ चर्र-मर्र करती आगे बढ़ रही थीं। गाड़ीवानों ने सुना कि कोई उन अंधे भिखारियों को पुकार रहा है। मुड़ने पर उन्होंने

देखा कि अन्धे सड़क के एक ओर घूमे और उन लोगों की ओर बढ़े जो इक्के की बग़ल में एक कालीन बिछाये आराम कर रहे थे। कुछ समय बाद जब गाड़ीवान अपने घोड़ों को एक कुएं के पास पानी पिलाने के लिए रुके तो उनकी फिर इन्हीं भिखारियों से भेंट हुई। मगर इस बार दो की जगह तीन आदमी थे। उनका नेता अपने बड़े डंडे को सड़क पर पटपटाता हुआ आगे आगे चल रहा था। वह बूढ़ा था, उसके सफ़ेद बाल हवा में लहरा रहे थे और उसकी सफ़ेद लम्बी मूंछें नीचे की ओर झुकी थीं। उसके मस्तक पर कुछ पुराने दाग़ दिखाई पड़ रहे थे जो शायद जलने के कारण पड़ गये थे। उसकी आँखों में गड्ढे पड़े थे और उसके कंधे से जाती हुई एक मोटी सी डोरी पीछे चलने वाले दूसरे भिखारी की पेटी से बंधी थी। यह दूसरा भिखारी एक लम्बा, भोंड़ा सा व्यक्ति था जिसके चेहरे पर चेचक के दाग़ थे और मुंह से दुष्टता झलक रही थी। दोनों की चाल अभ्यस्तों जैसी थी, दोनों के नेत्रहीन चेहरे ऊपर उठे थे जैसे वे आसमान की ओर देख कर ही अपना रास्ता ढूंढ रहे थे। तीसरा भिखारी एक युवक था जो

प्रायः किसानों की तरह के नये वस्त्र पहने था। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ रहा था और उसे देख कर ऐसा लग रहा था मानो वह डरता डरता चल रहा हो। उसके क़दम डगमगाते पड़ रहे थे। कभी कभी वह रुक जाता और पीछे से आती हुई आवाज़ें सुनने लगता। और इस रुक जाने का परिणाम यह होता कि उस लम्बी डोरी के कारण, जो उन्हें बांधे हुए थी, आगे वालों की चाल धीमी पड़ जाती।

भिखारी धीरे धीरे आगे बढ़ते रहे। दस बजते बजते वन-प्रदेश पीछे छूट गया। अब वह क्षितिज पर एक धूमिल नीली रेखा-मात्र लग रहा था। उनके चारों ओर स्टेपी था। बाद में टेलीग्राफ़ के तारों की आवाज़ सुन कर उन्हें पता चला कि सामने एक चौड़ा-सा राजमार्ग है जो धूल वाली सड़क को काटता हुआ आगे बढ़ रहा है। उस राजमार्ग पर आने पर वे दाहिनी ओर मुड़े। सहसा उन्हें पीछे से घोड़ों के खुरों की चापें तथा पक्की सड़क पर लोहे के पहियों की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ी। वे रुक गये और सड़क के एक ओर हो लिये। लेकिन फिर उनका डंडा पट

पट करता हुआ सुनाई पड़ने लगा और उनकी वह धुन भी "अन्धे को कुछ देना, दाता...." और उस सबसे छोटे अन्धे ने भी इस सुर में सुर मिलाया।

एक सिक्का वृद्ध कन्दीबा के पैरों के पास आकर खन्न से गिरा और साथ ही पहियों की आवाज़ भी रुक गयी। देने वाला शायद यह इत्मीनान कर लेना चाहता था कि जो कुछ उसने दिया है वह भिखारी को मिला या नहीं। कन्दीबा ने तुरन्त सिक्का उठा लिया और जब उसने उसे टटोला तो उसके चेहरे पर सन्तोष और प्रसन्नता के लक्षण दिखाई पड़ने लगे।

"भगवान भला करे," सड़क पर रुकी हुई गाड़ी की ओर मुंह घुमाते हुए वह बोल उठा। इक्के में एक वृद्ध सज्जन बैठे थे। उनका शरीर भारी-भरकम और अच्छा-ख़ासा था। उनके पास एक जोड़ी बैसाखी रखी थी।

गाड़ी में बैठे हुए इस वृद्ध ने सबसे कम उम्र वाले भिखारी की ओर ग़ौर से देखा। युवक भिखारी का चेहरा

सफ़ेद पड़ रहा था किन्तु उसपर शान्ति की झलक थी। अभी एक ही क्षण पहले उसकी उंगलियाँ कन्दीबा के भजन के साथ साथ अपने बाजे पर झूम रही थीं। इक्का फिर चल दिया मगर जब तक भिखारी दिखाई देते रहे बूढ़ा पीछे मुड़ मुड़ कर बराबर उन्हें देखता रहा।

शीघ्र ही पहिये की आवाज़ें दूर जा कर विलीन हो गयीं। भिखारी सड़क पर चलते रहे।

"तुम्हारी वजह से हमारी भी तक़दीर चमक उठती है, यूरी," कन्दीबा बोला, "और तुम बजाते भी अच्छा हो।"

कुछ ही क्षणों बाद चेचक के दाग़ वाला भिखारी बोल उठा—

"पचायेव जा रहे हो क्या? कोई मनौती मानी है?"

"हाँ," युवक ने धीरे से उत्तर दिया।

"तुम समझते हो तुम्हारी अन्धी आँखें देखने लगेंगी, हुंह?" भिखारी क़टुता से मुस्करा दिया।

"कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं," कन्दीबा ने विनम्रता से कहा।

"मगर मुझे ऐसे एक आदमी से भी भेंट नहीं हुई, हालाँकि मैंने भी वर्षों सड़कों पर ही खाक छानी है," चेचक के दाग़ वाले ने गम्भीरतापूर्वक कहा।

तीनों चुप हो गये और रास्ता नापते गये। सूर्य ऊपर और ऊपर उठता गया और आख़िर सड़क पर जाते हुए भिखारी एक धूमिल रेखा की भाँति दिखने लगे। और उनसे भी आगे वह इक्का अब एक बिन्दु सदृश लग रहा था। यहाँ सड़क पर आकर दो मार्ग एक साथ मिलने लगे थे। इक्के ने किएव को जाने वाली राह पकड़ी। मगर भिखारी पचायेव वाली सड़क पर ही बढ़ते रहे।

थोड़े समय बाद ताल्लुक़े में एक पत्र प्राप्त हुआ जिसमें मक्सिम ने किएव से लिखा था कि मैं और प्योत्र दोनों ही कुशल से हैं और हमारी योजना हमारी इच्छानुसार चल रही है।

और तीनों भिखारी पूर्ववत् चलते जा रहे थे, झूमते हुए, गुनगुनाते हुए, आगे आगे कन्दीबा प्रत्येक क़दम के साथ अपनी लाठी से वैसे ही पट पट करता हुआ। वह सारी सड़कें जानता था, सारी गलियाँ जानता था और मेले-ठेले या छुट्टियों के दिनों में बड़े

बड़े गाँवों में समय पर पहुँच जाता था। लोग भिखारियों का गाना-बजाना सुनने के लिए इकट्ठे हो जाते और बूढ़े कन्दीबा की फैली हुई झोली में सिक्कों की बौछार होने लगती।

युवक भिखारी का संकोच, उसकी मुखमुद्रा में झलकने वाला भय, अब नहीं रह गया। प्रत्येक क़दम जो वह सड़कों पर रखता उसके कानों में नयी-नयी आवाज़ें, नयी-नयी ध्वनियाँ बिखेर देता—उस विशाल, अज्ञात जीवन की ध्वनियाँ जो ताल्लुक़े की शान्त, सुषुप्त मर्मर-ध्वनियों से एकदम भिन्न थीं... उसकी अन्धी आँखें और खुल गयीं। उसका सीना फैल कर चौड़ा हो गया। उसकी श्रवण-शक्ति और भी प्रखर, और भी तीक्ष्ण हो गयी। धीरे धीरे वह अपने साथियों के बारे में भी जानने-समझने लगा—कन्दीबा दयावान था, कूज़्मा उदास। जब किसानों की चर्र-मर्र करती हुई बैल-गाड़ियों की क़तार की क़तार निकलती तो वह भी अपने साथियों के साथ उनके पीछे लग लेता; उन्मुक्त स्टेपी में आग जला जला कर रातें बिता देता; बाज़ारों तथा मेलों-ठेलों के कोलाहल सुनता; मानव मात्र के—न कि एकमात्र अन्धों के

ही—दुख, दर्द, दुर्भाग्य का अनुभव करके उसके हृदय में कसक उठती, पीड़ा होती; और आश्चर्य की बात यह थी कि अब उसके मानस में ये सारी नयी-नयी छापें अंकित होती जा रही थीं। अब अन्धों के गाने सुन कर उसे कंपकंपी न चढ़ती। और जैसे ही जैसे, इस हाहाकार करते हुए जीवन-सागर में उसके दिन व्यतीत होते गये, अप्राप्य को पाने की उसकी प्रबल आकांक्षा कम होती गयी, लुप्त होती गयी। उसके भावुक कान प्रत्येक नये गान और प्रत्येक नयी धुन को ग्रहण करते और जब कभी वह अपनी उंगलियाँ तारों पर रखता तो उदास-चित्त कूज़्मा के हृदय की कली कली खिल पड़ती। जैसे ही जैसे वे पचायेव की ओर पहुँचते गये उनकी छोटी सी टोली बढ़ते-बढ़ते काफ़ी बड़ी हो गयी।

* * *

अभी शरद ऋतु समाप्त न हुई थी पर सड़कों पर बर्फ़ ही बर्फ़ जमा थी। एक दिन ताल्लुक़ेदारों का युवक पुत्र सहसा घर लौट आया। उसके साथ दो अन्धे भिखारी और थे। उसे देख कर सब के सब चकित रह

गये। लोगों का कहना था कि वह व्याधि-मुक्ति के लिए देवी की प्रतिमा की आराधना के निमित्त गया था। उसने यही मनौती मानी थी।

यही सही। उसकी आँखें साफ़ रहीं किन्तु उनमें दृष्टि न आयी। हाँ, उसकी आत्मा में इस पर्यटन के परिणामस्वरूप परिवर्तन ज़रूर आ गया था और ऐसा लगता था कि एक भयावह दुःस्वप्न की छाया ताल्लुक़े पर से हमेशा के लिए हट गयी है...

मक्सिम बराबर किएव से पत्र-व्यवहार करता रहा। अन्ततः जब वह लौट कर घर आया तो आन्ना मिखाइलोव्ना ने चीख़ते हुए उसका स्वागत किया: "नहीं, मैं तुम्हें इसके लिए कभी माफ़ न करूंगी!" लेकिन उसकी आँखों से लग रहा था कि जो कुछ वह कह रही है वह सफ़ेद झूठ है।

शरदकालीन लम्बी लम्बी शामों को प्योत्र उन्हें अपने पर्यटनों की कहानियाँ सुनाता और जब गोधूलि के समय पियानो पर बैठता तो घर भर में नयी-नयी सुर-लहरियाँ नाचने लगतीं, ऐसी सुर-लहरियाँ जो इस घर में पहले कभी सुनाई नहीं दी थीं...

किएव यात्रा अगले वर्ष तक के लिए स्थगित कर दी गयी। अब सारे परिवार का ध्यान प्योत्र की भावी योजनाओं और आशाओं पर केन्द्रित हो गया।

सातवाँ अध्याय

१

उसी शरद ऋतु में एवेलिना ने अपने माता-पिता को अपना अटल निश्चय सुना दिया – वह "ताल्लुक़े के" अन्धे युवक से ही विवाह करेगी। यह सुन कर उसकी माता तो रोने-धोने लगी परन्तु उसके पिता ने प्रभु मसीह के चरणों में अपना सिर झुका दिया और आराधना कर चुकने के पश्चात् विचार करने लगे कि यह भी भाग्य का ही विधान है और हमें भगवान की इस इच्छा के प्रति नतमस्तक होना चाहिए।

दोनों का विवाह हो गया। प्योत्र के जीवन में एक नया उछाह, नयी बहार और आनन्द की एक नयी अनुभूति दिखाई देने लगी। इस आनन्द के पीछे किसी

अस्पष्ट चिन्ता की भी प्रतिच्छाया दिख रही थी। अपनी चरम प्रसन्नता के क्षणों में भी उसके अधरों पर उदास मुस्कराहट की एक रेखा दौड़ जाती और उसे कुछ ऐसा लगने लगता मानो उसे यह प्रसन्नता वास्तव में उचित अथवा स्थायी नहीं लग रही है। यह समाचार सुन कर कि वह पिता बनने वाला है उसके मुखमंडल पर आशंका की एक लहर दौड़ गयी थी।

फिर भी, इस समय वह जिस प्रकार का जीवन व्यतीत कर रहा था उससे उसे पहले जैसी बेकार की बातों पर मनन करने के लिए अवकाश ही न मिला। अब उसके दिन गम्भीर अध्ययन में और अपनी पत्नी तथा भविष्य में जन्म लेने वाले बच्चे के प्रति उत्तरोत्तर बढ़ती हुई चिन्ता में कटने लगे। ऐसे भी क्षण प्रायः आ जाते जब उसके मस्तिष्क में अन्धे भिखारियों के करुण गान और भजन चक्कर लगाने लगते। ऐसे अवसरों पर वह उस गाँव में निकल जाता जहाँ फ़्योदोर कन्दीबा और उसके चेचक के दाग़ वाले भतीजे के लिए एक नया मकान बनवा दिया गया था। उस समय कन्दीबा अपना कोब्ज़ा उठा लेता या फिर सिर्फ़ बातचीत में ही लग जाता। और इन बातों के

विषय भी उसके पास कम न होते। धीरे धीरे प्योत्र के विचार मद्धम पड़ जाते और उसकी योजनाएं और भी अधिक सफलता प्राप्त करने के लिए उसे प्रेरित करने लगतीं।

अब वह प्रकाश के प्रति कम भावुक रह गया था। और, उसे समझने के लिए उसकी आत्मा को जो प्रयास करने पड़ते थे वे भी बहुत कुछ समाप्तप्राय हो चुके थे। उसके मानस में उठने वाले द्वन्द्व अब निर्मूल हो रहे थे। उनके स्थान पर सुखद स्मृतियाँ और जीवनदायिनी आशाएं खेल रही थीं। और फिर–कौन जाने?–उसकी आत्मा में व्याप्त हो जाने वाली इस शान्ति का प्रभाव उसके मानस के क्रियाकलापों में विकास करना तथा उन निराकार, असमान छापों की सृष्टि में सहायता देना ही रहा हो जो एक ठोस स्वरूप प्राप्त करने के निमित्त उसके स्नायुमंडल तक पहुंचती थीं; क्योंकि प्रायः ऐसा होता है कि जब हम सोते हैं तो हमारा मस्तिष्क ऐसी ऐसी कल्पनाएं करता है जिन्हें वह अपने चेतन प्रयासों द्वारा अभिलषित रूप देने में असमर्थ रहता है।

२

कमरे में शान्ति थी। यह वही कमरा था जिसमें प्योत्र का जन्म हुआ था। इस शान्ति को भंग कर रहा था एक शिशु का क्रन्दन। अब बच्चा कुछ दिनों का हो चुका था और एवेलिना भी स्वस्थ होती जा रही थी। किन्तु इन दिनों प्योत्र काफ़ी उदास रहने लगा था। उसे किसी भावी अनिष्ट की आशंका हो रही थी।

डाक्टर आया। उसने बच्चे को उठाया और खिड़की के पास लिटा दिया। फिर परदे को एक ओर करते हुए उसने कमरे में प्रकाश की व्यवस्था की। धूप ने कमरे में प्रवेश किया और डाक्टर औज़ार हाथ में लिए हुए बच्चे का परीक्षण करने लगा। पास ही उदास, गम्भीर प्योत्र भी बैठा था। पिछले कई दिनों से उसकी यही दशा थी। उसे लगा कि डाक्टर के इन परीक्षणों का उसके लिए कोई अर्थ नहीं, जैसे उसे मालूम हो कि नतीजा क्या होगा, क्या होने वाला है।

"ज़रूर वह अन्धा है," उसने बार बार कहना आरम्भ किया, "अच्छा होता अगर वह पैदा ही न हुआ होता।"

युवक डाक्टर ने कोई उत्तर न दिया। वह अपने परीक्षणों में लगा रहा। और आखिर अपने औज़ारों को रखता हुआ वह धीरे धीरे किन्तु विश्वास से कहने लगा:

"पुतलियों में गति है, वे फैलती हैं, सिकुड़ती हैं। बच्चा देखता है इसमें सन्देह नहीं।"

प्योत्र को रोमांच हो आया। वह तुरन्त उठ कर खड़ा हो गया। उसने डाक्टर का फैसला सुना था, साफ़ साफ़ सुना था। किन्तु उसके मुंह पर कुछ ऐसे भाव झलक रहे थे जिनसे पता चलता था कि शायद ही उसने डाक्टर की बात समझी हो। वह खिड़की पर एक हाथ टेके खड़ा रहा। उसका चेहरा सफ़ेद और गम्भीर होता जा रहा था।

उस क्षण तक उसके हृदय में द्वन्द्व उठ रहे थे। उसे अपना अस्तित्व तक भूल-सा गया था। उसकी मानसिक स्थिति कुछ ऐसी हो गयी थी कि उसकी नस नस कोई आशाप्रद समाचार सुनने के लिए व्याकुल थी, छटपटा रही थी।

वह अपने चारों ओर के अन्धकार के प्रति जागरूक था। उसने इसे जाना-पहचाना था, अपने चारों ओर उसकी उपस्थिति का, उसकी निस्सीमता का अनुभव किया था। उससे उसका चिर परिचय था किन्तु वह अपने बच्चे को इस

अभेद्य अन्धकार सागर में ग़ोते खाने के लिए नहीं छोड़ सकता, कभी नहीं। वह इस अन्धकार और अपने बच्चे के बीच चट्टान की भाँति खड़ा था—अचल, अडिग।

यह थी उसकी मानसिक स्थिति उस समय जब डाक्टर उसके लाड़ले की परीक्षा कर रहा था। बेशक, इन सारे महीनों प्योत्र बड़ा व्यग्र, बड़ा चिन्तित रहा था किन्तु आशा की एक किरण उसके हृदय को प्रफुल्लित कर रही थी। इस समय उसकी रग रग में तनाव की स्थिति थी और ऐसा लगता था जैसे कोई पीड़ादायक भय शीघ्र ही उसकी नसों को तोड़-मरोड़ कर रख देगा। उसकी आशा न जाने हृदय के किस कोने में अपना मुंह छिपाये पड़ी थी कि सहसा "बच्चा देखता है!" ये शब्द उसके कानों में पड़े और फिर सब कुछ बदल गया। भय समाप्त हो गया। आशाओं ने विश्वास का रूप ले लिया। ऐसा लगा कि धूमिल पड़ती हुई आशा में नव जीवन का संचार हुआ और उसने उसके हृदय पर अपना अधिकार जमा लिया। डाक्टर के उन थोड़े से शब्दों ने उसके सम्पूर्ण अन्तस् को जगमगा दिया था। वह थरथराने लगा वैसे ही जैसे कसा हुआ तार उंगलियों के स्पर्श से थरथरा उठता है, झनझना उठता है।

श्रौर तब, इस अनुभूति के पश्चात्, प्योत्र के उन नेत्रों के आगे नये-नये दृश्य, नयी-नयी कल्पनाएं साकार होने लगीं, जिनकी दृष्टि उसके पैदा होने से पहले ही लुप्त हो चुकी थी। यह प्रकाश था अथवा ध्वनि वह न कह सका। शायद ध्वनि जो सजीव हो गयी थी, ध्वनि जिसने कोई रूप धारण कर लिया था, ध्वनि जो प्रकाश की भाँति, किरणों की तरह, प्रवाहित हो रही थी, ध्वनि जो एक छोर से दूसरे छोर तक फैले हुए गगन की भाँति प्रकाशित हो उठती थी, ध्वनि जो सूर्य के लाल लाल गोले की तरह बड़ी शान से उतरती थी, ध्वनि जो स्टेपी की हरियाली से आच्छादित धरती के गान की भाँति थिरकती थी, ध्वनि जो उद्यान के स्वप्नलोक में विचरते हुए बीच-वृक्षों की भाँति झूमती थी।

यह पहले क्षण की अनुभूति थी; और सच बात यह थी कि उस क्षण उसके मानस पर पड़ी हुई छापों ने ही उसकी स्मृति में एक स्थायी स्वरूप ग्रहण किया था। उसके पश्चात् जो कुछ हुआ वह विस्मृति के गर्भ में समा गया। लेकिन बाद में उसने निश्चयपूर्वक कहा था कि उन परवर्ती क्षणों में उसकी आँखें खुल गयी थीं, वह देख रहा था।

उसकी आत्मा में जीवन के सच्चे ज्ञान का प्रकाश है। उसने दूसरों के सुख-दुख को समझना सीखा है, उसने देखना सीखा है। और अब वह भाग्यवानों को उनकी याद दिला सकेगा जो कम भाग्यशाली हैं, अभागे हैं..."

बूढ़े सिपाही का माथा और झुक गया। आख़िर उसने भी इस दुनिया में अपना काम पूरा कर लिया। उसका जीवन व्यर्थ नहीं गया। संगीत इसी सन्देश का वाहक था। यह वह संगीत था जिसमें अद्भुत क्षमता थी, आत्मा पर अधिकार जमा लेने की अद्वितीय शक्ति थी, जो हाल में गूंज रहा था, जन जन पर मंडरा रहा था।

. . . .

अन्धे संगीतज्ञ का यह पहला प्रयास था।

१८८७-१८९८

पाठकों से

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है:

२१, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।